इक्कीसवीं शती की हिंदी कहानियों में किन्नर विमर्श

(Ikkeesveem shati Kee Hindi Kahaniyom Mein Kinnar Vimarsh)

कालिकट विश्वविद्यालय की

डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबंध

Thesis

Submitted to the University of Calicut

for the Degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY IN HINDI

निर्देशक :

डॉ.फातिमा जीम. एम

आर.असोसिएट प्रोफेसर

हिन्दी विभाग

कालिकट विश्वविद्यालय

प्रस्तुतकर्ता :

सनोज पी.

शोध छात्र

हिन्दी विभाग

कालिकट विश्वविद्यालय

हिन्दी विभाग

कालिकट विश्वविद्यालय

2022

Dr. FATIMA JEEM. M
ASSOCIATE PROFESSOR
DEPARTMENT OF HINDI
UNIVERSITY OF CALICUT

CERTIFICATE

This is to certify that the thesis entitled **“IKKEESVEEM SHATI KEE HINDI KAHANIYOM MEIN KINNAR VIMARSH ”** is a bonafide record of research work carried out by **SANOJ P. R.,** under my supervision and that no part of this thesis has hitherto been submitted for a Research Degree in any University.

C.U. Campus
Date:

Dr. FATIMA JEEM. M
(Supervising Teacher)

DECLARATION

I, **SANOJ. P. R.**, do hereby declare that this thesis entitled **"IKKEESVEEM SHATI KEE HINDI KAHANIYOM MEIN KINNAR VIMARSH"** is a record of bonafide research carried out by me and this has not previously formed the basis for the award of any Degree, Diploma, Associateship, Fellowship other similiar Title or Recognition. This research work was supervised by **Dr. FATIMA JEEM. M**, Associate Professor, Department of Hindi, University of Calicut.

C.U. Campus
Date:

SANOJ P. R.
Research Scholar
Department of Hindi
University of Calicut

अनुक्रमणिका

	पृ. सं.
प्राक्कथन	**i – ix**
पहला अध्याय	**1-46**
हिंदी साहित्य में विमर्श के विविध आयाम	
1.1. विमर्श : अर्थ एवं परिभाषा	
1.2. स्त्री विमर्श	
1.3. दलित विमर्श	
1.4. आदिवासी विमर्श	
1.5. विकलांग विमर्श	
1.6. किसान विमर्श	
1.7. पर्यावरण विमर्श	
1.8. अल्पसंख्यक विमर्श	
1.9. श्रमिक विमर्श	
1.10. वृद्ध विमर्श	
1.11. सांप्रदायिक विमर्श	
1.12. मीडिया विमर्श	
1.13. प्रवासी विमर्श	
1.14. शैक्षिक विमर्श	
1.15. पारिवारिक विमर्श	
1.16. किन्नर विमर्श	
1.16.1. किन्नर विमर्श का स्वरुप	

निष्कर्ष

दूसरा अध्याय 47-119

किन्नर : अर्थ , आशय एवं अवधारणा

2.1. लिंग और सेक्स (Sex and Gender)

2.1.1. लैंगिकता (Sexuality)

2.1.2. एल.जी.बी.टी.क्यू.ए.इ

2.1.2.1. लेस्बियन

2.1.2.2. गे

2.1.2.3. बिसेक्सुँल

2.1.2.4. ट्रांसजेंडर

2.1.2.5. क्यूर

2.1.2.6. इंटरसेक्स

2.2. किन्नर शब्द , अर्थ एवं अवधारणा

2.2.1. ऐतिहासिक परिस्थितियाँ और किन्नर समाज

2.2.2. मुगलकाल और किन्नर समाज

2.2.3. ब्रिटिश कालीन किन्नर समाज

2.2.4. पाश्चात्य देशों में किन्नर – इतिहास

2.3. केरल में किन्नरों की स्थिति

2.3.1. आम जनता और केरल के किन्नर समुदाय

2.3.2. केरल की सरकारी नीतियाँ और किन्नर

2.3.3. केरल साहित्य के क्षेत्र में किन्नर

2.4. किन्नर समुदाय की संस्कृति

2.4.1. किन्नर समाज के रीति- रिवाज़ और परंपरा

2.4.2. किन्नर समाज में नाते – रिश्ते की गुरु शिष्य परंपरा

2.5. किन्नर समाज की मुख्य समस्याएँ

2.5.1. पारिवारिक समस्याएँ

2.5.2. आर्थिक समस्याएँ

2.5.3. सामाजिक समस्याएँ

2.5.4. धार्मिक समस्याएँ

2.5.5. शिक्षा की समस्याएँ

2.5.6. आवास की समस्याएँ

2.5.7. व्यक्तिव और अस्तित्व का संकट

2.6. उच्च न्यायलय का फैसला और किन्नर समाज का उत्थान

2.6.1. किन्नर समाज और कानूनी पहलू

2.6.2. किन्नर समाज और राजनैतिक स्थिति

2.7. चिकित्सा और किन्नर समाज

2.8. शिक्षा और किन्नर

2.9. पुलिस और किन्नर

2.10. भारतीय न्यायपालिका और किन्नर समाज

2.10.1. किन्नर समाज की संवैधानिक अवस्था

2.10.2. द राईट ऑफ़ ट्रांसजेंडर पर्सन्स बिल 2014 और नालसा जजमेंट

2.10.3. किन्नर – प्रोटेक्शन ऑफ़ राइट्स बिल 2016

निष्कर्ष

अध्याय तीन **121-224**

हिंदी साहित्य में किन्नर समाज

3.1 हिंदी साहित्य में किन्नर विमर्श

3.2. हिंदी उपन्यास साहित्य में किन्नर जीवन

3.2.1 यमदीप - नीरजा माधव

3.2.2 मैं भी औरत हूँ - अनुसूया त्यागी

3.2.3 तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ
3.2.4 किन्नर कथा - महेंद्र भीष्म
3.2.5 गुलाम मंडी - निर्मला भुराडिया
3.2.6 मैं पायल - महेंद्र भीष्म
3.2.7 पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा – चित्रा मुद्‌गल
3.2.8 जिंदगी 50-50 - भगवंत अनमोल
3.2.9 अस्तित्व - गिरजा भारती
3.2.10 दरमियाना - सुभाष अखिल
3.2.11 अस्तित्व की तलाश में सिमरन - डॉ. मोनिका देवी
3.3 हिंदी नाटक साहित्य में किन्नर जीवन
3.3.1 आग के सात फेरे - महेश दत्तानी
3.3.2 हरारत - हरीश बी. शर्मा
3.4 हिंदी आत्मकथा साहित्य में किन्नर जीवन
3.4.1 मैं हिजड़ा ... मैं लक्ष्मी – लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी
3.4.2 पुरूष तन में फँसा मेरा नारी-मन
3.5 हिंदी कविता साहित्य में किन्नर जीवन
निष्कर्ष
चौथा अध्याय **225 – 406**
इक्कीसवीं शती की हिंदी कहानियों में किन्नर विमर्श
4.1. भारतीय समाज और भारत का नया समाजशास्त्र
4.2. हिंदी कहानी : विकास यात्रा , आंदोलन , रचनाकार एवं इक्कीसवीं सदी की हिंदी कहानी
4.2.1. स्वतंत्रतापूर्व हिंदी कहानी
4.2.2. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानी
4.2.2.1. नई कहानी आन्दोलन

4.2.2.2. अकहानी आन्दोलन

4.2.2.3. सचेतन कहानी आन्दोलन

4.2.2.4. सहज कहानी आन्दोलन

4.2.2.5. समानांतर कहानी आन्दोलन

4.2.2.6. सक्रिय कहानी आन्दोलन

4.2.2.7. जनवादी कहानी आन्दोलन

4.2.3. इक्कीसवीं सदी की हिंदी कहानियाँ

4.3. इक्कीसवीं सदी की कहानियों में किन्नर विमर्श

4.4. किन्नर समाज और हिंदी कहानियाँ

4.5. किन्नर केन्द्रित कहानियों की समस्या एवं उनका विश्लेषण

4.5.1. किन्नर का असफल प्रेम

4.5.2. शैक्षिक क्षेत्रों में किन्नरों का प्रयास

4.5.3. आर्थिक संकटों से जूझता किन्नर समुदाय

4.5.4. धार्मिक एवं सांस्कृतिक ढकोसलों में उलझता किन्नर समुदाय

4.5.5. पुलिस से पीड़ित किन्नर समाज

4.5.6. पारिवारिक रिश्ते एवं किन्नर समाज

4.5.7. बधियाकरण एवं किन्नर समाज

4.5.8. जिस्मफरोशी और किन्नर समाज

4.5.9. नकली और असली किन्नर का चित्रण

4.5.10. किन्नर लोग एवं मतदान

4.5.11. किन्नर नाम की समस्या

4.5.12. किन्नर के साथ बलात्कार

4.5.13. किन्नरों में जाति , धर्म की भावना

4.5.14. किन्नर कहानी में मित्रता

4.5.15. किन्नर की उपलब्धियाँ
4.5.16. किन्नर से जुड़ी अंधविश्वास
4.6. किन्नरों से सम्बंधित अन्य कहानियाँ
पाँचवां अध्याय **407-428**
उपसंहार
सन्दर्भ ग्रंथ सूची **429- 435**

प्राक्कथन

प्राक्कथन

समय का कालचक्र कभी ठहरता नहीं बल्कि अपनी मंद चाल से गतिशील रहता है l जिस प्रकार सभ्यता , समाज , विचार धारा , सुख – दुःख कभी भी एक समान नहीं रहते हैं ठीक उसी प्रकार मानव का शारीरिक एवं मानसिक संतुलन भी बनता , बिगड़ता रहता है l सभ्य व्यक्ति सदैव बदलाव की ओर सोचता है और मानवता के लिए प्रतिबद्ध रहता है जिसके लिए वह समयानुसार निर्णय लेता है और अपनी लगन और जिजीविषा से उन निर्णयों को मानवता के लिए प्रयोग करने का कार्य करता है l कभी – कभी इस कार्य में उसको सफलता मिलती है , कभी नहीं l लेकिन उसके निर्णय सही होने के उपरांत एक समय बाद परिणाम भी सही आना प्रारंभ हो जाते हैं l इस पूरी परिघटना में मानवता उसके मर्म में रहती है l मानवता के उद्धार के लिए मुख्य विचारशील , मननशील और नव – निर्माण के लिए प्रयत्नशील रहता है l

पिछली दो शताब्दी विश्व में अनेक परिवर्तन लाने वाली रही है जिसमें मानव की विचार पद्दति पूरी तरह से बदल गयी l दुनिया के अनेक देशों में मानव सभ्यता , संस्कृति , ज्ञान , विज्ञान के साथ – साथ अनेक विचारधाराओं ने अपना स्थान बनाने का प्रयत्न किया है l मानना सबका भिन्न – भिन्न अवश्य है लेकिन अंततः मानवता के पैरोकार सभी दृष्टिगत होते हैं l अनिवार्य रूप से मानव ने अपने जीवन स्तर तथा आवश्यकताओं को पहचाना और उनकी प्राप्ति तथा सुलभता का प्रयत्न किया जिस

कारण मानववाद की विचार धारा का प्रचार – प्रसार अत्यंत गति से हुआ तथा उसी तीव्रता से उसका विकास भी संभव हुआ। अंततोगत्वा कम से कम ऐसे आचार – विचार और जीवन पद्दति को स्वीकार किया गया जो हर मनुष्य के लिए बिना भेदभाव के आवश्यक भी है।

वर्तमान युग में औद्योगिक प्रगति के साथ पूँजीवादी और साम्यवादी दोनों प्रकार की विचार धारा प्रकाश में आई और दोनों ने ही मानव की स्थिति और उसकी समस्याओं के बारे में अपने – अपने मानस मन से विश्लेषण किया। मानवतावाद तो गाँधी जी भी तभी मानते थे जब पेट भरा हो , इंसान अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए लायक हो , अन्यथा इस प्रकार की बात करना व्यर्थ ही होगा। भूखे मनुष्य को उपदेश नहीं भाता ।उसे अपना हित चाहिए। भारतीय कर्मवादी दर्शन और पाश्चात्य भौतिकवादी दर्शन भी यही सहर्ष स्वीकार करते हैं।

मानववाद के इस दृष्टिकोण से मनुष्य ने अपनी संभावनाओं सृजनात्मक क्षमताओं और मेधा को भौतिक जगत के कल्याण के लिए प्रयोग किया। उसका लक्ष्य केवल रहस्यों की खोज ही नहीं रह गयी अपितु वह भावुकता और अंधानुकरण को त्यागकर तर्क के द्वार पर आकर खड़ा हो गया और उसने महसूस किया कि मनुष्य का अन्वेषण किसी विराट सत्ता से नहीं हुआ है और न ही वह उसके प्रति समर्पित होने के लिए बाध्य है। आधुनिक साहित्य में भी इस बात पर बल दिया गया कि सामान्य जन ही सब मूल्यों का निर्माता और निर्णायक है इस प्रकार मानव वाद कोई एक सम्प्रदाय नहीं है। वह चिंतन और कर्म को प्रेरित करने वाली विचारधारा है।

साहित्य जगत में वर्त्तमान युग विमर्शों का है I इस समय अनेक विमर्श साहित्य में अपना स्थान बना रहे हैं I स्नातक से ही मैं विमर्शों के सन्दर्भ में सोचता रहता था कि अंततः इन विमर्शों के गर्भ में क्या है ? जब मुझे साहित्य का ध्येय स्पष्ट हुआ तो विमर्श भी समझ में आ गया I साहित्य का मकसद केवल मानव और मानवतावाद का पुरज़ोर समर्थन करना है I चाहे वह जातीय हो , नस्लीय हो , लैंगिक हो या फिर कोई अन्य कारण हो I विमर्श जिसको अंग्रेज़ी में डिस्कोर्स कहते है वह उत्पन्न ही पीड़ा से होता है I जब किसी व्यक्ति को पीड़ा होती है तो वह दर्द से कराहता है I उसके कराहने के मर्म को एक साहित्यकार अधिक सूक्ष्म दृष्टि से देखता है I यथार्थ घटना को कल्पना के माध्यम से आम पाठक तक उस पीड़ा को पहुंचाने का कार्य करता है जिससे वह पीड़ा राष्ट्रीय स्तर पर आती है I यदि उस पर सरकार ध्यान नहीं देती है तो वह आन्दोलन के रूप में मुखर होती है I क्योंकि जो सामान्य जन की बात संसद में नहीं होगी तो वह सड़क पर होना लाजमी है I क्योंकि यह लोकतंत्र देश की एक पहचान भी है I

विमर्शों के दौर में अनेक विमर्श सामने आए जैसे दलित – विमर्श , स्त्री – विमर्श , आदिवासी – विमर्श , वृद्ध – विमर्श , किन्नर – विमर्श , जीव – विमर्श , किसान – विमर्श , एवं विकलांग – विमर्श आदि I इन सभी विमर्शों में एक उभयनिष्ठ मुद्दा है , जिसमें अधिकारों की माँग है I अपने अधिकारों के लिए व्यक्ति संघर्षरत है और साहित्य , सड़क तथा संसद में अपने अधिकारों के लिए लड़ रहा है I समाज के

अनेक जागरूक व्यक्ति , कलाकार , चित्रकार , पत्रकार एवं रचनाकार जैसे अति – बोद्धिक व्यक्ति भी ऐसे दबे – कुचले , उपेक्षित , तिरस्कृत और बहिष्कृत व्यक्तियों के लिए समाज में अपनी कला के माध्यम से जागरूकता फैलाने का प्रयत्न कर रहे हैं जिससे उन बहिष्कृत समाज को मानवीय अधिकार मिल सके , उनके संवेदनाओं की रक्षा हो सके। उनको भी इंसान की तरह जीने का अधिकार आम नागरिकों की तरह मिल सके।

मैंने अपना शोध का विषय किन्नर इसलिए चुना कि ऐसे व्यक्तियों से संवेदनाएँ तब जागरूक हुईं जब मैंने ट्रेन पर उनको बधाई माँगते देखा क्योंकि उनका हाव – भाव , श्रृंगार एवं पहनावा स्त्रियों वाला होता है और आवाज़ में भारीपन इस बात का द्योतक है कि स्त्री आत्मा में पुरुष मन निवास करता है या फिर इसका उल्टा समझ लीजिए।

स्नातकोत्तर करने के दौरान भी मुझे किन्नर – विमर्श और किन्नरों के बारे में जानने का अवसर मिला। फिर मैंने निर्णय लिया कि मुझे इनपर शोध करना चाहिए जिससे इस बहिष्कृत समाज के अधिकारों के लिए मैं कलम से कुछ योगदान कर सकूँ। इस संबंध में जब मैं आदरणीय डॉ. फातिमा जीम जी के पास गया और इस अछूते विषय के बारे में बताया तो वह बहुत प्रफुल्लित हुई और उन्होंने मुझसे कहा दो – तीन आप भी सोच – समझ लो और मैं भी। शोध – निर्देशिका जी ने काफी गहन चिंतन , मनन करने के बाद मुझे किन्नर कहानियों पर शोध के लिए विषय दिया जो वास्तव में सबसे अनूठा और विशिष्ट है। मैंने अपने शोध – निर्देशिका के इस विषय

के साथ सम्पूर्ण न्याय करने का प्रयत्न किया है l इस शोध कार्य के लिए मैं अपनी शोध – निर्देशिका का हृद्रय तल से आभार व्यक्त करता हूँ और इनका इस कर्तव्यनिष्ठ परोपकार के लिए सदा ऋणी रहना चाहूँगा l शोध – निर्देशिका ने मेरे शोध के दरमियान जो ऊँच – नीच भरा संघर्ष का समय आया उस समय अपना भावनात्मक सहयोग प्रदान किया जिसको शब्दों को लिख पाना मेरे लिए संभव नहीं है l

इस शोध विषय को मैंने सुविधा की दृष्टि से पांच अध्यायों में विभक्त किया है l

प्रथम अध्याय – विमर्श के विविध आयाम

द्धितीय अध्याय – किन्नर : अर्थ , आशय एवं अवधारणा

तृतीय अध्याय – हिंदी साहित्य में किन्नर विमर्श एक परिचय

चतुर्थ अध्याय – इक्कीसवीं शती की हिंदी कहानियों में किन्नर – विमर्श

पंचम अध्याय – उपसंहार

प्रथम अध्याय – 'विमर्श के विविध आयाम' के अंतर्गत विमर्श : अर्थ एवं परिभाषा , विमर्श के सन्दर्भ में विभिन्न विद्वानों का मत , विभिन्न विमर्शों का संक्षिप्त इतिहास , उनके लेखक , विमर्शों का स्वरूप जैसे अनेक विषयों के माध्यम से विमर्श के विविध आयामों पर चर्चा की जाएगी तथा अंत में निष्कर्ष लिखा जाएगा l

द्वितीय अध्याय – 'किन्नर : अर्थ , आशय एवं अवधारणा' पर आधारित होगा जिसमें समाज में लैंगिकता , सेक्स , जेंडर और लैंगिकता का अंतर , लैंगिकता समाज की अवधारणा मुख्य रूप से किन्नर के सन्दर्भ में , किन्नर शब्द का अर्थ एवं आशय , किन्नर शब्द का अभद्र भाषा के रूप में प्रयोग , किन्नर :रूप एवं प्रकार , किन्नर : विसंगतियाँ , विकृतियाँ एवं परिणाम , ऐतिहासिक परिस्थितियाँ और किन्नर समाज , मुगलकाल और किन्नर समाज , ब्रिटिशकाल और किन्नर समाज , पाश्चात्य देशों में किन्नर इतिहास , केरल में किन्नरों की स्थिति , आम जनता और केरल का किन्नर समुदाय , केरल साहित्य और किन्नर , किन्नर समुदाय की संस्कृति , किन्नर समाज के रीति – रिवाज़ और परंपरा , किन्नर समाज में नाते – रिश्ते तथा गुरु – शिष्य परंपरा का महत्व , किन्नर समाज की मुख्य समस्याएँ , किन्नरों के प्रति लिंग – विभेद , किन्नर समाज की संवैधानिक स्थिति , किन्नरों को भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकार : समाज में बदलाव , राजनैतिक परिस्थितियों पर बहस तथा अंततः निष्कर्ष के साथ शोध कार्य करना पड़ेगा । इस अध्याय के अंतर्गत किन्नर समाज की समस्त समस्याओं तथा निराकरण की ओर भी ध्यान इंगित किया जाएगा ।

तृतीय अध्याय के अंतर्गत 'हिंदी साहित्य में किन्नर – विमर्श एक परिचय' के साथ प्रारंभ होगा जिस अध्याय में हिंदी साहित्य , विभिन्न विमर्शों के साथ – साथ किन्नर विमर्श की स्थिति , हिंदी की अनेक विधाओं के अंतर्गत कथा साहित्य तथा कविताओं में किन्नर – विमर्श के प्रश्नों को उठाया गया । उन सभी उपन्यासों , कहानियों और कविताओं का तथ्यपरक विश्लेषण किया जाएगा तथा किन्नरों की समस्याओं पर विस्तृत चर्चा मानवता के आधार पर होगी ।

चतुर्थ अध्याय 'इक्कीसवीं शती की हिंदी कहानियों में किन्नर – विमर्श' इस मुख्य अध्याय के अंतर्गत भारतीय समाज और भारत का नया समाज शास्त्र , इक्कीसवीं शती की कहानियों में किन्नर – विमर्श , इक्कीसवीं शती की हिंदी कहानियां , किन्नर समाज और हिंदी कहानियां , किन्नर केन्द्रित कहानियों का अध्ययन , किन्नर कहानियों में चित्रित विविध समस्याएं , आर्थिक संकट और किन्नर समाज , राजनीति की रणनीति और किन्नरों का यथार्थ , धार्मिक अंधता में उलझता किन्नर समुदाय , शैक्षिक क्षेत्रों में किन्नरों का प्रयास , अंततः कहानीकारों की दृष्टि में किन्नर समुदाय जैसे अनेक विषयों पर तार्किक चर्चा होगी और किन्नर समाज की अनेक समस्याओं का विश्लेषण किया जाएगा I

अंतिम पंचम अध्याय उपसंहार के रूप में रहेगा जिसमें सभी अध्यायों का निष्कर्ष लिखा जाएगा तथा समाज के लिए शोध की क्या प्राथमिकता है ? उसको बताने का प्रयास किया जाएगा I इस शोध की प्रासंगिकता वास्तव में किन्नर समाज में बदलाव और समानता के अधिकार के लिए हो ऐसी मेरी अभिलाषा रहेगी I मानव – मन जब शून्य अवस्था समान पाता है और इसी समान भावना के साथ समानता , एकता और अखंडता का उद्घोष हो ऐसी मैं कामना भी करता हूँ I

इस शोध कार्य के लिए मेरा जिन भी महान आत्माओं , बुद्धिजीवियों एवं जागरूक समान चेतना के पहरुओं ने समर्थन किया है I उन सबका हृद्रय तल से आभार प्रकट करता हूँ I इस विमर्श के विषय में वाग्मय एवं अनुसंधान पत्रिका के सम्पादक डॉ. एम. फ़िरोज़ खान एवं डॉ. शगुफ्ता नियाज़ का भी हृदय तल से आभार प्रकट करता हूँ जिनके अथक प्रयास से मुझे कहानियों का संकलन और उन कहानियों पर

आलोचनात्मक एवं समीक्षात्मक आलेख मिल सके जिनको पढ़कर मैंने अपने विषय से न्याय करने का भरपूर प्रयास किया। किन्नर विमर्श पर सबसे अधिक सामग्री प्रकाशित करने के लिये विकास प्रकाशन का भी धन्यवाद जिन्होंने समय – समय पर मुझे पुस्तकें भी उपलब्ध कराई।

इस शोध कार्य में मेरी माता और दादी जी का अपार स्नेह मिला तथा कठिन समय में भावुकता के साथ मुझे आशीर्वाद दिया। उनके इस कार्य के लिए मैं उनका श्रेणी रहना चाहूँगा।

किसी भी अच्छे शोध कार्य को करने के लिए मित्रों का धन्यवाद तो ज्ञापित नहीं किया जा सकता है लेकिन उनका नाम बताने में कोई गुरेज भी नहीं करना चाहिए। मैं अपने मित्र सुलेमान , अनस , हॉस्टल के अन्य मित्र , तथा शिलू , निशि और विजी का समय – समय उत्साहवर्धन करना मेरे लिए एक टॉनिक का कार्य करता है जिससे यह शोध कार्य संपन्न करने में सहायता मिली।

इस शोध कार्य में अनेक पुस्तकालयों और उनके अध्यक्षों का भी भरपूर समर्थन मिला उनका भी ह्रदय तल से धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ।

शोध कार्य में समर्थन करने वाले विभागाध्यक्ष , अध्यापकगण तथा विभाग में प्रशासनिक कार्य करने वाले सभी महानुभावों का आभार जिन्होंने मेरे शोध कार्य में परोक्ष – अपरोक्ष रूप से अपना श्रम दिया है।

त्रुटियाँ मानव – जीवन का अभिन्न अंग है। अतः उस शोध प्रबंध में यदि कुछ न्यानाताएँ रह गयी हो उसके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ। मुझे पूरा विश्वास है कि प्रस्तुत कार्य शोध की दिशा में कुछ महत्वपूर्ण कडिया अवश्य जोड़ेगा। जिससे मानवता को प्रगढ़ता मिलेगी।

सनोज पी.आर

अध्याय - एक

हिन्दी साहित्य में विमर्श के विविध आयाम

अध्याय - एक

हिन्दी साहित्य में विमर्श के विविध आयाम

1.1 विमर्शः अर्थ एवं परिभाषा

'विमर्श' शब्द अत्यंत व्यापक एवं विस्तृत है। विमर्श का मूल उद्देश्य है कि वह पाठक के मन - मस्तिष्क पर प्रश्न उत्पन्न करें जिससे वह समाज का मानवतावादी दृष्टिकोण से अनुशीलन कर सके । साहित्य के संदर्भ में विमर्श संकल्पना आधुनिक काल की देन है। आधुनिक साहित्य में विमर्श की अवधारणा 1960 के बाद हुई है। यह एक प्रकार की आलोचनात्मक प्रक्रिया है जिसकी उत्पत्ति 'मृश्' धातु में 'वि' उपसर्ग तथा 'ध´' प्रत्यय लगाकर हुई है। अतः विमर्श शब्द का व्युत्पत्ति परक अर्थ होता है - चिंतन, आलोचना करना, सोचना, समझना आदि। अंग्रेजी में इस विमर्श को 'डिस्कोर्स' कहते है।

'मानक हिन्दी कोश' में विमर्श का अर्थ - विचारण, आलोचना, व्याकुलता, क्षोभ और उद्धेग है।[1]

आक्सफोर्ड अंग्रेजी कोश में 'डिस्कोर्स' शब्द का अर्थ - भाषण या बातचीत है।[2]

शब्दकोश के आधार पर विमर्श का अर्थ निकलता है – ''मन में होने वाली अहंभाव की स्फूर्ति, विचार या विवेचना, भली-भाँति आशय व्यक्त करना, विचारपूर्वक निर्णय करना, तर्क-वितर्क, समीक्षा, परखने का काम, सलाह, परीक्षा, जाँच, परामर्श, आपस में मिलकर सोचना या किसी से मिलकर यह जानना कि क्या ठीक है अथवा क्या होना चाहिए, सलाह, मंत्रणा, मंतव्य।''[3]

विमर्श के सन्दर्भ में विभिन्न विद्वानों ने अपने मत प्रकट किए हैं :

1. डॉ. भोलानाथ तिवारी :-इनके अनुसार " तबादला ए ख्याल , परामर्श , राय -बात , विचार विनिमय , विचार -विमर्श , सोच -विचार आदि।[4]

2. डॉ. हरदेव बाहरी : इनके द्वारा सम्पादित English-Hindi Dictionary में consult शब्द को विमर्श का पर्याय मानते हुए उसकी परिभाषा उन्होंने इस प्रकार की है - " किसी आदमी या किताब से संपर्क करना , विचार विनिमय करना "[5] आदि से है।

3. नामवर सिंह ने विमर्श के संदर्भ में डिस्कोर्स का अनुवाद करते हुए निम्नलिखित परिभाषा दी है -" विमर्श का मतलब किसी एक वस्तु

के बारे में लोगों से बातचीत करने के तरीके या सोचने की पद्यति से है , यह तरीका मिलजुलकर लोगों की सामान्य धारणा को बनाता है”6

उपर्युक्त कथन के अनुसार हम कह सकते हैं कि आलोचना, विवेचन, चिंतन, गुणदोष की परिचर्चा आदि सभी शब्द विमर्श के ही समानार्थी हैं। सभी कोशों में विमर्श का अर्थ किसी न किसी प्रकार से बातचीत या विचार विवेचन करना है। लेकिन वहीं साहित्यिक परिधि में इसका अर्थ होता है- किसी गंभीर विषय का गहन चिंतन-विश्लेषण और अंत में तर्क-संगत निर्णय पर पहुँचने का प्रयास जिससे विमर्श का ध्येय स्पष्ट हो सके ।

‘विमर्श’ किसी भी विषय को लेकर हो सकता है। विमर्श केन्द्रित लेखन लगभग 1960 के बाद ही देखने को मिलता है। जन आंदोलन , शिक्षा, सामाजिक प्रबोधन और पश्चिमी साहचर्य ने लोक चेतना एवं लोक जागरण के साथ-साथ समकालीन साहित्यकारों को भी प्रभावित किया है। इसके फलस्वरूप विभिन्न विषयों, प्रश्नों तथा मसलों पर संवेदना के साथ लेखन हुआ और उनके विमर्श मूलक विचारों की अभिव्यक्ति हुई।

स्पष्टतः कहा जा सकता है कि विमर्श साहित्य के माध्यम से किया गया सोच-विचार है, चिंतन-मनन है, तर्क का सहारा लेकर विषय को सिर्फ एक

दृष्टिकोण से न देखकर, उसे समग्रता से सोच समझने की कोशिश है। जिससे प्रतीत होता है कि विमर्श का फलक असीम है और अनेक बिन्दुओं पर मानवतावादी दृष्टिकोण से चर्चा परिचर्चा हो सकती है। हाशिए एवं उपेक्षित वर्ग , धर्म , जाति एवं लिंग के प्रति जागरूकता का कार्य करके समानता के रूप को पथ प्रदर्शक किया जा सकता है।

विमर्श तो साहित्य व समाज में निरंतर प्रासंगिक रहा है परंतु वर्तमान युग के साहित्य में 'विमर्श' शब्द अधिक मात्रा में प्रयुक्त हो रहा है। प्रमुख दलित साहित्यकार श्योजराज बेचैन विमर्श की प्रक्रिया को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि - "विमर्श एकानापी क्रिया नहीं है। किसी भी विमर्श के लिए दो या दो से अधिक पक्षों, विचारों या सामाजिक श्रेणियों का होना आवश्यक है, परंतु यह कतई आवश्यक नहीं है कि वे विचार पक्ष परस्पर एक-दूसरे के विरोधी या समर्थक ही हो।"[7]

इसी विचार दृष्टि से विचार धाराओं से साहित्य में विभिन्न विमर्श जन्म लेते हैं। आज दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, किन्नर विमर्श, आदिवासी विमर्श, दिव्यांग विमर्श, किसान विमर्श, अल्पसंख्यक विमर्श और परिस्थितिक विमर्श जैसी संकल्पनाएँ काफी प्रचलित हुई दिखाई देती है। वस्तुतः विमर्श को केन्द्र में रखकर साहित्यिक पहल के उद्घाटन का श्रेय

विख्यात हिन्दी कथाकार एवं हंस पत्रिका के संपादक राजेन्द्र यादव को देना होगा। प्रसिद्ध कथामासिक हंस के द्वारा संपादक के नाते राजेन्द्र यादव ने विभिन्न विमर्शों की न केवल शुरुआत की है बल्कि उनके गंभीर चिंतन का वातावरण बनाया है।

1.2. स्त्री विमर्श

जैसे कि विदित है कि विमर्श का अर्थ ही है हाशिए एवं उपेक्षित वर्ग को समानता के अधिकार के लिए संघर्ष करना। इसी सन्दर्भ में स्त्री विमर्श की चर्चा हम करते हैं। स्त्री विमर्श समाज में स्त्रियों के प्रति उपेक्षित दृष्टि को हटाकर समानता के अधिकारों की माँग है। स्त्रियों को सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में दोयम दर्जे का समझा जाता है। उन्हें तो केवल बच्चे पैदा करने वाली मशीन, घर की नौकरानी या फिर मनोरंजन की वस्तु मात्र मानकर सदियों से होते आए शोषण और दमन के प्रति स्त्री चेतना ने ही स्त्री विमर्श को जन्म दिया है।

स्त्री विमर्श और कुछ नहीं, अपनी अस्मिता की पहचान, 'स्व' की चिंता, अस्तित्व बोध और अधिकारों को जतलाने और बतलाने का विचार चिंतन है।

स्त्री विमर्श का प्रारंभ पश्चिम से है। 1949 में सिमोन द बुआर ने The second sex नामक पुस्तक की रचना की। इस ग्रंथ के केन्द्र में स्त्री और उससे संबंधित बहुआयामी संदर्भों की परिचर्चा की गई है।

पाश्चात्य देशों में स्त्री-विमर्श का संघर्ष अधिक सुदृढ़ है। उसका प्रभाव भारतीय साहित्य व हिन्दी साहित्य में भी पड़ा। इसका कारण यह था कि भारत उपनिवेशी राष्ट्र था। अब भी उसकी संस्कृति और नीतियों का प्रभाव बना रहता है। उससे प्रभावित होकर हिन्दी में 1960 के बाद स्त्री विमर्श की चर्चा साहित्य जगत में अपना स्थान बनाने में सफल रही।

सुधा अरोड़ा के शब्दों में – "स्त्री विमर्श को 'विमेन लिव' यानी स्त्री मुक्ति का पर्याय मान लिया गया है। मुक्ति में भी स्त्री के लिए 'देह की मुक्ति' को सर्वोपरि माना जाता रहा है"।[8]

स्त्री विमर्श अपनी अस्मिता और अस्तित्व बोध के प्रति उसकी सजगता का परिणाम है। इसके साथ ही साथ सुधारवादी संस्थाओं के महत्वपूर्ण योगदान ने भी स्त्रियों के संघर्ष को बल प्रदान किया है। उद्धार के लिए प्रमुख कारण बने। फलतः बाल विवाह, सती प्रथा, आदि कुरीतियों के विरूद्ध आवाज़ उठायी गयी। राजाराम मोहन रॉय , गाँधीजी, ईश्वरचंद्र विद्यासागर जैसे नेताओं का श्रम इस संदर्भ में उल्लेखनीय है।

स्त्रियों के आंदोलन से साहित्य भी प्रभावित हुआ। हिन्दी साहित्य में नारी विमर्श की जड़ें हम अत्यंत प्राचीन काल से पाते हैं। यह दृष्टि वास्तव में समकालीन संदर्भ में भी स्त्री विमर्श का नया रूप धारण करने में सहायक बन गयी है। पुरुष की एकाधिकार शाही के वातावरण से स्त्री को बाहर लाने का प्रयास ही स्त्री विमर्श है।

चित्रा मुद्गल, प्रभा खेतान, मन्नु भंडारी, सूर्यबाला, मृदुला गर्ग, प्रभा खेतान, नासिरा शर्मा , नमिता सिंह ,अलका सरावगी, मैत्रेयी पुष्पा जैसी लेखिकाओं ने अपनी रचनाओं के माध्यम से स्त्री विमर्श को नए धरातल पर ले जाने का प्रयत्न किया है।

इन सब कुप्रथाओं , दमन एवं समानता के अधिकार के लिए हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श सामने आया और स्त्रियों को अपने अस्तित्व का बोध कराने के लिए स्त्री विमर्श की अहम भूमिका है। समाज में स्त्रियों के प्रति समानता का भाव ही स्त्री विमर्श है जिसके संबंध में अनेक रचनाकारों ने अपने विचार प्रस्तुत किए हैं –

प्रो.रोहिणी अग्रवाल के अनुसार " स्त्री को केंद्र में रखकर समाज , संस्कृति , परंपरा एवं इतिहास का पुनरीक्षण करते हुए स्त्री की स्थिति पर मानवीय दृस्टि से विचार करने की अनवरत प्रक्रिया"[७] को स्त्री विमर्श कहते है।

मृणाल पांडेय के अनुसार " नारीवाद पुरुषों का नहीं उनकी मानवीयता घटाने वाले उस छंदम मुखौटे का प्रतिकार करता रहा है , जो मर्दानगी के नाम पर गढ़ा गया है और जिसके पीछे झूठी अहम्मन्यता और उत्पीड़क प्रवृत्ति के अलावा कुछ नहीं है"।[10]

भाषा की दृष्टि यदि स्त्री विमर्श को देखा जाए तो रोचक तथ्य सामने आते हैं। स्त्री-भाषा पुरुष की भाषा से भिन्न होती है। स्त्री अपने अनुभव जगत से शब्द चयन करती है। जहाँ पुरुष-भाषा में वर्चस्व, रौब और अधिकार की भावनाओं को देखा जा सकता है वहीं स्त्री-भाषा में सखी भाव अर्थात मैं से हम की यात्रा को देखा जा सकता है। सामान्य स्त्री के भाषिक आचरण में आप पुरुष की रुचि-अरुचि का ध्यान रखने की प्रवृत्ति, परिवार की शुभेच्छा की प्रवृत्ति, स्त्री सुलभ कलाओं में रुचि की प्रवृत्ति, घर-परिवार और संस्कारों में रुचि की प्रवृत्ति, घरेलू चिंताओं की प्रवृत्ति को देखा जा सकता है। इसी प्रकार एक शिक्षित स्त्री के भाषिक आचरण में पूर्ण आत्मविश्वास, निडरता, जागरूकता, स्थितियों के विश्लेषण की क्षमता आदि प्रवृत्तियों को देखा जा सकता है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि स्त्री विमर्श से अभिप्राय है स्त्री में आत्मनिर्णय की प्रवृत्ति होना जिससे वह उस स्त्री संहिता का अतिक्रमण

कर सकती है जो उसकी अस्मिता एवं अस्तित्व के लिए घातक है तथा सार्वजनिक जीवन में अपनी भूमिका निभा सकती है।

1.3. दलित विमर्श

हिन्दी साहित्य जगत् में विगत कुछ वर्षों में दलित साहित्य को लेकर काफी जोर-शोर से विचार-विमर्श चल रहा है। दलितों के जीवन को केन्द्र में रखकर लेखन कार्य स्वतंत्रता से पहले से ही प्रारंभ हुआ है । स्वातंत्र्योत्तर काल में इस लेखन में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई।

'दलित' शब्द की परिभाषा में केवल अछूत शब्द का उल्लेख करने से काम नहीं चलेगा। आदिवासी, भूमिहीन, खेत, मज़दूर, शृमिक, कष्टधारी जनता सभी के सभी 'दलित' शब्द की परिभाषा में आते हैं।

दलित साहित्य में दलित जीवन की सच्चाई और स्वानुभूति का मार्मिक चित्रण हम महसूस कर सकते हैं। दलित साहित्य स्वयं एक चिंतन है, अपने - अपने कुछ सिद्धांत है। इन सिद्धांतों के कारण ही वह प्रस्थापित साहित्य की श्रेणी में आता है। समाज तथा संघर्ष की भूमिका में प्रतीत होता है। वर्तमान रचनाकारों के लेखन में दलित साहित्य केन्द्र में है।

हरदेव बाहरी के अनुसार दलित शब्द का अर्थ है – " कुचला हुआ , दबाया हुआ , नष्ट किया हुआ है" ।[11]

कंवल भारती के अनुसार - " वास्तव में दलित वही हो सकता है , जो सामाजिक और आर्थिक दोनों दृस्टियों से दीन -हीन है। इसके भिन्न अर्थों में 'दलित'शब्द को लेना 'दलित ' शब्द का ही विकृतीकरण करना है , जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है। जिसे कठोर और गंदे कर्म करने के लिए बाध्य किया गया है। जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतंत्र व्यवसाय करने से मना किया गया है और जिसपर अछूतों ने सामाजिक निर्योग्यताओं की संहिता लागू की , वही और सिर्फ वही दलित हैं" ।[12]

दलित साहित्य उपन्यास, कहानी, आत्मकथा एवं कविता आदि साहित्य की अनेक विधाओं में दृष्टिगोचर होता है। डॉ. एन. सिंह ने कहा है- "हिन्दी में दलित साहित्य की बाकायदा शुरूआत बीसवीं शताब्दी के आठवें दशक में हुई। इसकी प्रेरणा डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा की ही महात्मा ज्योतिबा फूले का संघर्ष, मार्क्स की क्रांति दृष्टि तथा मराठी का दलित साहित्य भी रहा"[13] ।

सितंबर 1914 अंक की मासिक पत्रिका 'सरस्वती' में प्रकाशित 'हीरोडोम' की 'अछूत की शिकायत' कविता में दलितों की त्रासदी का चित्रण किया गया है । 'अम्बेडकर' महाकाव्य के रचयिता श्री बाबूलाल 'सुमन' की दलित कवियों में एक अलग पहचान है। दलित साहित्यकारों में

कंवल भारती , ओम प्रकाश वाल्मीकि , सूरजपाल चौहान , जयप्रकाश कर्दम , अनीता भारती ,सुशीला टाकभौरे जैसे प्रतिष्ठित रचनाकार दलितों के मुद्दों को अपनी रचनाओं में उठा रहे हैं। एक स्वतंत्र पहचान है। इस सन्दर्भ में महात्मा ज्योतिबा फूले की परिभाषा उल्लेखनीय हैं –"गुलामी की यातना को जो जानता है , वही जानता है और जो जानता है , वही पूरा सच कह पाता है , सचमुच राख ही जानती है जलने का अनुभव और कोई नहीं "[14]

हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श को लेकर कई पुस्तकें भी प्रकाशित हो चुकी हैं - जैसे डॉ. एन. सिंह द्वारा संपादित पुस्तक - 'दलित-साहित्य:चिंतन के विविध आयाम', ओमप्रकाश वाल्मीकि की 'दलित साहित्य का समाजशास्त्र', उमाकांत बिरादर का 'हिन्दी साहित्य दलित विमर्श' आदि।

स्पष्ट है कि जिस चिंतनधारा से भारतीय समाज में समता, स्वतंत्रता और बंधुता आ सकती है वह विचारधारा ही दलित विमर्श की प्रेरणा है।

1.4. आदिवासी विमर्श

भारत एक विशाल देश है। अनेक प्रकार के लोग यहाँ रहते हैं । इन लोगों के अनेक धर्म हैं , संप्रदाय हैं । इन सभी के मिश्रण से भारत की

संस्कृति विकसित हुई। इसी में आदिवासी समाज भी सम्मिलित है। स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, वृद्ध विमर्श आदि विमर्शों के समान समकालीन हिन्दी साहित्य का एक सशक्त विमर्श है - आदिवासी विमर्श। आदिवासी समाज का आंदोलन एवं संघर्ष जड , ज़मीन एवं संस्कृति को बचाने का है जिसके कारण वह सत्ता से भी टकराते रहता है और अपने अधिकारों के लिए प्रयासरत है।

किसी देश के मूल निवासी को आदिवासी कहा जाता है। जंगल, पहाड़ी प्रदेश, तथा दुर्गम भागों में रहने के कारण आदिवासी समाज आज भी पिछड़ा हुआ प्रतीत होता है।

आदिवासी साहित्य में भाषा, संस्कृति, संवेदना संस्कार आदि विमर्श का रूप ग्रहण कर चुके हैं। पर्यावरण के प्रति गहरी चिंता ने समाज का ध्यान आदिवासी लोगों की ओर आकृष्ट किया। आदिवासी समाज के बारे में किया गया विचार-चिंतन ही आदिवासी विमर्श है।

यू. एन. ओ. में आदिवासियों की परिभाषा इस प्रकार दी गई है - "आदिवासी राष्ट्र का पास्परिक संबंध और व्यवहार करने के बारे में पूर्वानुभाव पर आधारित निश्चित नियमों का पालन करनेवाले पारस्परिक समूह आदिवासी जाति है।"[15]

आदिवासी विमर्श पर कुछ महत्त्वपूर्ण विद्वानों के विचार -

१. माया बोरसे के अनुसार " आदिवासी समाज ऐसा समाज है जिसके नाम में ही उसकी पहचान छिपी हुई है , आदिवासी शब्द के लिए ' मूलनिवासी 'शब्द का प्रयोग किया जाता है अर्थात आदिवासी समाज इस भूमि का मूल निवासी है और वहीं इस भूमि का उतराधिकारी भी है”।[16]

२. क्रोबर के अनुसार " आदिम जनजातियाँ ऐसे लोगों का एक समूह होता है , जिनकी अपनी एक सामान्य संस्कृति होती है। "[17]

३. डॉ.मजूमदार के अनुसार - " आदिवासी जनजाति परिवारों तथा पारिवारिक वर्गों का एक समूह जो सामान्य नाम धारण किए हुए है , इसके सभी सदस्य एक ही भूमि पर निवास करते हैं और एक भाषा - भाषी , विवाह की प्रदाओं तथा कारोबार संबधी एक ही नियम का पालन करते हैं। वे आदान - प्रदान संबधी पारस्परिक व्यवहार को विकसित करते हैं। साधारणतः आदिवासी जनजाति अंतर्विवाह सिद्धांत का समर्थन करती है और उसके सभी सदस्य अपनी ही जनजाति की रचना करते हैं। प्रत्येक गोत्र के सदस्यों का

परस्पर रक्त-सम्बन्ध जुड़ा होता है। अन्यथा उनका वंश परम्परागत सरदार होता है। इस तरह आदिवासी जनजाति को एक राजनीतिक संघ भी माना जाता है। "[18]

आदिवासी लोग अपनी एक विशिष्ट भाषा, संस्कृति, सामाजिक व आर्थिक व्यवस्था और परंपरा, परिश्रमिता और साहसिकता को लेकर जीवन चलाने वाला समूह हैं। भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजाति के नाम से आदिवासी लोगों को संबोधित किया गया है। अनुच्छेद 366(25) में अनुसूचित जनजाति की व्यवस्था की गई है।

देश के मूलनिवासी होकर भी औपनिवेशिक युग के पूर्व आदिवासी लोगों की अपनी स्वतंत्रता थी। प्रकृति पर उनका पूर्ण अधिकार था। लेकिन आज उनका शोषण एवं अत्याचार बढ़ने लगे क्योंकि पूंजीपतियों की कुदृष्टि उनकी जड़ , ज़मीन पर पड़ गयी है, जंगलों में विद्यमान इमारती लकड़ी , खनिज एवं अनेक प्रकार की वस्तुएँ मिलती है जिससे पूंजीपतियों को लाभ होता है।

आदिवासी विमर्श तभी पूर्ण होगा जब वे समाज की मुख्यधारा से जुड़ जायेंगे। समाज में उन्हें शिक्षा के समान अवसर दिए जाएंगे , सरकार द्वारा उनको सभी सुविधाएँ मुहैया कराई जाए जिससे वे आधुनिक

जानकारी एवं सुविधाएँ प्राप्त कर सकें। यह एक ऐसा विमर्श है जिसमें इस संप्रदाय की संस्कृति, परंपरा, शोषण, रूढ़ियाँ सब कुछ का चित्रण हुआ है।

1.5. विकलांग विमर्श

विकलांग या दिव्यांग समाज का एक हिस्सा है। साहित्य में विकलांगता की अवधारणा नई नहीं है। सामान्य अर्थों में विगलांगता ऐसी शारीरिक एवं मानिसक अक्षमता है जिसके कारण कोई व्यक्ति सामान्य इंसानों की तरह कार्य करने में सक्षम नहीं होता है। तकनीकी दृष्टि से विकलांग एवं विगलांगता व्यापक सन्दर्भवाले शब्द हैं , जिनकी एक से अधिक परिवर्तनशील परिभाषाएँ हैं । भारत में ऐसे व्यक्ति को दिव्यांग की श्रेणी में रखा गया है जो चिकिल्सा अधिकारी द्वारा प्रभावित चालीस प्रतिशत से कम विगलांगता न हो। यह निर्विवाद है कि विकलांगता का जिक्र प्राचीन ग्रंथों से हो रहा है। सन् 1995 में पारित विकलांग कानून के प्रथम अध्याय में विकलांग या दिव्यांग की यह परिभाषा दी गई है - "दृष्टिहीन व्यक्ति, श्रवणबधित व्यक्ति, अस्थि विकलांग व्यक्ति, मानसिक रूप से अविकसित व्यक्ति आदि"।[19]

कहा जा सकता है कि समाज के सभी वर्गों में विकलांग लोग दिखाई देते हैं। इस संदर्भ में पं. फकीरचन्द कौशिक का कथन है कि "मनुष्य कब

तक अपाहिजों को अपनी दया पर आश्रित रख सकता है? वह धर्म के नाम पर शोषण है। जहाँ पंगु में अपनी शेष स्वस्थ हालत के प्रति भी पंगु भावना उत्पन्न कर उसे पूर्णतः पंगु बना दिया जाए।"[20]

विकलांग विमर्श के संदर्भ में कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएँ ;

प्रो. दामोदर :- कुदरत की दी हुई शारीरिक , मानसिक , दुर्बलता , न्यूनता या विरूपता विकलांगता है। यह विकलांगता दुःख की जननी है। लेकिन इस सत्य को न स्वीकारते हुए उससे दूर भागना या डरना कायरता है। शरीर भले ही विकलांग हो , मन विकलांग नहीं होना चाहिए , क्योंकि मन तो ऊर्जा का केंद्र है। जो व्यक्ति , संस्था या समाज विकलांगों के अस्तित्व की रक्षा व उनकी उन्नति के लिए काम करता है। वह मानवता का सच्चा मित्र है , उसका प्रहरी है"।[21]

२. डॉ. हेनरी की सलट : "बीमारी और युद्ध आदि कारणों से विकलांग लोगों की संख्या विश्व जनसख्या के पच्चीस प्रतिशत है"।[22]

साहित्य में प्राचीनकाल से ही विकलांग चरित्रों को प्रस्तुत किया गया है। लेकिन इन चरित्रों की ओर किसी का ध्यान नहीं गया। हिन्दी कथा साहित्य में प्रेमचन्द युग में प्रेमचन्द के 'रंगभूमि' का नायक सूरदास,

‘पंचपरमेश्वर’ का कन्हाई, रेणु की कहानी ‘ठेस’ का ‘सिरचन’, अमृतलाल नागर के ‘खंजन नयन’ का ‘सूरदास’ आदि अनेक चरित्रों ने संघर्षशील विकलांग चरित्र को उद्घाटित किया है।

वास्तव अभी तक विकलांगता पर सुचारू रूप से किसी ने विचार-विमर्श नहीं किया है। साहित्य में यह विषय अभी तक हाशिये पर ही है। इस पर बुद्धिजीवियों ने सही से सोचना प्रारंभ नहीं किया। फिर भी कुछ पत्र - पत्रिकाओं में लेखन शुरू हो चुका है।

वर्तमान समय में आवश्यक है कि विकलांगों को समानता का अधिकार दिया जाय और जिस प्रकार विकलांग समाज से अपेक्षाएँ रखते हैं, उसी प्रकार समाज भी विकलांगों से कुछ अपेक्षा रखता है। साहित्य के माध्यम से हमें विकलांग विमर्श से संबंधित तथ्यों को उजागर करने की आवश्यकता है।

1.6. किसान विमर्श

भारतीय अर्थव्यवस्था का प्रमुख स्तंभ कृषि और किसान है। किसानों की उन्नति से ही देश का विकास संभव है। हिन्दी साहित्य के अनेक साहित्यकारों ने विभिन्न विधाओं के माध्यम से किसान विमर्श को अपनी रचनाओं में स्थान दिया है।

डॉ. महावीर प्रसाद द्विवेदी के अनुसार " जहां तक ज़मीन की उर्वरा या उत्पादक शक्ति की सीमा का अतिक्रमण नहीं होता वहीं तक अधिक खर्च करने से लाभ हो सकता है। आगे नहीं। उत्पादकता की सीमा पर पहुंच जाने पर खर्च बढ़ाने से लाभ के बदले उलटा हानि होती है। अंततः फल यह होगा कि पैदावार बढ़ाने की कोशिश में , अधिक पूँजी लगाने और मेहनत करने पर भी , फिर भी आदमी हिस्सा काम पड़ेगा। धीरे - धीरे यह हिस्सा और कम होता जाएगा। यहाँ तक कि दो - चार वर्ष पैदावार की अपेक्षा खर्च बढ़ जाएगा और उन पंद्रह आदमियों का गुज़ारा मुश्किल से होगा उन्हें ज़मीन छोड़कर भागना पडेगा "[23]

किसान केवल उन्हीं को नहीं कहा जा सकता जिसके पास भूमि है अपितु वे लोग भी कृषक के अंतर्गत आते हैं जिनके पास भूमि नहीं है, लेकिन वे मज़दूरी में खेती करते हैं। किसान को अपनी जीविका चलाने के लिए विभिन्न प्रकार के आंदोलनों से गुज़रना पड़ता है जिनमें स्वतंत्रता से पूर्व मैसूर का किसान विद्रोह, संथाल विद्रोह, नील विद्रोह तथा तेभागा आंदोलन इत्यादि सम्मिलित हैं। स्वतंत्रता के बाद भी किसानों ने जमींदारों के शोषण के विरूद्ध मिलकर आवाज़ उठाई है। वर्तमान समय में केन्द्र सरकार ने कृषि बिल 2020 पारित करते समय भी हमारे किसानों को कई

तरह की कठिनाईयों एवं संघर्षों का सामना करने के लिए मजबूर कर दिया है।

हिन्दी साहित्य में किसान विमर्श का प्रारंभ कबीरदास, तुलसीदास और सूरदास की रचनाओं में भक्तिकाल में देखने को मिलता है। घाघ और भड्डुरी की कहावतों में किसान जीवन संबंधी उपयोगी दोहे हैं जो खेती-किसानी संबंधित महत्त्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराते हैं। उसके बाद गोपाल शरण सिंह, प्रतापनारायण मिश्र , भारतेंदु हरिश्चंद्र, रामविलास शर्मा, श्रीधर पाठक और सुमित्रानंदन पंत आदि की रचनाओं में किसान विमर्श की झलक साफ-साफ दिखाई देती है।

हिन्दी साहित्य में किसान जीवन का यथार्थ चित्रण मुंशी प्रेमचंद के 'गोदान' उपन्यास में देखा जा सकता है तथा इससे पहले शिवपूजन सहाय के 'देहाती दुनिया' में भी किसान जीवन के संघर्ष दृष्टिगोचर होते हैं।

मुंशी प्रेमचंद ने किसान जीवन को आधार बनाकर सोलह कहानियाँ लिखी हैं। इन कहानियों के माध्यम से प्रेमचंद ने किसानों के अंधविश्वास, रूढिवादिता ,जमींदारों के शोषण एवं किसान परिवार के टूटन जैसी विभिन्न समस्याओं को उजागर किया है।

किसान विमर्श के माध्यम से लेखकों ने किसान की पीड़ा को प्रबुद्ध – वर्ग एवं जनसामान्य तक पहुँचाने की कोशिश की है I उनका उद्देश यह है कि हमारे देश के किसानों की समस्याओं को बाकी लोग समझ सकें और उनके समाधान के लिए कंधे से कंधा मिलाकर संघर्ष करने में अपना योगदान दे सकें। वास्तव में अगर किसान जीवित रहेगा , वह कृषि करेगा तो देश को अन्न मिलेगा I साथ ही साथ अर्थव्यवस्था में भी सुधार आ जाएगा I किसान मर गया तो देश की कामकाजी जनसख्या के पास धन तो होगा लेकिन उनको अनाज नहीं मिलेगा I इस सोचनीय विषय पर प्रबुद्ध वर्ग को चिंतन करना चाहिए।

1.7. पर्यावरण विमर्श

मनुष्य और प्रकृति में अटूट रिश्ता है। लेकिन आज उसमें परिवर्तन आया है। उन परिवर्तनों को बड़ी सार्थकता के साथ समकालीन साहित्य में रेखांकित किया जा रहा है। वेबस्टर शब्द कोश के अनुसार " पर्यावरण से आशय उन घेरे रहनेवाली परिस्थितियों , प्रभावों और शक्तियों से है , जो सामाजिक व सांस्कृतिक दशाओं के समूह हमारा व्यक्ति और समुदाय के जीवन को प्रभावित करती है”I[24]

मनुष्य अपनी आवश्यकताओं से अधिक शोषण प्रकृति पर कर रहा है जोकि प्रकृति के विनाश का प्रमुख कारण बन जाता है। हिन्दी साहित्य

में 'पर्यावरण विमर्श' प्राकृतिक संतुलन के बिगड़ने की चिंता का परिणाम है। औद्योगीकरण एवं नगरीकरण ने प्रकृति को दिन-प्रतिदिन प्रदूषित कर रहे हैं जो दुनिया में आनेवाली पीढ़ियों के लिए दयनीय स्थिति उत्पन्न करेंगें , जिससे भूस्खलन , मृदा अपरदन जैसी भयानक बीमारियों से जनता को पीड़ा होगी।

जयशंकर प्रसाद ने अपने काव्य 'कामायनी' में प्रकृति के कोमल व भयानक दोनों ही रूपों का वर्णन किया है। इसके साथ निराला, अज्ञेय, सियारामशरण गुप्त, नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल आदि कवियों ने भी अपनी रचनाओं के माध्यम से पर्यावरण विमर्श की बात कही है।

पर्यावरण का प्रभाव प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से मनुष्य पर पड़ता है। इसका सुन्दर चित्रण करने वाला उपन्यास हैं वीरेन्द्र जैन का 'डूब और पार'। इन दो उपन्यासों में हमारी प्रमुख नदियों में बाँध बनाने के बाद जो त्रासदी उस प्रदेश की जनता के जीवन में आ पड़ी है उसको व्यक्त करने का प्रयास है। इस प्रकार की त्रासदी वास्तव में मनुष्य द्वारा पोषित है।

इस प्रकार हिन्दी साहित्य के अनेक साहित्यकारों ने पर्यावरण विमर्श पर चर्चा की है। इससे वर्तमान समाज में उत्पन्न पर्यावरण की त्रासद स्थितियों को व्यक्त करते हुए जन-मानस को अवगत कराया है। पर्यावरण विमर्श को सिर्फ किताबों तक सीमित नहीं रहना चाहिए। बल्कि इस पर

खुले मंच से जनता को भी अवगत कराना चाहिए। यदि पर्यावरण स्वस्थ नहीं होगा तो मानव - जीवन दुर्लभ हो जायेगा। साहित्य जगत में इस विषय पर चर्चा हो रही है। मुझे उम्मीद ही नहीं वरन् पूर्ण विश्वास है कि आने वाले समय में पर्यावरण पर विस्तृत चर्चा होगी और मानव जीवन सरल होगा।

1.8. अल्पसंख्यक विमर्श

इसके अंतर्गत वे लोग आते हैं जो किसी देश में संख्या की दृष्टि से कम होते हैं , चाहे वह धार्मिक हो या फिर जातिगत। वस्तुतः जो संख्या में कम हो या अल्प हो वही अल्पसंख्यक है। अल्पसंख्यक संकल्पना उस समुदाय के लिए प्रयुक्त होती है , जिसकी संख्या कम होती है। यहाँ ईसाई, मुस्लिम, सिख, परसियन तथा सिंधी इत्यादि समाज भी अल्पसंख्यक विमर्श के अंतर्गत आते हैं । लेकिन ये समुदाय स्वतंत्र रूप से साहित्य का केन्द्रीय विषय नहीं बन पाए हैं। मुहम्मद इमाम के शब्दों में -" अल्पसख्यक लोगों को मुख्यधारा से जोड़ने के लिए शिक्षा एक महत्वपूर्ण साधन है"।[25]

भारत में मुस्लिम समाज की हालत आज दयनीय है क्योंकि न ही वह शिक्षा की दृष्टि से अच्छा है और न ही आर्थिक। विभाजित भारत में मुसलमानों की दशा और उनके संघर्ष का उल्लेख मुस्लिम उपन्यासकारों ने बेबाकी से किया है। भारत में विभाजन के पश्चात हुए दंगों को राही माज़ूम

रजा ने अपनी रचना में स्थान दिया है। उन्होंने हिन्दू मुस्लिम संबधों व अल्पसख्यकों की स्थिति को अपनी शक्ति द्वारा उजागर किया है। राही मासूम रजा का 'आधा गाँव', शानी का 'काला जल', नासिरा शर्मा का 'जिन्दा मुहावरे', मंजूर एहतेशाम का 'सूखा बरगद' तथा अब्दुल बिस्मिल्लाह का 'झीनी-झीनी बीनी चदरिया' एवं मेराज अहमद का 'आधी दुनिया ' आदि से मुस्लिम विमर्श को समझा जा सकता है। मुस्लिमों की चिंताजनक स्थिति का विश्लेषण उपरोक्त साहित्य से ही प्राप्त हो जाएगा।

1.9. श्रमिक विमर्श

जीविका के लिए मज़दूरी या श्रम करने वाला व्यक्ति श्रमिक कहलाता है। अंग्रेजी के संइवनत शब्द का हिन्दी रूपांतर है - 'श्रमिक'। जो मानसिक एवं शारीरिक परिश्रम करता है, उसके प्रतिदान में वह रोटी पाता है उसको श्रमिक कहा जाता है। डॉ. ध्रुव कुमार त्रिपाठी ने श्रमिक , कामगार एवं मजदूर को इस प्रकार परिभाषित किया है-

श्रमिक : " स्वयं एवं परिवार के भरण पोषण के लिए काम करने वाले व्यक्ति को श्रमिक कहते हैं।"

कामगार : "किसी भी वस्तु के उत्पादन में संगठित रूप से लगे हुए व्यक्तियों के समूह को हम कामगार की श्रेणी में रख सकते हैं।”

मजदूर:-“जैसा कि नाम से स्पष्ट है विवशता एवं मजबूरी में किसी कार्य को करने वाला व्यक्ति मजदूर कहलाता है।”[26] अतः ऐसे व्यक्ति के संदर्भ में किया जाने वाला चिंतन ही ‘ श्रमिक विमर्श’ कहलाता है।

श्रमिकों या मजदूरों का जीवन-चित्रण प्रेमचंद के आदर्शोन्मुख यथार्थवादी साहित्य में हम देख सकते हैं। श्रीलाल शुक्ल का ‘राग दरबारी’, अमृतलाल नागर का ‘नाच्यौ बहुत गोपाल’ आदि श्रमिक-विमर्श पर आधारित रचनाएं हैं ।

निम्नवर्गीय समाज के अधिकांश लोग श्रमजीवी हैं। श्रमिकों से सम्बंधित अतः सर्वाधिक श्रमिक वर्ग इसी समाज से आते हैं। श्रमिकों के श्रम का शोषण हमारे यहाँ कोई नई बात नहीं है। श्रम एक व्यक्ति करता है और उसका फल दूसरा आदमी पाता है। इस तरह के मेहनतकश, व मजदूर वर्ग से संबंधित गहन विवेचन तथा विचार चिंतन ही ‘श्रमिक विमर्श’ है।

1.10. वृद्ध विमर्श

मनुष्य जीवन में अनेक अवस्थायें पायी जाती हैं जैसे शैशवावस्था , बाल्यावस्था , किशोरावस्था और प्रोढ़ावस्था आदि । इन जीवन के रंगों

में एक व्यक्ति को सम्मान मिलता है क्योंकि क्रमशः तीन अवस्थाओं में माता – पिता का प्यार मिलता हैं और प्रोढ़ावस्था में व्यक्ति लगभग आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ जाता है , तथा वह शारीरिक दृष्टि से बलिष्ठ , ऊर्जा में परिपक्व होता है लेकिन जब जीवन का अंतिम पढ़ाव आरभ होता है तो उसका शरीर दुर्बल एवं शिथिल हो जाता है , बाल पाक कर सफेद हो जाते हैं , दांत गिर जाते हैं और पुनः व्यक्ति बाल्यावस्था में प्रवेश कर जाता है जहाँ उसको अपने बच्चों का सहारा चाहिए। क्योंकि आदत के अनुसार बाल्यावस्था और वृद्धावस्था में अधिक अंतर नहीं होता लेकिन वृद्धावस्था में वह व्यक्ति अपने पुत्र – पुत्रियों और नाती – पोते पर निर्भर रहता है।

वर्तमान समय में भारत में मेट्रोपोलिटन सिटिज़ में वृद्ध आश्रम खुल चुके हैं अनेक वृद्ध इस समय अपने जीवन के आखिरी क्षण व्यतीत कर रहे हैं जो भारत जैसे सांस्कृतिक एवं सांस्कारिक देश के लिए खतरा है। इसी कड़ी में भारत में हिंदी साहित्य के सृजन कर्ताओं ने वृद्ध को केंद्र बनाकर रचना की है। और वृद्धों के प्रश्नों को मजबूरी से उठाया है।

वृद्ध – विमर्श को केंद्र में रखकर कथा – सम्राट प्रेमचंद , भीष्म साहनी जैसे उल्लेखनीय रचनाकारों ने अपनी रचनाधर्मिता के माध्यम से

वृद्ध – विमर्श की शुरुआत कर दी थी। वर्त्तमान समय में कई पत्रिकाओं ने इस विमर्श पर अंक निकाले हैं जिसमें वाङ्मय और अनुसंधान पत्रिका अग्रणीय हैं। नरेंद्र कोहली के 'महासमर' उपन्यास में वृद्ध जीवन की समस्याओं को उजागर किया गया है। साहित्य के क्षेत्र में साहित्यकारों ने अपने लेखन को माध्यम बनाकर वृद्धों के जीवन में फैले अन्धकार और निराशा पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। इसी समस्या को प्रकाश डालते हुए उषा प्रियंवदा ने भी 'वापसी' कहानी में गजाधर बाबु को माध्यम बनाकर सेवानिवृत्ति के बाद व्यक्ति के कटु अनुभवों को चित्रित करने का प्रयास किया है। वृद्ध विमर्श साहित्य में प्रारम्भ से ही शामिल रहा है आज भी इसका प्रयोग साहित्य में हो रहा है। वृद्ध विमर्श का साहित्य में प्रयोग वृद्धों के लिए सम्मान का मार्ग है तथा युवा पीढ़ी के लिए उनकी सफलता का मार्ग है। वृद्धों के अनुभवों व संस्कारों से युवावर्ग के जीवन मूल्यों में हो रहे विघटन को रोका जा सकता है।

1.11. साम्प्रदायिक विमर्श

महान कथाकार सम्राट प्रेमचंद ने कहा था कि साम्प्रदायिकता हमेशा संस्कृति का चोला ओढ़कर आती है , यह कथन बहुत हद तक सत्य प्रतीत होता है। क्योंकि देश की वर्त्तमान राजनैतिक स्थिति ऐसी हो चुकी है।

साम्प्रदायिकता अधिकतर जाति – भेद , लिंग – भेद , धर्म – भेद के कारण ही होती है। अर्थात समानता न होने के कारण यह कुंठा भयावह रूप ले लेती है और मनुष्य आपस में लड़ना प्रारंभ कर देते हैं जिसका परिणाम बहुत दुखदायी होता है। बहुत से व्यक्ति इसमें अपने जीवन को समाप्त करते हैं।

वर्त्तमान स्थिति में जितने भी साम्प्रदायिक दंगे होते हैं वह कुत्सिग राजनीती का ही परिणाम है जिसमें किसी राजनेता की महत्वाकांक्षा जुड़ी होती है। हिंदी साहित्य में इस विषय को आधार बनाकर हर विधा में साहित्य को सृजित किया गया है। भारत में साम्प्रदायिकता की शुरुआत आज़ादी के बाद ही चुकी थी क्योंकि देश विभाजन की त्रासदी से झुलस गया था और देश के हालत नाजुक स्थिति में पहुँच चुके थे और साम्प्रदायिकता की नींव पड़ गयी। वर्त्तमान स्थिति में भारत में किसी भी छोटे मुद्दे पर नफरत फैली जाती है और साम्प्रदायिकता का रूप लेती है। विभाजन को लेकर साहित्य में अनेक उपन्यास रचे गए हैं जैसे 'तमस' , 'कितने पकिस्तान' आदि । भारत में साम्प्रदायिकता का दूसरा माहौल 1992 की बाबरी विध्वंस से प्रारंभ हुआ। इस विषय को केंद्र बनाकर अनेक

उपन्यास , कहानियाँ तथा कविताएं भी रची गयी हैं । साम्प्रदायिकता पर लिखे गए प्रमुख उपन्यास हैं लज्जा (तसलीमा नसरीन 1992) , वे वहाँ कैद है (प्रियंवद 1994) , हमारा शहर उस बरस (जीतांजलि श्री 1998) तथा उन्माद (भगवान सिंह 1999) आदि ।

वर्त्तमान समय में साम्प्रदायिकता पर अनेक उपन्यासों , कहानियों , कविताओं एवं फ्रीलांसिंग की रचना हो रही है । कई पत्रिकाएँ अपने विशेषांक भी निकाल रही हैं और मानवता को समझाने का प्रयास कर रही हैं ।

1.12. मीडिया – विमर्श

यह विमर्श देश के चौथे स्तभ से सम्बंधित है जिसमें मीडिया , पत्रकारिता को जन सरोकार के मुद्दो से जोड़ने का प्रयास किया जाता है । साधारणतया यह माना जाता है कि विमर्श तब ही प्रारंभ होता है जब कोई संस्थान अपना मूल कर्म को छोड़कर देश को नफरत की आग में धकेलने का प्रयास प्रारंभ कर दे । वर्तमान समय में मीडिया पर राजनीति का भारी दबाब है जिसके कारण कोई भी पत्रकार सत्ता के पक्ष में बोलता हुआ दिखता है बल्कि मीडिया भी दो धड़ों में बांट चुका है जिसमें एक धड़ा सत्ता के निकट है तो दूसरा सत्ता के विरुद्ध और जनसरोकार की पत्रकारिता कर रहा है । वर्त्तमान समय में पत्रकारिता के संबंध में देश की स्थिति

भयावह हो चुकी है। पत्रकार स्वयं परोक्ष या अपरोक्ष रूप से सत्ता की गुलामी में पड़ जाते हैं जबकि पत्रकारिता का असली कार्य तीनों विधायिकाओं पर दृष्टि रखने का था , खोजी पत्रकारिता करके देश को नए मुद्दों से अवगत कराना था। जिससे किसी भी प्रकार की धांधली न हो सके, नागरिकों के अधिकार सुरक्षित रह सके। मीडिया के कार्यों को बहुत निकटता से देखकर भी कुछ नहीं हो पाता है क्योंकि वह सही मायनों में मीडिया के कुकर्मों की समीक्षा नहीं कर पाता है। इस प्रकार सत्ता की चापलूसी में ही अपना समय खराब करता है और समाज के प्रश्न जस की तस रह जाते हैं। मीडिया – विमर्श के रूप में कई पत्रिकाएँ कार्य कर रही हैं लेकिन बदलाव कोई दृष्टिगत नहीं हो रहा है।

1.13. प्रवासी विमर्श

प्रवास की घटना वर्तमान में आम हो चुकी है। प्राचीन काल में प्रवास करना किसी भी आवश्यकता के कारण होता था। लेकिन ग्लोबलाइजेशन के दौर में प्रवास आम हो चुका है। अपने ऐश्वर्य पूर्ण जीवन व्यतीत करने तथा धनी व्यक्ति कहलाने के लिए प्रवास हो रहा है जिसके कारण प्रवासी–विमर्श प्रकाश में आ सका। वर्तमान समय में अनेक प्रवासी साहित्यकार

अपनी पीड़ा और भावुकता को दिखाने का प्रयत्न अपनी सृजनात्मक क्षमता से कर रहे हैं । एक तरफ उनके देश छोड़ने की पीड़ा है तो दूसरी तरफ अपने सगे – संबंधियों को छोड़ने का दर्द ।

हिंदी को अंतरराष्ट्रीय पहचान दिलाने में प्रवासी हिंदी साहित्यकारों के योगदान को हम नकार नहीं सकते बल्कि उनके द्वारा लिखे गए साहित्य में हमें एक अलग प्रकार की संवेदना प्रकट होती है क्योंकि उनका मन तो भारतीय होता है पर प्रवास में निवास करने की वजह से उन्हें अलग-अलग चीजों को ग्रहण करना पड़ता है। प्रवासी हिंदी साहित्यकारों की रचनाओं में एक बेचैनी और अकुलाहट को बखूबी महसूस किया जा सकता है। फिर भी ऐसी परिस्थितियों में भी वे कालजयी रचनाओं का सृजन तो कर रहे हैं। इस विमर्श को स्थापित करने का कार्य सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में फैले भारतीय कर रहे हैं और अपने अनुभवों के माध्यम से जिस देश में निवास कर रहे हैं वहाँ की खट्टी – मीठी यादों तथा पीड़ा को अपनी कल्पनाशीलता के माध्यम से प्रवासी – विमर्श के द्वारा सम्रद्ध करने का प्रयास कर रहे हैं । वर्त्तमान समय में अनेक प्रवासी रचनाकार अपनी लेखनी का जादू चला रहे हैं जैसे तेजेंद्र शर्मा , पुष्पिता अवस्थी , सुधा ओम ढीगरा , उषा राजे , ज़किया जुबैरी , अर्चना पैन्पुली आदि ।

1.14. शैक्षिक – विमर्श

यह विमर्श देश भर में शिक्षा की अलख जगाने का विमर्श है। इस विमर्श में देश की सरकार और स्वयं सेवी संस्थायें बढ़ – चढ़कर हिस्सा ले रही हैं तथा देश को शिक्षा से जोड़ने के लिए साक्षरता मिशन की शुरुआत की गयी है जिससे देश के गांव – गांव में शिक्षा को पहुंचाया जा सके। क्योंकि किसी भी देश की विकास शिक्षा से ही मापी जाती है। शिक्षा के मानकों पर भी कार्य हो रहा है। देश में अनेक विश्वविद्यालय , कॉलेज , प्राथमिक विद्यालय तथा आंगन वाड़ी केंद्र है जिससे शिक्षा को फैलाया जा रहा है। इस शिक्षण कार्य में केंद्र तथा राज्य सरकारों के साथ अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन , भारती एयरटेल तथा अम्बानी बंधू भी अपने योगदान दे रहे हैं और वे देश को शिक्षित करने में तत्पर हैं ।

वर्तमान समय में ऐसे बहुत शिक्षक हैं जो झुग्गी , झोपडियों में भी गरीबों , निर्धनों को शिक्षा दे रहे हैं। शैक्षिक विमर्श पर आधारित सबसे अच्छी कृति श्रीलाल शुक्ल के 'रागदरबारी' है। इस उपन्यास में उन्होंने कहा है कि शिक्षा व्यवस्था मे ज़रूर बदलाव आना चाहिए। इसके अलावा विवेकी राय का 'सोना माटी' , असगर वजाहत का 'सात आसमान' , मैत्रेयी

पुष्पा का ‘चाक’ और चित्रा मुद्गल का ‘आवां’ जैसे अनेक उपन्यासों में शिक्षा – विमर्श का पहल परिलक्षित होता है।

1.15. पारिवारिक विमर्श

यह विमर्श पारिवारिक कलह , आपसी असमानता तथा संबंधों को उजागर करने का कार्य कर रहा है। अधिकतर साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं को परिवार के इर्द – गिर्द ही रचा है जिससे उनकी रचनाओं में समानता मिल जाता है। समाज की कोई ऐसी घटना नहीं है जो परिवार से सम्बंधित न हो। सामाजिक दृष्टिकोण से यदि अनुशीलन किया जाए तो यह विमर्श स्वतः ही दृष्टिगत हो जाएगा।

वर्तमान समय में पारिवारिक विघटन ने घर परिवार को तोड़ कर रख दिया है। क्योंकि भारतीय परंपरा में संयुक्त परिवार का बोलबाला था । लेकिन इस समय परिवार एकाकी हो रहे हैं जिसको प्रेमचंद जैसे कथाकार ने बहुत पहले ही भांप लिया था। उन्होंने अपनी रचनाओं में इस विमर्श को उठाने का कार्य किया है। इस विमर्श पर लिखने वाले मुख्य साहित्यकार हैं प्रेमचंद , श्री लाल शुक्ल , कृष्णा सोबती , मनोहर श्याम जोशी , असगर वजाहत आदि।

1.10. किन्नर विमर्श

हाशिये एवं उपेक्षित वर्गों में सम्मिलित दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, आदिवासी विमर्श, अल्पसंख्यक विमर्श, दिव्यांग विमर्श और पर्यावरण विमर्श के बाद बहिष्कृत 'किन्नर विमर्श' का प्रारंभ हुआ है।

ये सभी विमर्श लगभग 20 वीं सदी के उत्तरार्ध की देन हैं। 21 वीं सदी में एक नए विमर्श की लहर आयी है ऐसा ही एक विमर्श है – 'किन्नर विमर्श'।

परम्परागत रूप से यह देखने को मिलता था कि समाज में दो लिंग है - स्त्री और पुरूष। लेकिन आज के संदर्भ में हम यह कह नहीं सकते क्योंकि समाज में एक और लिंग विद्यमान है जिसे हम किन्नर कहते हैं। इस लिंग को किन्नर, हिजड़ा, उभयलिंगी, ट्रांसजेंडर, थर्ड जेंडर, तृतीय लिंगी आदि अनेक नामों से पुकारा जाता है।

समाज में अभी भी किन्नर वर्ग जो है समाज की मुख्यधारा से अलग हाशिए पर है। किन्नरों की स्थिति अत्यंत दयनीय है। समाज में किन्नरों को अत्यंत नकारात्मक एवं हेय दृष्टि से देखा जाता है। लोग इन्हें देखकर बचने का प्रयास करते हैं।

'स्त्रीकाल' में प्रकाशित 'डिसेंट साहू' द्वारा लिए गये साक्षात्कार में छत्तीसगढ़ की 'रवीना बरीहा' कहती है - "थर्ड जेंडर के प्रति हम लोग समाज की मिली जुली प्रतिक्रिया देखते हैं"।[27]

समाज के जिन लोगों का किन्नरों के साथ पहले कभी अथवा लगातार मेलजोल रहा है, वे बहुत जल्दी उन लोगों को स्वीकार करते हैं। उन लोगों से अच्छा व्यवहार करते हैं। कई बार उन लोगों को एक दैवीय रूप में भी देखा जाता है, लेकिन समाज का एक बड़ा तबका ऐसा है जो अपने कुछ पूर्वाग्रहों के कारण उनसे दूर भागता है। इस प्रकार समाज में हम लोग दो प्रकार की प्रतिक्रियाएँ देखते हैं-एक सकारात्मक तो दूसरा अत्यंत नकारात्मक।

किन्नर के इतिहास या किन्नर विमर्श के बारे में अगर बात करें तो कहाँ से प्रारंभ हुआ और कहाँ तक पहुँच गया है? इसकी यात्रा को देखे तो बहुत सारे विषय इसके अंतर्गत आते हैं। सबसे बड़ा प्रश्न यह आता है कि किन्नर को क्या समाज ने स्वीकार किया है? क्या उसे सम्मान दिया है? वह सम्मान जो उसे अभी तक नहीं मिल रहा है। हम जिस समाज में रह रहें हैं वह चाहे भारतीय समाज हो चाहे विश्व के किसी भी जाति का समाज हो। सबसे बड़ी बात यह है कि हम सम्मान के नाम पर बहुत सारे बंझंझावात में अपने आपको बाँट रहे हैं। पुरूष अलग है स्त्री अलग है, वृद्ध

अलग है, दिव्यांग अलग है, स्त्री अलग है उसके अनुसार उन्हें कितना सम्मान देना है यह हम तय करते हैं । जिस भारतीय संस्कृति में अर्ध नारीश्वर की बात कही गई है वहाँ समानता का अधिकार था। वैदिक संस्कृति में तो स्त्री को भी जनेऊ धारण करने का अधिकार था। जितना अधिकार पुरूष को अपने स्वतंत्रता को लेकर है उतना ही स्त्री को भी था। अपनी इच्छा से वर चुनने का, शिक्षा ग्रहण करने का। लेकिन धीरे-धीरे परंपराएँ बदलीं, समस्याएँ अलग होने लगीं और स्त्री और पुरूष दो भागों में बंट गयीं।

हाँ, यह ज़रूर है कि हमने मंदिर के अंदर अर्धनारीश्वर की कल्पना तो कर ली। लेकिन घर में हमने उन्हें दो भागों में अलग किया। स्त्री अलग है, पुरूष अलग है। अगर पुरूष सम्मानित है तो उसके लिए हमने पौरूषत्व की बात कही। हमने यह मान लिया है कि पुरूष में इसलिए अधिक शारीरिक शक्ति है कि उसमें अधिक पौरूष बल है। लेकिन ऐसा कुछ नहीं है। पौरूष से पुरूष अवश्य है लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि आप पुरूष को अलग कर देंगे, स्त्री को अलग कर देंगे। नहीं स्त्री का मतलब है स्त्रेण जिसमें कोमलता हो , नाजुकता का भाव हो। जिसमें संवेदनशीलता का गुण विद्यमान हो तो वह स्त्री है। वह आपसी शारीरिक संरचना से अलग हो सकती है। पहले केवल पुरुषों को ही सम्मान दिया जाता था। दूसरे

विभाग के अंतर स्त्री आती है और स्त्री के अंदर भी विभाग हम बाँटते हैं। हमने उच्च वर्ग, मध्यवर्ग, निम्नवर्ग, दलित स्त्री, शिक्षित, अशिक्षित इन सबके हिसाब से सम्मान और उसके अपमान को तय कर लिया। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि पूरा वर्ग इस तरह का है। बिल्कुल नहीं। जिस प्रकार से हम दूसरे जाति , धर्म , वर्ग का सम्मान करते हैं वैसे ही किन्नरों का भी करना चाहिए चाहे वह लैंगिक दृष्टि से भिन्न ही क्यों न हो।

1.10.1. किन्नर विमर्श स्वरूप

मानव सभ्यता की विकास यात्रा में अनेक पड़ाव आते रहे हैं। तथा उसने उन बदलाव को समयानुसार समझा भी है एवं बुद्धिजीवियों ने अपनी रचनाशीलता के माध्यम से कलमबद्ध भी किया है।

भूमंडलीकरण की स्थितियों से प्रभावित और परिवर्तित सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश ने हाशिये पर पड़े किन्नर समुदाय के प्रति समाज में मानवीय संवेदनाओं को जगाया है। समाज में परिवर्तन की इस लहर से समाज में उपेक्षित वर्गों को पहचान मिली है और निस्संदेह हिंदी के कुछ चुनिन्दा कथाकरों ने इस आंदोलन को साहित्य की मुख्य धारा में स्थान दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। हिंदी में किन्नर जीवन पर आधारित कथा साहित्य का आरंभ 21 वीं शती (नई सदी) में हुआ। विगत शती में स्त्री, दलित और आदिवासी वर्ग को तो विशेष अभिव्यक्ति मिली

परंतु किन्नर समाज को हिंदी साहित्य में कोई विशेष अभिव्यक्ति नहीं मिली।

इस पूरे विमर्श को डॉ. फ़ीरोज़ एम. खान ने साहित्यिक पृष्टभूमि पर स्थान दिलाने के लिए अपनी बहुचर्चित पत्रिका वाङ्गमय के कई अंक प्रकाशित किए जिससे पाठकों में भी इस विषय के प्रति जागरूकता उतपन्न हुई। वर्तमान स्थिति में कई विश्वविद्यालयों में किन्नर विमर्श पर शोध अनेक दृष्टियो से हो रहे हैं। जिसका श्रेय निश्चित ही वाङ्गमय पत्रिका को जाता है।

किन्नर को जीवन के प्रारम्भ से लेकर अंत तक अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। उसकी सबसे बड़ी चुनौती उसकी देह होती है। दैहिक बनावट और अंत:करण की भावनाओं में सामंजस्य न होने के कारण वे मानसिक वेदना तो सहते ही हैं, साथ ही कई बार उनकी देह शोषण का शिकार भी हो जाती है। लोगों के घरों में मंगल अवसर पर अपनी वेदना को छिपाकर हर्षित होने वाले किन्नरों की देह लोगों में प्राय: आकर्षण का केंद्र बनी रहती है। इसीलिए कुछ कुंठित मानसिकता के लोग उनका दैहिक शोषण करते हैं। किन्नर समाज की यह एक यथार्थ स्थिति है जिसे हिंदी उपन्यासों, कहानियों एवं किन्नर आत्मकथाओं में मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। नई सदी का हिंदी कथा साहित्य किन्नर समुदाय की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक अस्मिता की पड़ताल करने

में कमोबेश सफल हुआ है। साहित्य में यदि कोई विमर्श आता है तो उसका अपना स्वरूप होता है जिसमें सबसे पहले उसकी समस्याओं को प्रस्तुत करना पड़ता है। इनको उस परिवेश में दिखा देना चाहिए। लेकिन बस इतना ही करके रोका जा सकता है? हमने किन्नर की समस्याओं का विवेचन किया, उनकी स्थिति को समझ लिया, उसमें उनके संघर्षों को दिखा दिया फिर हम रुक गये! नहीं, बिलकुल नहीं हो सकता। माना जाता है कि समाज साहित्य का दर्पण है। लेकिन हम दर्पण इसलिए देखते हैं कि हम खूबसूरत लग रहे हैं या नहीं? हमारे कपड़े सही लग रहे हैं या नहीं? हम अपने आपको अच्छी तरह से प्रस्तुत कर पायेंगे, इस चीज़ को देखने के लिए हम दर्पण देखते हैं। तो साहित्य में भी क्या हम उसके उजले पक्ष को रेखांकित करके सृजन नहीं कर सकते?

जिस तरह साहित्यकारों ने अन्य उपेक्षित वर्गों से संबंधित विमर्शों पर लेखनी चलाने में उत्सुकता दिखाई है, वैसी किन्नर विमर्श पर नहीं। किन्नर विमर्श हिन्दी साहित्य में अभी भी अपने शैशव काल में है। फिर भी कुछ साहित्यकार किन्नर विमर्श पर अपनी लेखनी चलायी है तथा इस विमर्श को आगे बढ़ाने में सक्षम हुए हैं। आज के दौर में सब कुछ बदल रहा है और परिभाषाएँ भी बदल रही हैं। हाँ, लेकिन यह जरूर है कि जिस

समाज में हम स्त्री को सम्मान नहीं देते हैं वहाँ हम बहुत सारे विमर्शों की बात अवश्य करते हैं।

हम यहाँ किन्नर विमर्श पर चर्चा कार रहे हैं वह किन्नर जिसके सामने आते ही हम मुंह फेर लेते हैं या अपनी रास्ता बदल लेते हैं या उसको हँसी के पात्र के रूप में लेते हैं और यह हम मान लेते हैं कि किन्नर जो है वह समाज से अलग है। हम उसको हिस्से मानने को ही तैयार नहीं हैं। हम उसको हिस्सेदारी देने को तैयार नहीं हैं। भागीदारी तो बहुत बाद का विषय है।

प्रेमचंद के उपन्यास 'गोदान' में प्रेमचंद जी ने लिखा था कि "यदि एक पुरूष में स्त्रियों वाली गुण होते हैं तो पुरूष महान हो जाता है, महात्मा हो जाता है।"[28] इन में स्त्री और पुरूष दोनों के गुण हैं तो हम क्यों किन्नरों को उपेक्षित दृष्टि से देखते हैं ? क्यों सम्मान नहीं देते हैं ? किन्नर विमर्श इसी का जवाब देता है।

किन्नर विमर्श का प्रारंभ वास्तव में फिल्म जगत् की देन है। तमन्ना, सड़क आदि फिल्मों में किन्नरों की कथा कही गयी है। दूसरी बात यह है कि फिल्मों कि रिलीस के बाद लोग किन्नरों को जिस दृष्टि से देखते थे उसमें बदलाव आ गया। अलग तरीके का व्यवहार भी आने लगा कि सिर्फ इनको गानों में गाने लगे मार्किट बढ़ाने के लिए या हंसी-मज़ाक के दृश्यों

में लेने लगे, हास्य पात्र की दृष्टि से देखने लगे। एक अजीब प्रकार का जो परिवेश हमें अपने समाज में देखने को मिलता वैसा ही हमें फिल्मों में देखने को मिलता है।

सबसे सकारात्मक पक्ष तब समझ में आता है जब साहित्य में इनकी तरफ साहित्यकारों का ध्यान जाता है। लेखकों ने जो अपने उपन्यासों और कहानियों में इनको पात्र के रूप में चित्रित किया है। साहित्य में देखा जाय तो यह भी विचार का सबब है। साहित्यकारों ने इसको किस रूप में अपनाया है? कई उपन्यास , कहानी , कविताएं जो किन्नर पर आधारित हैं।

ऐसे कई पुस्तकें सृजित हुईं जो खुद किन्नरों ने लिखी हैं। सबसे पहले लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी जी का नाम आता है। जिन्होंने अपनी पुस्तक 'मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी!' इस नाम से अपनी पहचान को अपनी आत्मकथा में रखा। उन्होंने कहीं कुछ छिपाने की कोशिश नहीं की है। उसके बाद कई उपन्यास आये चित्रा मुद्गल जी का पोस्ट बॉक्स नंबर 203, नाला सोपारा, महेन्द्र भीष्म जी का 'मैं पायल', नीरजा माधव जी का ''यमदीप'', डॉ. अनुसूइया त्यागी जी का ''मैं भी औरत हूँ'', प्रदीप सौरभ का 'गुलाम मंडी', आदि प्रमुख हैं।

कहानी के क्षेत्र में यदि चर्चा करे तो 1983 में एक "दरमियाना" नामक एक कहानी सरिता के अंग में प्रकाशित हुई थी। लेकिन उसके बाद इस विषय के क्षेत्र में नाममात्र रचनाएं भी नहीं हुईं ।उसके बाद फिरोज अहमद खान द्वारा संपादित वांग्मय पत्रिका का किन्नर कहानी विशेषांक काफी विख्यात हुआ । 'हम भी इंसान हैं' फिरोज खान जी के संपादन में आए अन्य कहानी संग्रह है। इस संग्रह की कहानियों में एक किन्नर की लव स्टोरी (कैस जौनपुरी) नवाब (डॉक्टर विमलेश दत्त) समर से सुरमई(बबीता भंडारी) आदि प्रमुख हैं। किन्नर विमर्श पर आधारित कविता संग्रह में 'अस्तित्व और पहचान' ,' सांझ' , सतीश वर्मा कीर्ति जी की कुछ चार कविताएं 'कहां हो मां' ,'संवेदना के स्वर सुनो न मां', 'अर्धनारीश्वर' आदि आते हैं। इनके अलावा डॉ विजेंद्र प्रताप सिंह की पुस्तक 'हिंदी उपन्यासों के आईने में थर्ड जेन्डर', फिरोज खांन द्वारा संपादित 'किन्नर कथा आलोचना' शरद सिंह द्वारा संपादित 'थर्ड जेन्डर विमर्श' इत्यादि पुस्तकों में भी किन्नर विमर्श के विविध रूपों को देखा जा सकता है।

निष्कर्ष -

आधुनिक काल के दौर में मनुष्य को सिर्फ दैविक समझ कर किसी भी समुदाय की स्थितियों को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता। आधुनिकता ने ,हमें सोचने को मजबूर किया चिंतन और तर्क वितर्क इसके

मूल आधार है। इसी लिए वंचितों और शोषितों के लिए आधुनिक काल में आंदोलन खड़े हो गए। स्त्री ,विकलांग ,मजदूर ,प्रवासी और दलित विमर्शों ने आंदोलनों के साथ साथ साहित्य पर भी छाप छोड़ी और साहित्य इनके न्याय के लिए खड़ा हो गया। किन्नर विमर्श ने भी २० वि शताब्दी के अंतिम दशक से साहित्य में अपना स्थान बनाया और जड़ होते समाज को संवेदनशील बनाने का प्रयत्न किया। इस दूसरे अध्याय के अंतर्गत हमने विमर्श को समझने की कोशिश की तथा सभी विमर्शों की मूल चेतना को प्रदर्शित किया। किन्नर विमर्श में किन्नरों को मनुष्य न समझ कर उनके साथ अन्याय किया गया है। यह विमर्श उनके प्रति हो रहे अत्याचार को उजागर करता है। वह तब उस स्थान को प्राप्त करते है जब समझ उन्हें अपने से अलग न समझे और इस सृष्टि का अभिन्न हिस्सा माने। जबकि समाज ने मुख्य रूप से दो ही लिंग मानी स्त्री और पुरुष ,इसमें तीसरे की अस्मिता तक विलुप्त हो जाती है। उन्हें समाज की अवहेलना झेलनी पड़ती है खाने के लिए अन्य लोगों के सामने हाथ फैलाना पड़ता है। वे समाज की नज़रों में दृष्टि हीनता का शिकार हो जाते हैं । वे जब भी देखते हैं उनकी निगाह किन्नरों को अपेक्षा की दृष्टि से देखने की होती है। इस अध्याय के माध्यम से इसे भी उजागर करने की कोशिश की गई है।

संदर्भ ग्रंथ

1. मानक हिंदी कोश , मुख्य सं. रामचंद्र वर्म्मा , हिंदी साहित्य सम्मलेन प्रयाग , पाँचवां संस्करण , पृ. 903

2. ऑक्सफोर्ड अंग्रेज़ी – हिंदी कोष , सं. एस.के. वर्म्मा , ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस , पृ. 156

3. दलित साहित्य , सं. जयप्रकाश कर्दम , सम्यक प्रकाशन 32/3, पश्चिमपुरी , नई दिल्ली 2016 , पृ. 60

4. हिंदी पर्यायवाची कोश , सं. भोलानाथ तिवारी , प्रभात प्रकाशन , दिल्ली पृ. 572

5. हिंदी – अंग्रेज़ी शब्द कोश , सं. डॉ. हरदेव बाहरी , राजपाल एंड संस दिल्ली , पृ. 593

6. हिंदी शोध के नए प्रतिमान , नामवर सिंह , हिंदी साहित्य निकेतन , 16 साहित्य विहार बिजनौर 246701(उ.प्र.) शोध दिशा , पृ. 287

7. उत्तर सदी के कथा साहित्य में दलित विमर्श , श्योराज सिंह बेचैन , अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , नई दिल्ली 2014 , पृ. 46

8. समकालीन विमर्श मुद्दे और बहस , रवि कुमार गोंड , महेंद्र प्रताप सिंह , अनंग प्रकाशन , दिल्ली , पृ. 119

9. हिंदी साहित्य वैचारीक पृष्टभूमि , सं. लालचंद गुप्तमंगल , हरियाणा साहित्य अकादमी पंचकुला पृ. 229

10. परिधि पर स्त्री , मृणाल पांडे , राधाकृष्ण प्रकाशन , दिल्ली पृ. 09

11. उत्तर संस्कृति , दलित विमर्श और निराला , डॉ. हरदेव बाहरी , सुनीता कुशवाहा , किशोर विद्या निकेतन वारणासी 2005 , पृ. 324

12. दलित साहित्य की अवधारणा , कँवल भारती , बोधिस्तव प्रकाशन , रामपुर उ.प्र. 2006 , पृ. 15

13. वसुधा – 50 (पत्रिका) , सं. मैनेजर पांडेय , जुलाई-सितंबर 2007 , पृ. 324

14. युद्दरत आम आदमी (पत्रिका) आदिवासी ब्विमर्ष , अर्थ और अवधारणा अप्रैल – जून 2018, सं. जुगुल किशोर , पृ. 82

15. आदिवासी कौन , सं. रमणिका गुप्ता , राधाकृष्ण पब्लिकेशन , दिल्ली पृ. 86

16. राजस्थान के आदिवासी , डॉ. एस. के. सोनी , यूनिक ट्रेडर्स पृ. 09

17. वही

18. http://disabilityaffairs.gov.in act

19. विकलांग विमर्श का वैश्विक परिदृश्य , सं. डॉ. सुरेश महेश्वरी , भावना प्रकाशन , नीरजा बुक्स सेण्टर दिल्ली 2014 , पृ. 5

20. विकलांग विमर्श , सं. विनय कुमार पाठक , भावना प्रकाशन , दिल्ली पृ. 18

21. मराठी शब्द कोश , सं. लक्ष्मण शास्त्री , खंड 01 , पृ. 265

22. सम्पत्तिशास्त्र , महावीर प्रसाद द्विवेदी , नेशनल बुक ट्रस्ट 2014 , पृ. 47

23. पर्यावरण और जैव प्रोद्योगिकी , डॉ. प्रवीण चन्द्र त्रिवेदी , लोक प्रकाशन जयपुर 2018 , पृ. 19

24. माइनॉरिटीज़ एंड थे लॉ , मुहम्मद इमाम , प्रथम संस्करण पृ. 316

25. Totalsamacharnews May 27 , 2020 डॉ. ध्रुव कुमार त्रिपाठी

26. हिंदी साहित्य में श्रमिक जीवन , सं. विनय कुमार पांडे , एन. एस. जी. पब्लिकेशन्स प्रयाग 2018 , पृ. 92

27. स्त्रीकाल – रवीना बरीहा साक्षात्कार 2019

28. गोदान , प्रेमचंद , सरस्वती प्रेस , इलाहाबाद , पृ. 73

अध्याय- दो

किन्नर: अर्थ, आशय एवं अवधारणा

अध्याय- दो

किन्नर: अर्थ, आशय एवं अवधारणा

2.1 लिंग और सेक्स (Gender and Sexuality) की अवधारणा

समाज में 'सेक्स' और 'लिंग' इन दो शब्दों का प्रयोग हमेशा से होता आया है , लेकिन सामाजिक चर्चा होने के बाद भी इन दो शब्दों की व्याख्या आज भी व्यवस्थित रूप से नहीं हो सकी । हमें सबसे पहले 'सेक्स' और 'लिंग' (Gender) के अंतर को समझना ज़रूरी है जिससे ऐसी विषमताओं का सही समस्या की पहचान कर उसका निदान प्रस्तुत किया जा सके। नारीवादी चिंतन ने इसमें अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया कि हमें 'सेक्स' और 'लिंग' में अंतर समझ में आ सके। 'सेक्स' मानव जीवन के जैविक अर्थ की ओर संकेत करता है वही 'लिंग' शब्द का अर्थ शारीरिक बनावट से समझा जाता है।

'लिंग' शब्द 'जीन्स' से बना है जिसका शाब्दिक अर्थ वंश या प्रकार है।1 इससे व्यक्ति को पहचाना जाता है कि वह पुरूष है या स्त्री है , इंटरसेक्स है , गे है लेस्बियन है या , किन्नर हैं। 'लिंग' का संबंध कानूनी स्थिति, व्यक्तिगत अनुभव, सामाजिक संदर्भ और मनोवैज्ञानिक व्यवहार पर भी आधारित होता है।

‘सेक्स’ शब्द की व्युत्पति लेटिन भाषा से हुई है जिसका अर्थ है ‘जननांग’। नारीवादी विमर्श मानता है कि महिलाओं की अधीनता जैविक अंतर के आधार पर ही सही ठहराया जाता है।

‘लिंग’ का संबंध आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक विशेषताओं और महिलाओं एवं पुरूषों से जुड़े काम के बंटवारे से है। स्त्री, पुरूष होने का अर्थ क्या है? इसकी परिभाषाएँ सामाजिक सरोकार एवं संस्कृतियों के अनुसार निरंतर बदलती रहती हैं।

अधिकांश बहुकोशकीय जीवों में जीवन की निरन्तरता बनाए रखने में लैंगिक प्रजनन एक अनिवार्य गुण है। पीढ़ियों की उत्तरजीविका में प्रजनन पहला कदम होता है जिससे किसी भी मनुष्य का वंश आगे बढ़ता है। पीढ़ियों को आगे बढ़ाने के लिए दो दो विपरीत लिंग संभोग करते हैं और एक समय अवधि के बाद शिशु का जन्म होता है जिसमे कभी शिशु नर होता है तो कभी स्त्री। स्त्री के गर्भ धारण करते ही यह निश्चित हो जाता है की लड़की होगी या लड़का। अगर ‘xx’ क्रोमोसोम होते हैं तब लड़की का जन्म होता है और ‘xy’ से लड़का जन्म लेता है परन्तु छह सप्ताह तक लड़की और लड़के दोनों के लिंग का स्वरुप एक जैसा ही रहता है। उसके बाद ‘y’ क्रोमोसोम पर का ‘sry’ नामक जीन कार्यरत होता है। उसमें

फिर जननेन्द्रियों का विकास होने लगता है और हार्मोन्स तैयार होने की शुरुवात होती है। इसी तरह जैसे -जैसे गर्भ विकसित होता है बच्चा अपने शारीरिक संरचना में स्थायित्व प्राप्त कर लेता है। पुरुष हार्मोन्स एंड्रोजेन तैयार होता है। उसमें टेस्टास्टरोन हार्मोन की बड़ी मात्रा होती है। इसी प्रकार बच्चों की संरचना रूप धारण करती है।

यह प्रक्रिया सामान्यतः ऐसी ही चलती है और स्त्री पुरुष का जन्म होता रहता है। मगर बहुत बार इस प्रक्रिया में गड़बड़ी होने से लिंग निर्धारण नहीं हो पाता। इसके भी चार प्रकार के सिंड्रोम हैं पहले सिंड्रोम को 'टर्नर सिंड्रोम' कहा जाता है। उसमें गर्भ का सिंड्रोम 'xx' या 'xy' न होकर इस से उलट 'xo' होता है। पिता से आने वाले ,गर्भ को पुरुषत्व देनेवाला 'u' क्रोमोसोम के न होने की वजह से बाहर के जननेन्द्रियों का विकास स्त्री जैसा ही होता है। इसी वजह से गर्भाशय का अभाव हो जाता है और वह बच्चा को जन्म नहीं दे पाता इसमें स्त्री के विकास के लिए दो 'x' की जरुरत होती है। इस वजह से उसका पूरा स्वरूप तो स्त्री जैसा ही होता है लेकिन उसको मातृत्व गुण से वंचित रहना पड़ता है।

दूसरा प्रकार होता है 'एंड्रोजन इंसेन्सिटिव सिंड्रोम'। इसमें टेस्टा स्टारॉन हार्मोन को गर्भ रेस्पॉन्स नहीं देता। गर्भ अगर पुरुष का है , 'xy' तो इस वजह से उसकी पुरुष जननेन्द्रियों का विकास नहीं होता। नवजात

बच्ची की जननेंद्रिय स्त्री की होती है,पर अण्डकोश ,गर्भाशय नहीं होता। लेकिन स्तनों का विकास होता है। उसे मासिक धर्म नहीं होता,उसके बच्चे नहीं होते। जेनेटकली उसमें लड़के का प्रभाव होता है।[2]

तीसरे प्रकार में पुरुष हार्मोन का ,एंड्रोजन का स्तर बहुत बढ़ता है गर्भ अगर लड़के का हो तो कोई सवाल पैदा नहीं होता ,पर लड़की का हो तो जन्मी हुई लड़की पुरुष ,टॉमबोइश पद्यति की होती है।

चौथे प्रकार में पुरुष हार्मोन ,टेस्टास्टरोन काफी कम मात्रा में तैयार होते हैं। स्त्री का गर्भ हो तो कोई दिक्कत नहीं ,लेकिन गर्भ पुरुष का हो तो जननेंद्रिय पुरुषों की होने के बावजूद सोच और भावना आदि उसमें स्त्रीत्व की मिलती है। उसे स्त्री जैसा रहना ,बर्ताव करना अच्छा लगता है। किशोरावस्था में आने के बाद ये लड़के पुरुषों की ओर आकर्षित होते हैं।

किन्नर का सम्बन्ध इसी चौथे प्रकार से है। किन्नर में शारीरिक रूप से वह पुरुष होता है लेकिन भावनायें स्त्रियों की निहित होती है। किसी के पास शरीर स्त्री का और भावनायें पुरुष की हो जाती हैं। कई पुरुषों की भावना स्त्रियों की तरह होने के कारण उन्हें 'मउगा' कह कर चिढ़ाया जाता है।

‘लिंग’ का संबंध जननांग से होने के कारण कुछ लोग जननांग के आधार पर पुरूष या स्त्री होते हैं। कभी - कभी स्त्री की योनी और स्तन होते हैं लेकिन भावनाओं और विचारों के आधार पर वह पुरूषवादी विचारों से युक्त है यानि उसका सेक्स पुरूष का होता है इसलिए लिंग या जेंडर को निर्धारित करना थोड़ा जटिल है किंतु सामाजिक संबंध बदलने से विचारों में भी बदलाव आते रहते हैं। इसलिए किसी भी सेक्स या लिंग के प्रति नज़रिया बदलने के लिए सबसे पहले समाज को जागरूग करना होगा और सबके साथ समानता का व्यवहार भी करना होगा जिससे सबको मानव की सूचि में रखा जा सके।

2.1.1. लैंगिकता (Sexuality)

‘ लिंग’ या ‘जेंडर’ का संबंध जननांग से होता है वही जब लैंगिकता(sexuality) की बात आती है तो सिर्फ शारीरिक अंतर मात्र से हम उसमें अंतर स्पष्ट नहीं कर सकते। लैंगिकता का अर्थ शारीरिक संबंधों से कहीं ज़्यादा व्यापक है। लैंगिकता की समझ जो हमें है कि , अपने बारे में सोचते क्या है? हमारे विचार कैसे हैं? हम स्वयं के बारे में शारीरिक रूप और मानसिक रूप से क्या सोचते और महसूस करते हैं ? तथा किस प्रकार व्यवहार करते हैं ? ये सब लैंगिकता के ही भाग हैं । प्रेत्यक समाज में

विभिन्न प्रकार की लैंगिकता देखने को मिलती है - वे हैं - एल. जी. बी. टी. क्यू. ए.(L.G.B.T.Q.A)।

2.1.2. एल. जी. बी. टी. क्यू. ए.(L.G.B.T.Q.A)

2.1.2.1. – एल.- लेस्बियन

आम तौर पर कोई भी महिला पुरुष अपने विपरीत सेक्स के साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करता है लेकिन जब कोई महिला अपने शारीरिक सम्बन्ध पुरूष से न बना कर अपने ही लिंग के साथ बनाती है , या पुरूष की ओर आकर्षित न होकर महिला के प्रति वह आकर्षक हो तो उसे 'लेस्बियन' कहा जाता है। पहले लेस्बियन में दो पृथक - पृथक मान्यताएँ बताई जाती थीं --पहला 'बुच' दूसरा 'फेम'। जब कोई स्त्री चाल-ढाल, पहनावे और व्यवहार के आधार पर पुरूषों की तरह रहती है तो उसे 'बुच' कहा जाता है । वही अगर कोई लड़की महिलाओं वाली विशेषता हो तो उसे 'फेम' कहा जाता है।

2.1.2.2. गे (Gay)

शाब्दिक अर्थों के आधार निरूपित किया जाये तो 'गे' शब्द का शाब्दिक अर्थ ऑक्सफ़ोर्ड शब्दकोश के अनुसार ''हैप्पी'' बताया गया है।[3]

इसमें एक पुरूष का दूसरे पुरूष से संबंध होता है। 'गे' पुरूष किसी अन्य पुरूष की ओर अपनी शारीरिक इच्छाओं की पूर्ति के लिए आकर्षित होता है । वह अपना जीवन यापन किसी अन्य पुरूष के साथ ही करना चाहता है । शारीरिक संतुष्टि के साथ – साथ मानसिक सुख भी वह प्राप्त करना चाहता है । स्त्री से वह आकर्षित नहीं होता तथा उससे दूर ही रहता है।

2.1.2.3. बी – बिसेक्सुअल

इसमें ऐसे व्यक्ति आते हैं जो पुरूष और स्त्री दोनों की तरफ समान रूप से आकर्षित होते हैं और दोनों से संबंध बनाने में रुचि रखते हैं। स्त्री और पुरूष दोनों ही बिसेक्सुअल हो सकते हैं।

2.1.2.4. टी- ट्रांसजेंडर

ट्रांसजेंडर वे लोग होते हैं जो लैंगिक रूप से न नर होते हैं न मादा । कोई जन्म के समय लड़का प्रतीत होता है तथा एक समय बाद उसका व्यवहार लड़की के समान हो गया या जन्म के समय कोई लड़की थी लेकिन उसके पश्चात् उसका व्यवहार लड़कों जैसा हो गया। ऐसे व्यक्ति को ट्रांसजेंडर या टी. जी. कहा जाता है।

2.1.2.5. क्यू – (Queer)

'क्वीर' में वे इंसान आते हैं जो अपनी लैंगिक पहचान तय नहीं कर पाए हैं और न ही शारीरिक चाहत। वह व्यक्ति जो न अपने को 'गे'

मानते हैं न 'लेस्बियन' और न ही 'बिसेक्सुअल' उन्हें 'क्वीर' कहा जाता है। 'क्वीर' के 'क्यू' को 'क्वेस्टिंग' भी समझा जाता है अर्थात् वह व्यक्ति जो अपनी शारीरिक चाहत और पहचान में अभी भी स्वयं को नहीं समझ सका जिसके अनेक उत्तर अस्पष्ट होते हैं उसे हम 'क्वीर' कहते हैं।

2.1.2.6. एय. इंटरसेक्स

इस वर्ग में वे व्यक्ति आते हैं , जिनका जन्म से यौनांग अस्पष्ट होता है। इनका लिंग तो देखने में पुरूषों की भाँति होता है लेकिन अंदर से इनकी बनावट स्त्रियों की जैसी होती है।

आज के समाज में इन सब में अंतर कर व्यापक रूप से सामाजिक स्वीकृति देनी चाहिए। ये सब व्यक्ति की जन्मजात प्रक्रिया से होते हैं। इसमें किसी भी प्रकार का अपराध बोध व्यक्ति के अंदर निहित नहीं होना चाहिए और न ही इस आधार पर कोई भेदभाव।

एल. जी. बी. टी. क्यू. एय. (L.G.B.T.Q.A .I) की चर्चा करते समय इसमें 'ट्रांसजेंडर' या 'किन्नर' को विशेष महत्त्व दे सकते हैं क्योंकि ट्रांसजेंडर दृश्य अल्पसंख्यक है।[4] बचपन से लेकर ट्रांसजेंडर व्यक्ति को परिवार से, समाज से कई तरह की मानसिक व शारीरिक पीड़ाएँ भोगनी पड़ती हैं। वास्तव में इसमें इन लोगों का कोई दोष नहीं है? इस वर्ग को

हमेशा ही समाज द्वारा घृणित दृष्टि से देखा जाता है। वास्तव में यह समुदाय आज भी निरंतर अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहा है।

नेशनल लीगल सर्विस अथॉरिटी की अर्ज़ी पर फैसला सुनाते हुए 2014 में भारत के सर्वोच्च-न्यायालय ने किन्नरों को समाज में ट्रांसजेंडर नाम दिया था।इस शोध कार्य में मैंने ट्रांसजेंडर लोगों को सम्मान का भाव रखते हुए 'किन्नर' शब्द का प्रयोग किया है।

2.2. किन्नर:,शब्द अर्थ एवं अवधारणा

'किन्नर' शब्द की व्युत्पत्ति है किम् + नर = किन्नर अर्थात् विकृत पुरूष, पुराणोक्त पुरूष जिसका सिर घोड़े का हो तथा शेष शरीर मनुष्य का हो। नर को इस संसार में पुंसत्व से युक्त माना गया है तथा किम् का शब्दार्थ हुआ - 'क्या वो भी नर है क्या?' जिसके पुंसत्व पर प्रश्नचिह्न है, इसी अवधारणा से समाज में 'किन्नर' शब्द प्रचलित हुआ।

'किन्नर' शब्द का देश में प्रचलित अर्थ देखें तो यह हिमालय में निवास करने वाले वे पहाड़ी लोग हैं , जिनकी भाषा कन्नौरी, गलचा, लाहौली आदि बोलियों के परिवार की है।

किन्नर हिन्दी के दो शब्दों 'कि' और 'नर' से मिलकर बना है जिसका तात्पर्य हिमालय की किन्नर जनजाति से नहीं है। बल्कि उस वर्ग से है, जो पूर्ण रूपेण न स्त्री है और न पुरूष।

प्राचीन समय से लेकर किन्नर के कई अन्य नाम भी प्रचलित हैं जैसे हिजड़ा, खोजवा, मद्दा , कोज्जा, खुमरा, पवैया, मंगलमुखी, लुगाई , तृतीय लिंगी ,उभयलिंगी , ट्रांसजेंडर एवं मेहल्ला आदि ।

'ट्रांसजेंडर' या 'थर्ड जेंडर' अंग्रेजी में ये दो शब्द प्रचलित हैं लेकिन लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी के संघर्ष के परिणामस्वरूप 2014 में इसे 'तीसरे लिंग' के रूप में मान्यता मिली।[5]

लेकिन यह 'तीसरे लिंग' शब्द मेरी दृष्टि से अनुपयुक्त है क्योंकि यह शब्द अनेक प्रश्नों की तरफ इशारा करता है। यदि किन्नर को 'तीसरे लिंग' कहें तो पहला और दूसरा लिंग कौन होगा? इसका निर्धारण करना मुश्किल है। यह विचार करने का प्रश्न है। इसलिए मेरे संपूर्ण शोध प्रबंध में 'किन्नर' शब्द का प्रयोग किया गया है। 15 अप्रैल 2014 को सुप्रीम कोर्ट द्वारा पास हुआ नलसा जजमेंट किन्नर समुदाय की दशा और दिशा सुधारने के लिए एक ऐतिहासिक फैसला माना जाता है। इस फैसले से किन्नर समुदायों को पहली बार 'तीसरे लिंग' के तौर पर पहचान मिली।

किन्नर चाहे किसी भी धर्म या जाति का हो , वह सब छोड़कर देवी बहुचरा माता की आराधना करता है। क्योंकि वह उनकी आराध्या देवी है। इसका पूजा पाठ करते हैं। बहुचरा मां का मंदिर गुजरात में है। एक किंवदंती के अनुसार बहुचरा माता की तीन अन्य बहनें हैं . नीलिमा मनसा और हनसा। सबसे बड़ी बहुचरा किन्नर बन गई तो उसकी बहनों को भी उन्होंने अपने जैसा बना लिया। इनकी संतानें नहीं थीं तो इन्होंने एक लड़के को गोद ले लिया। आज वह बहुचरा माता के मंदिर में निसंतान दंपत्ति संतान मांगने के लिए आते हैं।6 इस तथ्य को प्रमाण करने हेतु हम किन्नर को चार वर्गों में विभाजन कर सकते हैं जैसे : बुचरा, नीलिमा, मनसा और हंसा।

1.) बुचरा

बुचरा वर्ग के किन्नर जन्म से ही अविकसित जननांग के साथ पैदा होते हैं। ये जन्मजात न पुरूष न ही स्त्री।

2.) नीलिमा

यह किन्नर किसी कारणवश स्वयं को किन्नर बनाने के लिए सौंप देते हैं।

3.) मानसा

मनसा वे हैं जिनका शरीर पुरुष का एवं मन स्त्री का होता है।

4.) हंसा

ये शारीरिक कमी या यौनिक क्षमताओं में न्यूनता के कारण अपने को किन्नर मानने लगते हैं और उनके ही तरह जीवन व्यतीत करते हैं।

2.2.1 ऐतिहासिक परिस्थितियाँ और किन्नर समाज

प्राचीन काल के वेदों और पुराणों में सृष्टि की उत्पति और विकास की बात बतायी गयी है। किन्नरों का इतिहास बहुत प्राचीन है। स्त्री-पुरूष की उत्पत्ति के साथ – साथ तीसरे प्रकार के मनुष्य 'किन्नर' के बारे में विभिन्न प्रमाण तथा अवधारणाओं से दृष्टिगत होते हैं। अर्धनारीश्वर की संकल्पना के मूल में 'किन्नर' की अवधारणा को भी समीकृत किया जा सकता है। "ऋग्वेद में किन्नरों का उल्लेख मिलता है जब इंद्र स्वयं को स्त्री रूप में परिवर्तित कर लेते हैं"7।

शतपथ ब्राह्मण में यह सिद्ध किया गया है कि इंद्र वृषणव की पत्नी बने।8

प्राचीन समय में प्रसिद्ध भाषाविधान पाणिनी कृत अष्टाध्यायी में लिंगानुशासन प्राप्त होता है। इसमें निम्न श्लोक के माध्यम से स्त्री-पुरूष एवं किन्नर के भेद को स्पष्ट किया गया है।

"स्तनकेशवती स्त्री स्यालांशः पुरूषः स्मृतः
उभयोन्तरः यच्च नपुंसकः"9

इस श्लोक के माध्यम से लिंगानुशासन में स्त्री-पुरूष और किन्नर का अंतर दृस्तिगत होता है। जिस मनुष्य में स्तन और केश होते हैं वह स्त्री होती है वहीं रोयेवाला व्यक्ति पुरूष। जिनमें इन दोनों भेदों का अभाव हो या दोनों की भांति एक ही गुण उपस्थित हो उन्हें 'किन्नर' कहा जाता है।

इनके अतिरिक्त भी स्त्री-पुरूष में किन्नर संतान की उत्पत्ति के संबंध में महायोगी श्री गोरक्षनाथ द्वारा लिखित 'सिद्ध-सिद्यांत' पद्यति में बताया गया है कि,

"शुकराधिकेषु पुरूष रक्ताधिका कन्यका
समशुक्र रक्ताभ्यां नपुंसकः" 10

स्त्री-पुरूष संभोग के परिणामस्वरूप यदि पिता का वीर्य अधिक मात्रा में सिंचित हो जाता है तो पुरूष की उत्पत्ति होती है। वहीं अगर स्त्री का रज अधिक मात्रा में सिंचित हो जाए तो पुत्री की उत्पत्ति होती है

क्योंकि इसका प्रमाण हमें विज्ञान में भी मिलता है जब ‘XX’ मिलते हैं तो पुत्री का जन्म होता है और ‘XY’ मिलने पर पुत्र की प्राप्ति होती है।

जब स्त्री-पुरूष का समान रूप से वीर्य और रज सम्मिलित होता है , तब किन्नर संतान की उत्पत्ति होती है।

महर्षि मनु ने अपनी पुस्तक ‘मनुस्मृति’ में “शारीरिक शक्तियों को तीन सेक्स में विभाजित किया है। पहला पुरूष-बीज की प्रधानता से पुरूष शिशु की उत्पत्ति होती है, स्त्री बीज की प्रधानता से स्त्री शिशु होता है। जिसमें स्त्री-पुरूष में समान रूप से बीज हो तो किन्नर उत्पन्न होता है”।11

वात्स्यायन कृत्य कामसूत्र में किन्नरों को तृतीय प्रकृति की संज्ञा दी गई है जिसके नवम अध्याय में किंपुरुष एवं किंपुरुषियों का उल्लेख निम्न प्रकार मिलता है।

“द्विविधा तृतीया प्रकृतिः स्त्री रूपिणी पुरूषरूपिणी चः”12

तृतीय प्रकृति में इस प्रकार के दो मनुष्य आते हैं। पहला जिसमें स्त्री गुण अधिक हो उन्हें किंपुरूषी कहा जाता है , दूसरा जिसमें पुरुष गुण अधिक हो उन्हें किंपुरूष कहा जाता है।

बौद्ध और जैन धर्म के साहित्य में भी स्त्री-पुरूष और किन्नरों का अंतर बताया गया है।

जैन-दर्शन में मनुष्य की आत्मा को नौ-दुष्प्रवृत्तियाँ बंधन में डालती हैं जिनमें कर्म के आधार पर स्त्री, पुरूष तथा किन्नर में परस्पर भेद किया गया है। इसमें किन्नर भेद का संबंध मोहनीय कर्म जो स्त्री एवं पुरूष दोनों के साथ भोग की अभिलाषा उत्पन्न करें।

बौद्धों ने अपनी रचना सुत्तपिटक के अंतर्गत विमानवत्थु में कहा है - "चन्द्रभागानदी तीरे-अहोसी किन्नरी अर्थात् पर्वतीय क्षेत्र में चिनाव नदी के तटवर्ती स्थान पर किन्नरों का निवास था।" [13]

भारतीय प्राचीन ग्रंथों में एवं महाकाव्यों में किन्नरों की उपस्थिति के प्रमाण दृष्टिगत होते हैं । वाल्मीकि की रचना 'रामायण', तुलसीदास कृत 'रामचरितमानस', वेद व्यास कृत 'महाभारत' में किन्नरों की उपस्थिति दर्ज है। प्रजापति कर्दम के पुत्र की कथा वाल्मीकि कृत रामायण के उत्तरकांड में वर्णित है। एक बार राजा कर्दम का पुत्र इल अपने कुछ सैनिकों के साथ शिकार करने के लिए जंगल में गया। वहाँ वह शिकार करता हुआ एक पर्वत पर पहुँचा जहाँ भगवान शिव अपनी पत्नी पार्वती के साथ उन्हें खुश करने के लिए स्त्री रूप में विचरण कर रहे थे। उसी के प्रभाव से पर्वत पर उपस्थित सभी जीव-जंतु और राजा इल भी स्त्री रूप में परिवर्तित हो गए। राजा इल ने शंकर भगवान से पुनः पुरूष रूप में परिवर्तित करने का आग्रह किया परंतु शंकर भगवान ने ऐसा करने से इल राजा को इंकार कर

दिया। तबसे राजा इल एक माह पुरूष और एक माह सुंदर स्त्री के रूप में अपना जीवन यापन करने लगे।

सुंदर युवती के रूप में राजा इल एक दिन अपने सिपाहियों के साथ पर्वत विहार कर रहे थे। तभी चंद्रमा के पुत्र मुनि बुध ने उन्हें देखा। वे ऐसे रूप के प्रति आसक्ति से भर गए और उन्होंने देवयोनि में जाने के लिए राजा इल को जो कि स्त्री रूप में थे श्वेत पर्वत पर निवास के लिए आमंत्रित किया।

"अलकिंपुरूषी भूत्वा शैलरोधसी वत्सयध-आवासस्तु।
गिरावस्मिन मीनाक्षी शीघ्रमेव विधीयताम्म।।" [15]

रामचरितमानस में भी गोस्वामी तुलसीदास ने किन्नरों का उल्लेख किया है। राजा दशरथ ने कैकेयी को दिए गए अपने वचनानुसार राम को जब वनवास भेजा था तब भगवान राम पत्नी सीता और अनुज लक्ष्मण के साथ वनवास में चले गये थे । यह बात जब भरत को पता चलती है तो भरत अयोध्यावासियों के साथ चित्रकूट की ओर प्रस्थान कर देते हैं। जिनमें स्त्री-पुरूष के साथ-साथ किन्नर भी थे। भगवान राम के आदेशानुसार सभी अयोध्यावासी स्त्री-पुरूष तो अयोध्या की तरफ गए लेकिन किन्नर तटस्थ रूप से वहीं चौदह वर्ष तक रूके रहते हैं। जब चौदह वर्ष पश्चात् भगवान राम वापस अयोध्या की ओर लौट रहे होते हैं तभी चित्रकूट में किन्नरों से मिलते हैं। भगवान राम उनसे प्रश्न भी करते हैं कि आप लोग अयोध्या

वापस क्यों नहीं गए? किन्नर उत्तर देते हैं कि आप स्त्री-पुरूषों को ही अयोध्या वापस होने के लिए बोले थे इसलिए हम यहीं रूके। उनके उत्तर से प्रसन्न होकर भगवान राम ने उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहा कि आप लोग कलियुग में जिसे जैसा आशीर्वाद देंगे वैसा ही सच होगा। ऐसा प्रसंग रामचरितमानस में निम्न चैपाई के माध्यम से उद्धृत किया गया है।

" नभ दुदंभी बाजाहि विपुन गंधर्व-किन्नर गावहिं।
नचहि अपछरा वृंद परमानंद सुर मुनि पावहिं।।
भरतादि अनुज विभिविनांगद हनुमानादि समेत ते।
ग्हे छत्र-चामर भजन धनु असि चर्म साक्ति विराजते।।"[16]
"जथाजोगु करि विनय प्रणामा।
बिदा किये सब सानुज रामा।।
नारि पुरूष लघु मध्य बडेरे।
सब सन्यामि पानिधि फेरे।।" [17]

जब सीता का स्वयंवर हुआ उस समय श्रीराम द्वारा धनुष-भंग किए जाने का संदर्भ रामचरितमानस में वर्णित है। धनुष-भंग होते ही दुदुंभी बजने लगी, फूलों की वर्षा होने लगी, नाच-गाना होने लगा।

"ब्रम्हाद्रिक सुर सिद्ध मुनीसा।
प्रभूहि प्रसंसहि-देहि असीसा।।

बरिसहि सुमन रंग बहुमाना।

गावहिं किन्नर गीत रसाना।।"[18]

अर्थात् ब्रह्मा आदि अनेक देवता, सिद्ध, मुनि, भगवान राम की प्रशंसा करने लगे और उनकी प्रशंसा करते हुए आशीर्वाद दिया । किन्नर गान से वातावरण में मधुरता की ध्वनि गुंजायमान होने लगी।

महाभारत के अंतर्गत भी वेदधाम जी ने शिखंडी के रूप में किन्नर को चित्रित किया है तथा अर्जुन का बृहन्नला, किन्नर का उल्लेख मिलता है।

राजा द्रुपद के यहाँ एक कन्या ने जन्म लिया जिसका नाम शिखंडी रखा गया जिसके जन्म के समय ही एक भविष्यवाणी हुई कि इस कन्या का पालन-पोषण एक पुरूष के रूप में किया जाए न कि एक स्त्री के समान। इससे वह कन्या शारीरिक रूप से तो स्त्री हुई परंतु उसके चरित्र के अंतर्गत पुरूष के गुण समाहित हो गए। इसे ही शिखंडी को किन्नर के रूप में पहचान प्राप्त हुई। महाभारत के युद्ध के समय भीष्म-पितामह पांडवों के लिए काल बने हुए थे उन्हें युद्ध में पराजित करना असंभव था। पांडवों ने भीष्म पितामह से ही उनके पराजित होने का उपाय पूछा। भीष्म पितामह ने शिखंडी के बारे में बताया है कि वह स्त्री था बाद में वह पुरूष हो गया।

"शिखंडी समरामर्षी सुरश्व सुमितिन्अजय

यथा भवन्स्त्री पूर्व पश्चात् पुरषत्व समाजता ||"[19]

इस प्रकार भीष्म पितामह ने स्वयं को पराजित होने का उपाय बताया कि वह स्त्री के सामने शस्त्र नहीं उठाएंगे और अर्जुन पीछे से तीर चला देगा।

"शिखंडिन तमासाध्य भरतानां पितामहः।

अवत्वयृतज्ज संग्राम स्त्रीत्व तस्यात्रुसंस्मरनः।।"[20]

अर्थात् वह शिखंडी से इसलिए युद्ध नहीं करते क्योंकि वह एक किन्नर है।

महाभारत के अन्य जगह भी किन्नर का वर्णन किया गया है । एक प्रसंग जिसमें यह कहा गया है कि अर्जुन अयूपी का पुत्र 'अरावन' एक किन्नर था। इसलिए किन्नरों का एक ओर नाम अरावनी भी लिया जाता है। अरावनी का शाब्दिक अर्थ अरावन के अनुयायी होता है। कौरवों से युद्ध जीतने के लिए पांडवों की माँ काली के चरणों में राजकुमारी की बलि देनी थी जिसके लिए स्वयं अरावन अपनी बलि देने को तैयार रहता है। अरावन अपनी मृत्यु से पहले विवाह करना चाहता है। कोई भी कन्या एक दिन के सिर्फ अरावन की स्त्री बनना मंजूर नहीं करती । इसलिए स्वयं श्रीकृष्ण मोहिनी का रूप धारण कर अरावन से विवाह करता है। इसी कारणवश तमिलनाडु के प्रसिद्ध कुवागम मेले में किन्नर की शादी अरावन से की जाती है और उसके बाद विधवा का वस्त्र पहनकर विदा लेती है।

संस्कृत भाषा के महाकवि कालिदास ने अपनी कृति "कुमारसंभव" में किन्नरों का वर्णन किया है।

"यः पूरयन कीचकरन्द्रगानू दरीसुखोत्येन-समीरणेन।

उद्गास्यतमिच्छाति किन्नराणां तान- प्रदाचित्वामिवोप-गुन्तुम।"[21]

अर्थात् किन्नरियाँ अपने नितम्बों तथा स्तनों के भार से पीड़ित होते हुए भी अपनी स्वाभाविक मंद गति को नहीं त्यागती। यद्यपि मार्ग जिसपर शिलाकार हिम जम गया है। उनकी अंगुली एवं एड़ियों को कष्ट दे रहा है।

महाभारत में अन्य जगह भी किन्नर का उल्लेख किया गया है। अर्जुन अपने पिता इंद्र से मिलने जाते हैं। वहाँ अप्सरा उर्वशी उन्हें दिखाई देती है। वह उन्हें माँ के संबोधन से प्रणाम करते हैं। उर्वशी को यह अच्छा नहीं लगता वह इसे अपमान समझती है। वह अर्जुन को श्राप देती है कि तुम 'क्लीव' बनोगे। इसी कारण जब पांडव अज्ञातवास रहते थे तब अर्जुन को विराट के सामने 'बृहन्नला' बनकर जाना पड़ा।

रीतिकालीन कवि सबलसिंह चैहान द्वारा दोहा-चैपाई शैली में लिखे गए महाभारत में 'बृहन्नला' के प्रसंग का वर्णन किया गया है। धर्मराज युधिष्ठिर, अज्ञातवास से समाप्ति के लिए व्यास जी से इसका उपाय पूछते हैं। व्यास के सामने नारायण प्रत्यक्ष होकर अज्ञातवास के उपाय के संबंध में कहते हैं कि -

“दण्ड प्रणाम नृपति उठ कीन्हा।
मुनिवर विहंसी लाभ उर लीन्हा।।
चरिउ बंधु द्रौपदी रानी।
दरसेउ चरण व्यास के आनी।।” 22

2.2.2. मुगलकाल और किन्नर समाज

भारत में लोदी वंश के बाद मुगल वंश का शासन हुआ। सन् 1526 ई. में बाबर और इब्राहीम लोदी के बीच पानीपत का प्रथम युद्ध हुआ जिसमें बाबर ने जीत प्राप्त की और अपना वर्चस्व कायम रखा । मुगलकाल में सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक रूप से काफी उलटफेर हुआ। बाबर का शासन सन् 1526 से लेकर 1530 तक चला। बाबर की मृत्यु के पश्चात् उनके सुपुत्र उत्तराधिकारी हूमायूँ ने राजगद्दी संभाली। हूमायूँ का शासनकाल सन् 1530 से 1540 तक चला फिर शेरशाह से युद्ध में हारने के कारण हूमायूँ की गद्दी छीन गयी। हूमायूँ ने फिर आक्रमण कर सन् 1555 से 1556 तक अपना साम्राज्य कायमकर लिया। एक दिन लाइब्रेरी की सीढ़ियों से गिरकर हूमायूँ का देहांत हो गया। तत्पश्चात् गद्दी का अधिकार तेरह वर्ष तक अकबर के हाथ में आ गया।

अकबर अपने अनेक कार्यों द्वारा इतिहास में नवाचार के लिए प्रसिद्ध है। उसने उदारवादी नीतियाँ अपनाई। वास्तव में इतिहास के पन्नों को अगर पलट कर देखा जाये तो मुगल शासन किन्नरों का स्वर्णयुग माना जाता है। अकबर ऐसे राजा के रूप में उभरे कि उन्होंने अपने दरबार में किन्नरों को कई कार्य सौंपे । इस काल में किन्नरों ने महिलाओं की सुरक्षा की जिम्मेदारी भी उठाई तथा अदालतों में महत्तवपूर्ण पदों को सुशोभित भी किया । किन्नर सेना ने कई युद्धों में विजय दिलाने की भूमिका भी अदा की।

मुगल साम्राज्य में किन्नरों की काफी प्रतिष्ठा थी। उस समय कई सेनाओं के जनरल और कई रानियों के पर्सनल बॉडीगार्ड के रूप में उनकी नियुक्ति हुई थी । वे डाकियों और गुप्तचरों का भी कार्य करते थे। यहाँ तक कि औरंगजेब ने अपने पिता शाहजहाँ को परेशान करने के लिए किन्नर की नियुक्ति किया था।

उस समय राजा अनेक विवाह करते थे। कई रानियाँ तो ऐसी थीं कि जिनके पास राजा दो, तीन बार ही जा पाता था। शारीरिक इच्छा की पूर्ति के लिए रानियाँ मंत्री और सेना के व्यक्ति के साथ शारीरिक संबंध बनाती थी। इस सुरक्षा की दृष्टि से किन्नरों को उनके पास नियुक्त किया गया। मुस्लिमों में हरम और हिंदु राजाओं और सामंतों में अंतःपुर का विकास किया गया। जहाँ रानियाँ निवास करती थीं तथा हरम में या तो

केवल रानियाँ या फिर बादशाह ही जा सकता था। हरम की सुरक्षा का उत्तरदायित्व किन्नरों को दिया जाता था।

किन्नरों के कहने पर राजा, रानी की जीवन लीला भी समाप्त कर सकता था। बादशाह अकबर के बाद अन्य सभी मुगल शासकों ने इसी प्रक्रिया का निर्वहन किया। इन मुगल शासकों तथा सामंतों की रानियाँ बड़ी संख्या में नौकर, ऊँट एवं घोड़े रखती थी। जिस पर वह अपने आय का मुख्य भाग व्यय भी करते थे। उनका हरम महल में चारों तरफ से अच्छी तरह घिरा होता था। उसमें कई कक्ष होते थे। प्रत्येक कक्ष में रानियाँ निवास करती थीं।

हरम में आभिजात्य वर्ग की स्त्रियाँ पर्दे में ही रहती थीं। किसी बाहरी व्यक्ति की दृष्टि उन पर न पड़े इस उद्देश्य से कई दासियों और किन्नरों को वहाँ नियुक्त किया जाता था। स्त्रियों की सुरक्षा हेतु बूढ़ी औरतों और बिना दाढ़ी मूछ के किन्नर रहते थे जो आवश्यकता पड़ने पर उनके लिए उचित साम्रगी को लाते भी थे। भोजन, पानी और अन्य रख-रखाव में किन्नरों की अहम् भूमिका होती थी। प्रवेश द्वार पर किन्नरों को नियुक्त किया जाता था जो घुसपैठियों को रोकते थे। किसी रानी की बीमारी होने की दशा में हकीम को भी पूरी सावधानी के साथ ही हरम में प्रवेश कराया जाता था कि वह किसी को देख न ले।

जियाउद्दीन बरनी ने अपनी रचना "तारीखे फीरोजशाही" में बताया है कि राजपूत शासकीय परिवार से संबंधित अमीर वर्ग मुस्लिम अमीर वर्ग के लोगों की तर्ज पर ही बहुविवाह करते थे। युद्ध की समाप्ति पर वह सुन्दर दिखने वाली युवतियों को अपनी रानी बना लिया करते थे। कई बार वे बस सुंदर युवती का वर्णन सुनकर ही उसे पाने की इच्छा भर से युद्ध करते थे। उन्होंने भी अनेक स्त्रियाँ रखना प्रारंभ कर दिया था जिसे वे अपना गौरव भी मानते थे। जिस स्थान पर स्त्रियाँ रहती थी वह अंतःपुर कहलाता था। इसकी रक्षा के लिए निष्ठावान स्त्री तथा किन्नरों को दायित्व सौंपा जाता था। वे अंतःपुर को सुव्यवस्थित और सुनियोजित ढंग से संचालित करते थे।

मुगलों और राजपूतों के तर्ज पर तुर्की-साम्राज्य में भी अंतःपुर की देखभाल करने के लिए किन्नरों की नियुक्ति की जाती थी। तुर्की साम्राज्य में दो प्रकार से किन्नरों को विभाजित किया गया। पहला सफेद किन्नर, दूसरा काले किन्नर। बाल्कन राज्य से जो किन्नर लाए गए थे वे गौरे थे। उन्हें उचित शिक्षा देकर रानी तथा खास लोगों की सेवा में ही नियुक्त किया जाता था। जबकि काले किन्नर निम्न स्तर के अधिकारियों की सेवा के लिए नियुक्त होते थे। मंगौली शासकों ने भी हरम की सुरक्षा के लिए किन्नरों को नियुक्त किया था।

अंततः यह कहा जा सकता है कि प्राचीन हिन्दु शासकों और मुगल बादशाहों के शासनकाल में किन्नरों का महत्वपूर्ण स्थान मिला था।

जौनपुर में भर्कीशाही राजवंश ने शासन किया जिसकी स्थापना मलिक सरवर ने की जो एक किन्नर था।

खिलजी वंश ने भारत पर काफी समय तक राज किया। खिलजी वंश के प्रमुख शासकों में अलाउद्दीन खिलजी का नाम लिया जाता है। उनके शासनकाल में जब उनके द्वारा खंभान बादशाह पर आक्रमण किया गया तो यह आक्रमण गुजरात सैन्य अभियान के अंतर्गत किया गया था तभी अलाउद्दीन खिलजी को मलिक काफूर नाम का एक दास मिला जो किन्नर था। अलाउद्दीन खिलजी मलिक काफूर से प्रभावित होकर उसे वे एक हजार दीनार में खरीद लाये । इसी कारण वे 'हजार दीनारी' नाम से भी प्रसिद्ध हुआ जो किन्नर अलाउद्दीन खिलजी के हरम में रहते थे उन्हें 'खोजा', 'क्लीव', एवं 'ख्वसरा' आदि नामों से पुकारा जाता था।

महेन्द्र भीष्म ने अपने एक उपन्यास 'किन्नर कथा' में अलाउद्दीन खिलजी के उस प्रसंग को रेखांकित करके यही दिखाया है कि गुजरात में किन्नरों की इष्टदेवी 'बहुचरा' है। उन्हें निम्न प्रकार से वर्णित किया है -

"अलाउद्दीन खिलजी एक बार बहुचरा माता के मंदिर को विध्वंस करने अपनी सेना को लेकर चल पड़ा। वहाँ पहुँचकर सैनिकों ने मंदिर की मुर्गियाँ

खा लीं। बहुचरा माँ क्रोधित हो गयीं । उन्होंने मुर्गियों को आदेश दिया जिससे जिन सैनिको ने मुर्गि खाई थी वे मुर्गियाँ सैनिकों का पेट चीरकर बाहर आ गईं और सैनिकों की म्रत्यु हुई तथा जो अन्य सैनिक थे वे माता से जीवनदान की याचना करने लगे। देवी माँ ने उन्हें किन्नर रूप प्रदान करके अपना अनुयायी बना लिया"।[23]

मेतना विश्वविद्यालय की प्रोफेसर बनिता एवं रूट ने अपनी पुस्तक "सेम सेक्स लव इन इंडिया" में अलाउद्दीन खिलजी और उनके वफादार मलिक काफूर के समलैंगिक संबंधों की पुष्टि करते हुए लिखा है - "खिलजी द्वारा मलिक काफूर को संतान की लड़ाई के बाद खरीदा गया था जिसके पश्चात् सुल्तान खिलजी, मलिक काफूर और अलाउद्दीन खिलजी ने समलैंगिक संबंध बनाये और प्रसन्न होकर खिलजी ने काफूर को अपना प्रधान सेना नायक पद पर नियुक्त किया" [24]

2.2.3. ब्रिटिशकालीन किन्नर समाज

मुगल शासन के पतन के बाद किन्नरों की दशा दयनीय हो गई। मुगलों के बाद अंग्रेजों का आधिपत्य हुआ और उन्होंने रक्षक की भूमिका किन्नरों से छीनकर उन्हें अपराधी घोषित कर दिया। उनके ही घरों और ज़मीनों से बेदखल कर तथा कई प्रकार से प्रताड़ित किया। अंग्रेजों ने खुद के नीति, कानून बनाये और उसे देश पर लादने की कोशिश की ।

औपनिवेशिक काल के पूर्व में भारत के कानून को समझने के लिए तत्कालीन प्राच्य विज्ञानियों ने मनुस्मृति, जातिगत ऊँच-नीच की अवधारणा और उससे जुड़ी हुई धर्म की व्याख्या को आधार बनाया और ऊँची जातियों के लोगों को आपराधिक न्याय प्रणाली में उच्च पदों पर स्थापित किया।

भारत में ब्रिटिश गवर्नर जनरल लार्ड -डलहौजी ने 1848 में व्यंपगत के सिद्धांत दिया राज्य हड़प नीति जिसे अंग्रेजी में "द डॉक्टिरिन ऑफ लैप्स" कहा जाता है। इस नीति का मुख्यतः उद्देश्य उत्तर भारत के राज्यों को ब्रिटिश शासन के अधीन लाना था। इस नीति के अंतर्गत स्वतंत्र राज्यों के राजा जब निःसंतान होते थे तब वे किसी संतान को गोद लेने में असमर्थ होते थे । अंग्रेज़ शासन उसके बाद उस पर अपना आधिपत्य कायम कर लेता था । अंग्रेज़ लोग किन्नरों के जन्मदाता परिवार को अपने साथ नहीं रखते थे। इसके अतिरिक्त 'द ट्राइब्स एक्ट अट्ठारह सौ इकहत्तर' में किन्नरों को अपराधिक जनजाति घोषित कर दिया गया । इस अधिनियम के द्वारा किन्नरों को स्त्री की तरह रहने, नृत्य करने , वेशभूषा पहनने पर अपराधी घोषित कर दिया जाता था। इस 'जनजाति' को जन्मजात अपराधी घोषित कर दिया गया। लगभग 180 वर्ष तक उनकी स्थिति वही रही। समाज में किन्नरों को अपराधी की दृष्टि से देखा जाने लगा।

अंग्रेज़ी शासक निरंतर अपने तुष्टिकरण की नीतियों में उलटफेर करके इनका शोषण और सेवाओं से वंचित करते रहे। 1871 में बनाए गए इस अधिनियम में समय पर संशोधन कर लगभग 190 जनजातियों को इसके तहत अपराधी घोषित कर दिया गया था। सुरक्षा सेवा में नियुक्त होने वाले व्यक्तियों को यह बताया जाता था कि यह जनजाति अपराधी है। स्वाधीनता संग्राम में भी किन्नरों ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका दर्ज किया था। ब्रिटिश सरकार ने इसलिए इन पर अधिक नियंत्रण पाने हेतु जनजाति अधिनियम 187 पारित करके इस पूरे समुदाय को अपराधी घोषित-कर दिया। ऐसे अधिनियम स्वतंत्रता संग्राम को शांत करने का तरीका था। जिसे आज़ादी पश्चात् सन् 1949 ई. में समाप्त कर दिया गया।

देश ब्रिटिश सरकार से तो आज़ाद हो गया लेकिन उनके नियम कहीं न कहीं भारतीय सरकारों पर भी उसी तरह हावी रहे जिसके कारण किन्नरों को वर्ष 2014 तक संघर्षरत रहना पड़ा। सर्वप्रथम 12 नवंबर 2009 में किन्नरों को अन्य में जोड़कर चुनाव आयोग ने इन्हें मतदाता पहचान पत्र वितरित किया। सर्वप्रथम जनगणना 2011 में किन्नरों की गणना भी स्त्री-पुरूष की तरह अन्य में की गई। 15 अप्रैल 2014 को उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति के. एस. राधाकृष्णन और न्यायमूर्ति ए. के. सीकरी

की खंडपीठ ने राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण(नलसा) के मामले में ऐतिहासिक निर्णय देकर स्त्री एवं पुरूष के अतिरिक्त अन्य के रूप में किन्नरों को पहचान दिलवाई। ऐसे व्यक्ति जो आधुनिक शल्यक्रिया के द्वारा अपना लिंग परिवर्तन करवा लेते हैं उनको भी इस निर्णय और निर्देश के अंतर्गत अपने आदेश में स्पष्ट कहा कि किन्नरों को अधिक अवहेलना विभेदीकरण का शिकार होना पड़ता है। उनके स्वतंत्र अस्तित्व के लिए अलग से कोई अधिकार नहीं दिया गया । दैहिक स्वतंत्रता से संबंधित अधिकारों को प्रवर्तनीय होना चाहिए। यह अति आवश्यक है कि संविधान के अनुच्छेद 51/252 के अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय कानूनों और कन्वेशनों के अनुरूप संसद भी कानून बनाए। राष्ट्र के विकास में लैंगिक आधार पर बंटवारा नहीं होना चाहिए । किन्नरों की सहभागिता को भी सुनिश्चित करना चाहिए ।

2.2.4. पाश्चात्य देशों में किन्नर-इतिहास

पश्चिम के साहित्य में समलैंगिकता विषय की चर्चा सोलहवीं शताब्दी के पश्चात् आरंभ हुई थी । यूरोप के देश अमेरिका, ब्रिटेन आदि ऐसे संबंधों को गैर कानूनी रूप से देखा करते थे। बीसवीं शताब्दी के मध्य में यूरोपीय चिंतक, साहित्यकारों, समाज सुधारकों, दार्शनिकों का ध्यान इसकी तरफ गया। अमेरिका में समलैंगिकों ने अपनी कानूनी मान्यताएँ,

नौकरी और निवास स्थान के लिए अपने अधिकारों के लिए माँग उठायी जिससे यह मुद्दा सामाजिक होने के साथ-साथ राजनैतिक भी हो गया और किन्नरों के अधिकारों को संरक्षित किया गया ।

सन् 1920 ई. से पूर्व पुरूषों के समलैंगिक होने का आधार पाया जाता था लेकिन 1920 के पश्चात् समलिंगी महिलाओं के बारे में भी जानकारी प्राप्त हुई। समलैंगिकता एक मुख्य चर्चा के रूप में उभरी तथा समाज के सभी वर्गों को लाभ पहुंचाने तथा समानता के अधिकार के लिए प्रोत्साहित किया गया ।

अमेरिका में सन् 1969 ई. में पुलिस ने 'गे'-बार में छापेमारी की जिससे आम जनता के बीच समलैंगिकता की जानकारी स्पष्ट हो गई। अमेरिका के मानसिक चिकित्सकों ने 1973 ई. में समलैंगिकता को एक मानसिक रोग माना। समलैंगिक भेदभाव को ध्यान में रखते हुए न्यायालय ने भेदभाव पर रोक लगाई।

यूरोप तथा अन्य विकसित देशों में तो इन्हें नौकरी और निवास पाने में सफलता मिल गई लेकिन अन्य देशों का रवैया इनके साथ हिंसात्मक, बर्बर और एक रोगी के रूप में देखने को मिलता है। समाज से इन्हें बुरे व्यवहार का निरंतर सामना करना पड़ा। समय के साथ इन्हें समाज तथा कानून दोनों की तरफ से अधिकार प्राप्त होते गए। सन् 1995 में अल्वानिया

के कानून में भी परिवर्तन हुआ और 2001 में एक 'गे' युग्म ने विवाह भी किया जो कानूनी रूप से प्रामाणिक भी था। इक्कीसवीं शताब्दी में लोगों का नज़रिया भी इनके प्रति संवेदनशील होने लगा। इनके प्रति सकरात्मक रूप में चर्चाएँ प्रारंभ हो गईं जिससे समानता के अधिकार को बल मिला।

इंडोनेशिया में विश्व ट्रांसजेंडर सम्मेलन 2006 में इन्हें लिखित पहचान मिली और 2006 में इन्हें एच. आई. वी. एड्स इंटरनेशनल कांफ्रेंन्स में टोरंटो में भारत से एक किन्नर लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी को निमंत्रण मिला। ब्रिटेन में समानता का कानून 2010 ई. में बनाया गया। यूरोपियन यूनियन के तहत 27 देशों को 2006 में 'हेट क्राइट प्रिवेशंन एक्ट' बना और 2009 में अमेरिका में भी यह कानून बनाया गया। निरंतर संघर्षरत रहने से किन्नर की स्थिति बदल गई और इन्हें अन्य आम नागरिकों की तरह सब अधिकार प्राप्त हो गए।

2.3. केरल में किन्नरों की स्थिति

तरक्की के कई पैमानों पर केरल भारत के अन्य प्रदेशों से काफी आगे रहा है। साक्षरता दर की बात हो या प्राथमिक शिक्षा के स्तर की, इस प्रदेश के आंकड़े लंबे समय से पूरे देश के लिए उदाहरण रहे हैं। हाल ही में केरल

ने एक और कीर्तिमान अपने नाम कर लिया है। किन्नरों के अधिकारों और स्वाभिमान को सुरक्षित करने के लिए प्रथक 'किन्नर नीति' बनाकर केरल ऐसा करने वाला देश का पहला समानतावादी राज्य बन गया है। पितृसत्तात्मक समाज में पुरूषों का ही समाज में वर्चस्व रहता है। तृतीय लिंग के व्यक्तियों को समाज में अधिकारों से हीन कर उन्हें कमजोर बनाकर समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता रहा। परिवार, रिश्ते, शिक्षा, रोजगार, आवास, सुविधाऐं, अधिकार आदि इनके लिए बेमानी हो जाते हैं। इन सब के अभाव में ये नारकीय जीवन जीने के लिए बाध्य हो जाते हैं। किन्नरों की सामाजिक बहिष्कृति एक ख़ास तरह की मनोवृत्ति के कारण होती है जिसे 'ट्रांस्फोबिया' कहा जाता है; "तीसरे लिंग के प्रति भय, लज्जा, क्रोध, हिंसा, पूर्वाग्रह, भेदभाव आदि नकारात्मक भावों के सम्मिश्रण से बना यह 'ट्रांस्फोबिया' तीसरे लिंग के जीवन को नरक बना देता है"[25]।

पिछले दशक में केरल में ''लैंगिक समानता'' पर प्रथम अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया गया। 2008 में 12 से 14 नवंबर तक चले इस सम्मेलन के उद्घाटन समारोह के दौरान केरल के मुख्य सचिव जिजि थॉमसन ने प्रदेश की ''किन्नर निति'' की एक प्रति विख्यात किन्नर कार्यकर्ता 'अक्काई पद्मशाली' को भेंट करते हुए इस नीति का अनावरण किया।

2.3.1. आम जनता और केरल के किन्नर समुदाय

'किन्नर' नाम सुनते ही एक लज्जा का भाव अधिकतर लोगों के मस्तिष्क में कोंधने लगता है। अन्य राज्यों की तरह केरल में भी 'किन्नर' लोगों के साथ अव्यवहार किया जाता है, उनका उपहास भी उड़ाया जाता है। किन्नर लोगों पर मज़ाक उड़ाने के लिए उन्हें चान्तुपोट्, ओन्पत् आदि नामों से पुकारा जाता है। यह व्यवहार किन्नर को अपने बाल्यावस्था से लेकर जीवन के अंतिम क्षणों तक सहना पड़ता है।

2007 में बेन्नी पी. नायरम्बलम् के पटकथा लेखन में मलयालम के फिल्म निदेशक लालजोस चान्तुपोटु नाम से स्त्रीत्व चरित्र वाले राधाकृष्णन को प्रस्तुत किया।[1] लेकिन यह फिल्म केरल के किन्नर लोगों के ऊपर एक चोट थी । लोग उन्हें 'चान्तुपोटु' नाम कहकर मज़ाक उड़ाने लगे ।

केरल में किन्नर लोगों द्वारा परिवार से बाहर आकर समाज में कार्य करने की शुरुआत सबसे पहले 2009 में हुई है। केरल में मुख्यधारा के समाज में आज किन्नर समाज की पहचान विशिष्ट है। सेलिब्रिटी मेकअप आर्टिस्ट से लेकर फिल्म, साहित्य, लोकतंत्र के चुनाव आदि समाज के मुख्यधारा के समाज में अपने अस्तित्व को बचाने का श्रेय इन लोगों को जाता है। रंज्जु रंझिमार, सूर्या ईषान, शीतल श्याम, डॉ. प्रिया, सादिया,

अंजली आदि इसके उदाहरण हैं। 2000 से लेकर अब तक के घटनाक्रम को विवेचित करने पर यह देखने को मिलता है कि केरल के लोगों को किन्नर समाज के प्रति पहले जो दृष्टिकोण था वह काफी हद तक बदल गया है जिससे समाज में अब किन्नर भी इंसानों का जीवन व्यतीत कर सकते हैं ।

2.3.2. केरल की सरकारी नीतियाँ और किन्नर

किन्नर समुदाय को समाज की मुख्यधारा में शामिल करने के उद्देश्य से केरल राज्य की वामपंथी सरकार ने एक साथ कई सारे कार्यक्रमों को प्रारंभ किया है। केरल सरकार ने लैंगिक अल्पसंख्यक समूह को सामाजिक कलंक मानने की सोच और उनसे होने वाले एकतरफा भेदभाव को समाप्त करने के लिए 'किन्नर नीति' की शुरुआत कर दी है। राज्य के चीफ सेक्रटरी जीजी थोमसन ने 'स्टेट पॉलिसी फॉर ट्रांसजेंडर इन केरल 2015' के दस्तावेज़ों का उद्घाटन किया।

केरल में 'सहज अल्टरनेट लर्निंग सेंटर' खोला गया है। शुरूआत में यहाँ दस किन्नर छात्र थे। सेंटर की स्थापना करने वाली सामाजिक कार्यकर्ता विजयराजा मल्लिका कहती है - "यह सेंटर उन किन्नर लोगों के लिए है, जिन्होंने बुरे व्यवहार के कारण स्कूल छोड़ दिया या फिर उन्हें उनके परिवार या स्कूल प्रशासन ने निकाल दिया।"[26]

केरल में 2019 में कोच्चि मेट्रो रेल लिमिटेड ने शैक्षणिक योग्यता और अनुभव के आधार पर किन्नर कर्मचारियों की नियुक्ति की है।

2018 में केरल सरकार ने आदेश जारी कर रहा है कि राज्य के विश्वविद्यालयों और मान्यता प्राप्त कॉलेजों में किन्नर छात्रों को अब आरक्षण दिया जाएगा। सरकार के मुताबिक विश्वविद्यालयों और राज्य के मान्यता प्राप्त कला एवं विज्ञान कॉलेजों में हर पाठ्यक्रम के लिए दो सीट विशेष तौर पर किन्नरों के लिए आरक्षित की है। इसी के अनुसार महाराजा कॉलेज एर्णाकुलम, सेंट तेरेसा कॉलेज एरणाकुलम , मलबार क्रिस्तियन कॉलेज कोषिकोड आदि विख्यात कॉलेजों में किन्नर बच्चे अध्ययन कर रहे हैं।

२० जुलाई २०१५ में केरल विधान सभा में उस समय के समाजिक मंत्री डॉ. एम. के. मुनीर ने किन्नर लोगों से संबंधित सरकारी दस्तावेजों में एमएक्स रेखांकित करने का आहवान किया।इसके अतिरिक्त किन्नर कल्याण बोर्ड भी स्थापित करने का कार्य किया। 2015 से केरल के नया समाज कल्याण मंत्री के. के. शैलजा टीचर ने किन्नरों के लिए बहुत उल्लेखनीय कार्य करने का प्रयास किया। केरल के समाज कल्याण विभाग द्वारा 'सेक्स पुनर्व्यवहार सर्जरी' के लिए दो लाख की वित्तीय सहायता का प्रावधान किया गया ।

केरल सामाजिक न्याय विभाग ने किन्नर समुदाय के सदस्यों के लिए एक आश्रम गृह 'तनल' का निर्माण किया है। रहना, भोजन और कानूनी सहायता 'तनल' में मुफ्त होगी।

एक और गर्व की बात यह है कि भारत की पहली किन्नर चिकित्सक है केरल की डॉ. प्रिया जी ।

2.3.4. केरल साहित्य के क्षेत्र में किन्नर

यदि केरल के साहित्य की बात करें तो किन्नर विमर्श को मुख्यधारा के साहित्य से कई दशकों तक दूर रहना पड़ा । लघुकथा के क्षेत्र में माधवीकुट्टी का 'नपुसंगड़म', एम. पी. नारायण पिल्लै का 'हिजड़ा', इन्दुमेनोन का 'हिजड़ा का बच्चा', प्रमोद राम का 'च्छेदाशंजीवितम्' और 'रतिमाताविन्दे पुत्रन्' आदि किन्नर जीवन पर आधारित पहली कदम है। उपन्यास के क्षेत्र में एम. एम. मेनोन के 'हिजड़ा', दिलीप कुमार के 'बुधसंक्रमण', एस. बालभारती के "अवन + अवल = अत्" आदि भी प्रमुख रहा।

1990 के समय से लेकर किन्नरों के बारे में चर्चाएँ उभरकर आने लगी है । षाजी जोसेफ द्वारा संपादित मून्नाम लिंगम् लिंग नीतियुडे निलविलिकल (तीसरा लिंग लिंग अन्याय की पुकारें) में ऐसा लिखा गया

है कि पुरुषों को प्रथम लिंग ए स्त्रियों को द्वितीय लिंग और इन दोनों में न आने वालों को तृतीय लिंग के रूप में मान्यता प्रदान की गयी है। मलयालम की प्रमुख महिला कथाकार माधवीकुट्टी की कहानी है 'नपुंसकङ्ङ्ल'। आम समाज में किन्नरों की हालत का चित्रण इसमें है। समकालीन लेखिकाओं में रति के विविध पहलुओं को अपनी रचनाओं में समेटने वाली लेखिका है इंदु मेनोन। उनकी कहानी है 'हिजड़ायुडे कुट्टी' (हिजड़े का बच्चा)। मलयालम में किन्नर पर रचित कहानियों में अपनी शारीरिक एवं मानसिक परिस्थितियों को समझकर समाज से तिरस्कृत जीवन जीने के लिए अभिशप्त मनुष्यों का ह्रदयविदारक चित्रण द्रष्टिगत होता है।

2.4. किन्नर समुदाय की संस्कृति

लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी ने किन्नर समाज की सांस्कृतिक परिभाषा कुछ इस प्रकार दी है - " Hijas are the oldest ethenic – dangended community of India"[27] किन्नर भारत का सबसे पुराना किन्नर समुदाय हैं। भारतीय परिप्रेक्ष्य में किन्नर समुदाय की परिकल्पना शारीरिक कम और सांस्कृतिक अधिक है। किन्नर समुदाय की संस्कृति के संबंध में सेरेना नंदा ने 'निदर मेन नोर विमेन' (Neither man and Woman) नामक एक कविता लिखी है। भारत में सांस्कृतिक स्तर पर भी क्षेत्र के साथ किन्नरों की संस्कृति में विविधता है। उत्तर भारत में इनके

जीविका के अनुसार इनको लिंग, किन्नर व कोटी नामों से चित्रित किया जाता है।

दक्षिण भारत में अरवानी और हिजड़ा कहा जाता है। इस समुदाय को लोक नृत्य मंच पर 'भाड मौसी' और 'लौडा नाच' आदि नाम से हम जानते हैं। पश्चिम भारत में 'बयल्या व नाच्या' के नाम से जानते हैं। किन्नर समुदाय भारत में सभी इलाकों में फैला है। इनकी समलैंगिकता व संस्कृति परंपरा भारत में अनूठी है।

सलीम किदवई ने अपनी पुस्तक 'सेम सेक्स लव इन इंडिया' में लिखा है - ''हमारे समाज में समलैंगिकता के विमर्श का मुद्दा बनवाने से पहले ही स्वीकृति मिल चुकी थी।''[28]

सेरेना नंदा ने अपनी पुस्तक Neither man and Woman की भूमिका में लिखा है- ''Onophobia is the west amd the tolenance in the east"[29] अर्थात् पश्चिम में इसके प्रति डर रहा है और पूर्व में इसके प्रति सहिष्णुता रही है।

2.4.1. किन्नर समाज के 'रीति- रिवाज़ और परंपरा

किन्नर समुदाय में प्रवेश दो प्रकार से होता है। एक परिवार अपने यहाँ उत्पन्न बच्चे को स्वयं किन्नर समुदाय में शामिल कर देता है तो वहीं

दूसरी तरफ किन्नर जब बधाई देने जाते हैं तब उन्हें अपने साथ ले आते हैं। किशोरावस्था में स्वयं किन्नर व्यक्ति अपनी कम्युनिटी में शामिल हो जाता है जब उनकी शारीरिक बनावट पृथक होती है अर्थात 18 से 20 वर्ष के होने पर व्यक्ति अपनी जमात में स्वयं प्रवेश लेता है । नए सदस्य को प्रवेश से पहले गुरू चुनना होता है। उसके अनुसार सभी रीति-रिवाज़ को निभाता है। इसे दुल्हन की तरह तैयार किया जाता है। वह अपनी खुशी को वह एक त्यौहार की तरह मनाता है और अपना पूरा जीवन उसी गुरु की देख – रेख में व्यतीत करता है।

2.4.2. किन्नर समाज में नाते-रिश्ते की गुरू-शिष्य परंपरा

परिवार और समाज इन्हें हमेशा हेय दृष्टि से देखते हैं तथा अपने यहाँ से बहिष्कृत कर देते हैं। किन्नर समाज को अपने परिवार पर विश्वास नहीं होता। यह अपने गुरू को ही सबसे अधिक महत्त्व देता है। गुरू को माता-पिता के जैसा सम्मान देते हैं। इनमें बेटी, माँ, नानी, परनानी आदि रिश्ते भी होते हैं । गुरू की प्रतिष्ठा ही इनका परम उद्देश्य होता है। अगर गुरू की मृत्यु हो जाए तब यह अन्य गुरू चुनने के लिए स्वतंत्र होता है।

किन्नर समुदाय में कुल सात घराने होते हैं जिनमें हर घराने का एक मुखिया होता है जिसे नायक कहते हैं। किसी आवश्यक निर्णय के लिए सभी

नायक एकत्रित होकर सर्वमान्य निर्णय को ही प्राथमिकता देते हैं । सभी नायक जब एकत्रित होते हैं उसे जमात भी कहा जाता है।

2.5. किन्नर समाज की मुख्य समस्याएँ

कोई भी समाज मनुष्यों से ही बनता है। उनकी शक्ति मानवता में निहित और प्रकट होती है। मनुष्य के बिना समाज नहीं बन सकता। समाज में मनुष्यता की सिर्फ कोटी निर्धारित कर किसी को मुख्यधारा में सम्मिलित कर लेना या किसी की उपेक्षा करना या वंचित करना मनुष्यता की निशानी नहीं है। सामान्यतः किन्नर को यह महसूस कराया जाता है कि तुम मनुष्य नहीं हो। समाज में जहाँ किसी भी परिवार में खुशियों में बधाई दी जाती है वहीं कहीं पर किन्नर के जन्म लेने पर परिवार में मृत्यु जैसा वातावरण हो जाता है। किन्नरों की समस्याओं का आरंभ परिवार से ही होता है।

2.5.1. पारिवारिक समस्याएँ

परिवार को ज़िन्दगी की ऐसी कड़ी मानी जाती है , जो प्रेम एवं संवेदना से बनती है। बच्चा भी उसी प्रेम का अंश होता है। प्यार त्याग का स्वरूप है जो अपना सर्वस्व त्यागकर दूसरे व्यक्ति की रक्षा करता है। परिवार पहले पालन-पोषण करता है , उसके बाद किसी भी सुख-दुख , ऊँच- नीच में आपके साथ खड़ा रहता है। मगर किन्नर व्यक्ति को सबसे

पहले अपने परिवार से ही लड़ना पड़ता है। लेकिन अफ़सोस उसी परिवार से उन्हें वंचित किया जाता है और उनके साथ सौतेला व्यवहार होता है।

जब व्यक्ति को परिवार से प्यार न मिले, अच्छा व्यवहार न मिले तो वह इंसान परिवार से दूर हो जाता है। ऐसे ही परिवारों से अनेक व्यक्तियों से बना समाज है किन्नर समुदाय।

2.5.2. आर्थिक समस्याएँ

वास्तव में शिशु जब जन्म लेता है तो आत्मनिर्भर न होकर माता – पिता पर निर्भर करता है। परिवार ही उसे आर्थिक स्थितियों का एहसास नहीं होने देता । लेकिन जब आपका परिवार ही न रहे तब यह समस्या सामने आती है।दरअसल शिक्षा व्यक्ति को आर्थिक रूप से सक्षम बनने में सहायक है लेकिन आपकी आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं है कि आप अपनी शिक्षा जारी रखे। अगर ऐसा कर ले तब शिक्षा संस्थान आपको उपेक्षित महसूस कराएगा क्योंकि वहां पर छात्र - छात्राएँ आपको किन्नर होने का एहसास दिलाएंगे । किन्नरों को रोजगार के लिए भटकना पड़ता है और उनके साथ अनेक समस्याएं भी उत्पन्न होती हैं ।

किन्नर इन्हीं कारणों से अपने पेट की आग बुझाने के लिए भीख माँगते हैं । ट्रेन और बसों में सड़कों पर इनकी आखें खोजती रहती हैं वैसे व्यक्ति को जो इनका पेट भरने के लिए कुछ पैसे दे सके ।उसके बदले किन्नर

आशीर्वाद देते हैं। भीख माँगने से पेट न भरने पर रेड-लाइट जगह् में साज-सज्जा कर समर्पित कर देते हैं और जिस्मफरोशी के काम में आ जाते हैं ।

2.5.3. सामाजिक समस्याएँ

मनुष्य समाज में रहकर ही पूर्ण होता है। बिना समाज के वह अनिश्चितता में बैठा एक इंसान होगा जिसे अपने न आनेवाले कल का पता न बिछड़े हुए परसों का। किन्नरों को समाज एक अलग दृष्टि से ही देखता है। वे वंचित, उपेक्षित, हेय और हास्यास्पद दृष्टि से देखे जाते हैं। किन्नर व्यक्ति समाज में विभिन्न प्रकार की असमानताओं का शिकार होता है जो कि सामजिक कलंक के रूप में उनसे हमेशा जुड़ी रहती हैं। तथा इसी कारण नागारिक और मानव अधिकारों को प्राप्त करने में भेदभाव का शिकार होते हैं और जीवन कठिनाइयों से भरा होता है।

2.5.4. धार्मिक समस्याएँ

मंदिर , मस्जिद ,गिरिजा और चर्च किसी भी व्यक्ति के आस्था का केन्द्र होते हैं । वहाँ व्यक्ति अपने सुख-दुख को सर्व शक्तिमान से सांझा करता है। मगर अफ़सोस की बात यह है कि बहुत से धार्मिक स्थलों पर किन्नरों का प्रवेश वर्जित है। किन्नरों को धार्मिक कर्मकांडों में एक सीमित परिधि में समेटा गया है जिसके कारण किन्नरों को अपने आराध्य देवी-देवताओं की पूजा करने में दिक्कतें उत्पन्न होती हैं । इस समस्या को देखकर

20 दिसंबर 2016 को मुंबई के धोउ में एल. बी. एस. मॉल ग्राउंड में मुरारी बाबू की रामकथा का आयोजन किन्नरों के लिए करवाया गया जहां देश के कई राज्यों से बहुत अधिक मात्रा में किन्नर रामकथा सुनने के लिए इक्कठा हुए। स्पष्टतःकहा जा सकता है कि किन्नरों को समाज से उपेक्षित रखा जाता है और उन्हें समाज की समस्याओं का सामना भी करना पड़ता है जिस कारण वे अपनी धार्मिक क्रियाएं भी पूर्ण नहीं कर पाते हैं ।

2.5.6. शिक्षा की समस्याएँ

शिक्षा किसी भी व्यक्ति की सोचने-समझने एवं परखने की शक्ति को तेज़ करती है और व्यवसायिक धरातल पर भी सामर्थ्यवान बनाती है। किन्नरों के लिए यही शिक्षा दुर्लभ है। कई शिक्षण संस्थान समाज में अपनी पहचान बनाने के चक्कर में किन्नरों को प्रवेश नहीं देते क्योंकि वे मानते हैं कि समाज में उनके संस्थान की मान - मर्यादा और संस्थान की पृष्ठभूमि अच्छी नहीं इसी मानी जाएगी । इसी कारण किन्नर शिक्षा से वंचित रह जाते हैं।अगर कोई किन्नर छात्र स्कूल जाए तो वहां भी वह उपहास का पात्र बन जाता है। इसी वजह से से अपनी पढ़ाई छोड़नी पड़ती है। समाज ही उन्हें अन्य किन्नरों की तरह जीवन-यापन करने के लिए मजबूर करता है। इन्हीं संघर्षों से किन्नरों का मनोबल क्षत-विक्षत हो जाता है और वे शिक्षा से दूर रहते हैं और वैश्विक पैमाने पर देश का विकास रुकता है।

2.5.7. आवास की समस्याएँ

अधिकांश किन्नरों को अपना घर छोड़कर पलायन करना पड़ता है। रहने की समस्या बहुत दयनीय है। किन्नरों का अपना एक विशेष स्थान होता है मगर व्यावसायिक व्यवधान की स्थिति में वे एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में पलायन करते हैं। वे उस क्षेत्र में अधिक रहना चाहते हैं शहरी और धनी आबादी वाला हो जहाँ उनकी आर्थिक स्थिति के अनुकूल वातावरण मिल सके । ऐसी स्थिति न होने के कारण वे अन्य क्षेत्र में चले जाते हैं जहाँ दूसरे किन्नरों से विवाद होता है और मारपीट तक आ जाती है।

केरल में किन्नरों को रहने के लिए आश्रय घर की सुविधा दी गयी है। केरल सामाजिक न्याय विभाग ने इसके लिए 'तनल' नामक आश्रय घर का निर्माण किया है।

2.5.8 . व्यक्तितता और अस्तित्व का संकट

किन्नरों के लिए व्यक्तिगत समस्या काफी भयानक है क्योंकि किन्नर स्वयं भी अपना सामंजस्य नहीं बिठा पाते। उन्हें अपने शारीरिक अल्प विकास के कारण रूप शारीरिक स्थिति को सही करने की दवाई निरंतर खानी पड़ती है जिससे वे मानसिक तौर पर कमज़ोर हो जाते हैं। समाज से मिलने वाली मज़ाक, लोगों के बुरे व्यवहार आदि से वे मानसिक और शारीरिक रूप से दुःखी होते रहते हैं ।

अस्तित्व का प्रश्न होता है , समाज में आपकी पहचान से, आप अपनी जान - पहचान को कितना बरकरार रखे हुए है इस आशय से। इनके स्वतंत्र अस्तित्व को काफी लम्बे समय से नकारा गया है । इन्हें व्यक्तिगत पहचान कराने के लिए किन्नरों ने एन. जी. ओ तथा न्यायालय ने अहम भूमिका निभाकर थर्ड जेंडर के रूप में मान्यता दिलाई। फाइलों में सिर्फ स्त्री, पुरूष और थर्ड जेंडर जैसी मान्यताओं से इनका अस्तित्व बना रह सकेगा, कदापि नहीं। आवश्यक है अपने अस्तित्व को बनाए रखने की, समाज में अपनी अहम भूमिका निभाने की और समाज की दृष्टि इनके प्रति बदलने की मानावता का प्रचार – प्रसार करने की ।

2.6. उच्च न्यायालय का फैसला और किन्नर समाज का उत्थान

सर्वोच्च न्यायालय ने सन् 2014 में नेशनल लीगल सर्विस अथॉरिटी की अर्जी पर सुनवायी करते हुए किन्नरों को समाज में तृतीय लिंग के रूप में कानूनी अधिकार दिए। इससे किन्नरों को जन्म प्रमाण पत्र, ड्राइविंग लाइसेंस , राशन कार्ड एवं आधार कार्ड के अनुसार लिंग की पहचान करने का अधिकार प्राप्त हो गया। जितने भी कानूनी अधिकार है जो अन्य लिंगों स्त्री-पुरूष पर लागू हो गए , किन्नरों पर भी लागू हो गए । विवाह करना, तलाक देने का अधिकार , बच्चा गोद लेने का और संपत्ति

उत्तराधिकार कानून के अनुसार उन्हें जितने लाभ मिल सकते थे वे सभी प्राप्त हुए। कोर्ट का यह फैसला लैसबियन, गे और वाइसेक्सुअल पर लागू नहीं होगा क्योंकि यह तृतीय लिंग में शामिल नहीं है।

डी.एम.के. के सांसद तिरुचि शिवा ने राज्यसभा में निजी विधेयक के रूप में सन् 2015 में एक बिल 'द राइट्स आफ ट्रांसजेंडर शीर्षक के पर्सस बिल 2014' 30 को प्रस्तुत किया। न्याय मंत्रालय ने इस बिल को आधार बनाकर नया विधेयक तैयार किया जो पास भी हुआ। यह विधेयक चार दशकों में एकमात्र ऐसा निजी विधेयक था जो कि ऊपरी सदन में भी पारित हुआ। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी की अध्यक्षता में केंद्रीय मंत्रिमंडल ने ट्रांसजेंडर पर्सस बिल को मंजूरी दे दी।

2.6.1. किन्नर समाज और कानूनी पहलू

किन्नरों के साथ के दुर्व्यवहार या अन्य प्रकार की प्रताड़ना को कानूनी अपराध माना गया है। इसमें छह महीने की दंड का प्रावधान है यह सजा बढ़कर कुछ वर्ष तक आगे भी किया जा सकती है। किन्नर अगर एस. इ. , एस.टी. श्रेणी के नहीं होंगे तब उन्हें 'ओ बी सी' में गिना जाएगा। वह 'ओ बी सी' से जुड़ी सुविधाओं का लाभ उठा पाएंगे। इस बिल के द्वारा भारत सरकार का यह प्रयास था कि एक सुदृढ़ व्यवस्था बने और किन्नरों

को सामान्य नागरिकों की तरह सामाजिक जीवन, शिक्षा व आर्थिक क्षेत्र में स्वतंत्रता मिल सके।

किन्नरों को समाज ने सदैव उपेक्षित एवं हेय दृष्टि से देखा है। इसी अवधारणा को समाप्त करने में एक कदम आगे बढ़ने हेतु इस विधेयक को लाया गया। ऐसे कानूनों की आवश्यकता है जो समाज में समानता और मानवता का उद्धार हो सके ।

किन्नरों के जीवन के कष्टों, दुखों , मज़बूरियों एवं उनकी समस्याओं को समझने व लोगों तक पहुँचाने के लिए इस कानून को लाया गया जिससे लोगों का ध्यान उनकी ओर जाएगा और कानून का पालन भी होगा।

केंद्र व राज्य सरकारों के प्रशासनिक अधिकारियों को किन्नरों के अधिकारों की रक्षा करनी चाहिए। उनके अधिकारों का हनन न होने दे उनकी समस्याओं को गंभीरतापूर्वक लेकर संवेदनशीलता के साथ दूर करने का प्रयास करना चाहिए । परंतु कानून बनने के बाद भी उनकी स्थिति में अधिक बदलाव नहीं आया है , क्योंकि अभी तक वह अधिकतर मतदान सूची से बाहर है।

2.6.2. किन्नर समाज और राजनैतिक स्थिति –

नए विधेयक के पश्चात् 2015 में 83 किन्नरों ने ट्रांसजेंडर के अधिकार का प्रयोग करते हुए केरल नगरपालिका चुनावों में वोट डाला जिनकी संख्या 10,000 है।

पश्चिम बंगाल में 10,000 किन्नर हैं इनमें से केवल 500 किन्नर का नाम मतदाता सूची में है। असम चुनाव में केवल 22 मतदाता किन्नर थे बिहार चुनाव में 256 मतदाताओं ने अपने मत का प्रयोग किया जबकि वहाँ 86 लाख मतदाता है।

राजनीतिक पार्टियाँ 2016 से इनके वोट के लिए संपर्क बना रही हैं । अप्सरा रेड़डी नामक किन्नर को अमित शाह ने तमिलनाडु में बीजेपी व काँग्रेस के बाद तीसरी पार्टी 'तमिलार काची' ने तमिलनाडु और पंडुचेरी में देवी नाम के किन्नर को टिकट दिया।

किन्नरों को मुख्यधारा में लाने के लिए राजनीति में भी सक्रिय भूमिका निभानी होगी चाहे वह एक वोटर के रूप में हो या नेता के रूप में। तमिलनाडु भारत का प्रथम ऐसा राज्य बना जिसमें 2002 के विधानसभा चुनाव में 18 किन्नर खड़े हुए थे। यह एक नया राजनीतिक बदलाव है। उम्मीद है भविष्य में भी परिवर्तन दृष्टिगत होंगे ।

मध्यप्रदेश के कटनी जिले में मेयर का चुनाव कमला नाम के किन्नर ने 2009 में जीता और यह चुनाव मध्यप्रदेश में दूसरी बार हुआ।

किन्नरों की जनगणना के अनुसार जनसंख्या 4.9 लाख है। लेकिन केवल 28,000 किन्नरों ने ही मताधिकार के लिए स्वयं को पंजीकृत करवाया है।

दक्षिण भारत में कई ऐसे उदाहरण हैं जो राजनीति के अतिरिक्त सामाजिक, आर्थिक क्षेत्र में भी मिलते हैं। पद्मनी प्रकाश नामक किन्नर की बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था कष्टमय रही। इनको बचपन में घर वालों ने घर से निष्कासित कर दिया। यह किन्नर बाद में बेहद लोकप्रिय समाचार वाचक बना।

सहोदरी फाउंडेशन के द्वारा कलकी सुब्रमण्यम कवी ने किन्नरों के उत्थान के लिए कई सराहनीय कार्य किए। इन्होंने लिंगभेद को लेकर भी आवाज़ उठाई। ये पोलाची के निवासी थे। विवेकानंद सतोवार्षिकी महाविद्यालय में सह प्राध्यापक पद पर रहे मानवी बंधोपध्याय कृष्णा, नगर महिला महाविद्यालय के पहले ऐसे किन्नर प्रिंसिपल बने जिन्होंने कॉलेज प्रशासन में अनेक उल्लेखनीय सुधार किए।

फिल्म 'क्रिकेट स्केंडल' में रोज डे स्पेशल किन्नर ने अपनी अहम भूमिका निभाई है। वे फिल्म रेडियो जगत से हमेशा जुड़े रहे।

ईसाई धर्म जगत में इतिहास रचने वाली हिन्दुस्तान की पहली महिला पादरी है, जिन्होंने धर्म शास्त्र में स्नातक किया उनके अनुयायी तमिलनाडु के चेन्नई में रहते हैं।

लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी एक ऐसे किन्नर हैं जिन्होंने किन्नर समुदाय के सुधार के लिए अनेक विशिष्ट कार्य किए हैं। उन्होंने सामाजिक संस्था बनाकर, शिक्षा, स्वास्थ्य, आजीविका व व्यवसाय के क्षेत्र में किन्नरों के लिए कार्य किया और उनको अनेक पुरस्कारों से सम्मानित भी किया । उन्होंने सोशल मीडिया के माध्यम से भी किन्नरों को जागृत किया तथा मुख्यधारा के लोगों से संवाद स्थापित किया। ये एक कुशल नर्तक भी हैं इन्हें बिग बोस के कार्यक्रम में भी आमंत्रित किया गया।

लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी ने अपनी आत्मकथा 2015 में 'मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी " शीर्षक से रचा जिसका प्रकाशन वाणी प्रकाशन दिल्ली द्वारा किया गया। यह पुस्तक किन्नरों की आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं मनोवैज्ञानिक स्थिति पर प्रकाश डालती है। कई कुरीतियों , परम्पराओ, रूढ़ीयों एवं भ्रांतियों के प्रति जागरूक करती है।

किन्नर समाज के लिए मित्र ट्रस्ट की अध्यक्षता में रूद्रांशी भट्टाचार्य ने मॉडलिंग एजेंसी खोली इस एजेंसी में ट्रांसजेंडरस को मॉडलिंग के लिए मौका प्रदान किया जाता है।

ऐसे नियम और संस्थाओं से किन्नरों का विकास हो रहा है मगर अनेक ऐसे किन्नर भी हैं जो आज भी मूलभूत सुविधाओं से वंचित हैं । समाज की दृष्टि में अपराधबोध की नज़रों से देखे जाते हैं। किन्नरों की गरीबी, अशिक्षा, अंधविश्वास, सामाजिक उपेक्षा, परंपरागत व्यवहार, तिरस्कार, बहिष्कार आदि वर्तमान में भी चल रहे हैं । आज भी लोगों के दिमाग में किन्नर सुनते ही चेहरे पर उपेक्षा व तिरस्कार का भाव आ जाता है । सोच इस आधुनिक युग में भी नहीं बदली है।

किन्नरों की यथा स्थिति का आंकलन करने के लिए वर्ष 2018 अगस्त महीने में एक सर्वे किया गया जिसके अनुसार आज भी 90 प्रतिशत से ऊपर किन्नर तंग हाल मानवीय धरातल से नीचे का जीवन जीने के लिए मज़बूर है।

नियम और कानून व्यक्ति को शारीरिक शोषण होने से बचा सकते हैं जबकि सामाजिक सोच व्यक्ति को प्रतिष्ठा के स्थान तक ले जाती है लेकिन समाज में अधिकांश लोगों की सोच किन्नरों के प्रति रुग्न ही देखी जाती है।

2.7. चिकित्सा और किन्नर समाज –

वर्त्तमान में बहुत प्रभावी ऐसी औषधियाँ हैं जो मनोविकार शास्त्र में मिलती है। इन दवाइयों को उचित समय व उचित मात्रा में लेने से

आदमी को संभालने में सहायता मिलती है। अनुभवी मनोविकार विशेषज्ञ की देखरेख में ही दवाइयाँ लेनी चाहिए क्योंकि इससे लीवर तथा गुर्दों को नुकसान पहुंचता है। लिंग बदलने के लिए समय पर पूरा मार्गदर्शन अति अवश्यक है। वरना जीवन लीला ही समाप्त हो सकती है। किन्नर को अपनी लिंग बदलने के लिए सेक्स रीअर्रेग्मेन्ड सर्जरी की आवश्यकता है । लेकिन इसका खर्च बहुत अधिक है। ऑपरेशन के पैसे के लिए उन्हें सेक्स वर्क जैसे कार्य करने पड़ते हैं । केरल में सोशल जस्टिस विभाग ने सेक्स रीअर्रेग्मेन्ड सर्जरी के लिए दो लाख रुपया देने का नियम पारित किया ।

किन्नरों के लिए कानूनी सुरक्षा को अत्यधिक दुरुस्त करने की आवश्यकता है। आमजन की तरह ही हिजड़ों के साथ शारीरिक बलात्कार को बड़ा अपराध माना जाए , किन्नरों के लिए आरक्षण का प्रावधान अलग से प्रारंभ किया जाए और हर विभाग में उनका चयन आवश्यक हो जिससे उनकी मूलभूत अवस्यकताएँ पूर्ण हो सके और जीवन अच्छा बन सके । उनकी आरक्षित सीट पर अन्य किसी भी समुदाय को स्थान न दिया जाए। अनुसूचित जातियों की तरह किन्नरों को भी बेइज्जती का अपमान सूचक शब्द कहने पर कठोर दंड का प्रावधान हो। किन्नरों को सामान्य आदमी की तरह स्वास्थ्य बीमा का लाभ मिलना चाहिए जिससे वे हार्मोनल एवं शल्य चिकित्सा का लाभ ले सकें। इनकी परेशानियों पर आवाज़ उठाने व उन्हें सहयोग देने के लिए सामाजिक कार्यकर्ता,

सामाजिक संस्थाएं, चिंतक, लेखक, पत्रकार एवं कलाकार सहायक बन सकते हैं। जो इनके न्याय के लिए मुखर हो जाए और इनको इंसान होने के अधिकार प्राप्त हो जाए ।

2.8. शिक्षा और किन्नर

किन्नर के साथ अमानवीय व्यवहार व भेदभाव को रोकने के लिए पाठ्यक्रम में लिंगियता के विषय व सामाजिक ज्ञान की पुस्तकों में किन्नर के परिचय को भी जोड़ा जाए । जिससे छात्र इनको सामान्य दृष्टि से देखें, अपमान से नहीं। किन्नर से संबंधित समस्याओं एवं प्रश्नों को अनिवार्य रूप से परीक्षाओं में पूछा जाना चाहिए । किन्नरों द्वारा ही किन्नर समस्या को समझने के लिए शिक्षक के रूप में नियुक्त किया जाए जिससे ऐसे शिक्षार्थियों को किसी प्रकार की समस्या न हो ।

किन्नर को कम्प्यूटर, खेल, अभिनय, वाचक, नर्तक की शिक्षा में पारंगत करना चाहिए जिससे वह व्यवसाय के साथ-साथ अन्तर्राष्ट्रीय पहचान स्थापित कर सके।

किन्नर बच्चों को शिक्षित करने के लिए स्कूल व छात्रावास को मुक्त मुहैया कराया जाए। उन्हें आत्मसम्मान, किसी के आगे न झुकने, आत्मनिर्भर व्यवसाय की शिक्षा देनी चाहिए। उन्हें भीख माँग कर अपनी

मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने जैसे कृत्य को करने से रोकना चाहिए।

लक्ष्मी की आत्मकथा में यह बताया गया है कि व्यक्ति विकास कर सकता है। बस उसकी कला के प्रदर्शन के लिए उसे अच्छा स्कूल व मंच मिला तो नृत्य के द्वारा दर्शकों के दिलों पर राज भी कर सकता है। अच्छा स्कूल एवं टीचर मिलने से उसको आत्मसम्मान मिलेगा । उन पर दवाब डालना, हँसी उड़ाना, दोषारोपण करना, अपमान करना, निंदा करना आदि समाप्त होगा और इनको अपनी बात रखने के लिए मंच भी मिलेगा जिससे उनका सर्वांगीण विकास हो सके और वह सही अर्थों में आत्मनिर्भर बन सके।

2.9. पुलीस और किन्नर

पुलिस तंत्र धरातल स्तर पर कार्य करता है। उसे ही सुरक्षा की मुख्य बागडोर संभालनी चाहिए। मगर अधिकतर पुलिस वाले किन्नरों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं करते हैं । उनको प्रताडित करने के फोटो , वीडियो अक्सर वायरल होते रहते हैं । पुलिस वालों को प्रशिक्षण देते समय बताना चाहिए कि किन्नरों के साथ अच्छा व्यवहार करें व आम नागारिक की तरह ही उनको समझा करें । जो पुलिस वाला किन्नरों से भ्रष्टाचार व दलाली का कार्य करे उसे कठोर से कठोर सजा का प्रावधान होना चाहिए जिससे किन्नरों का विश्वास समाज के सभी अंगों से हो सके ।

समाज में निरंतर कुछ न कुछ कुप्रथाएं अपना घर बना लेती हैं। उन कुप्रथाओं को ध्वस्त करने की आवश्यकता है जैसे किन्नरों पर अत्याचार , उनका शोषण ,शारीरिक दुर्बलता के कारण उनकी पिटाई जैसे कुकृत्यों से आज़ादी के लिए नियम बनाना चाहिए। उनकी कलाओं को प्रोत्साहित कर उन्हें सम्मानित करना जिससे वह सम्मान महसूस कर सके। ऐसे ही सम्मानपूर्वक जीवन पाने के लिए वह निरंतर संघर्षशील रहे। लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी अपनी आत्मकथा "मैं लक्ष्मी मैं हिजड़ा " में बताती है कि - "अच्छा स्कूल व टीचर मिलने से उसमें आत्मसम्मान जागा। इन पर दवाब डालना, हँसी उड़ाना, दोषारोपण करना, अपमान करना, निंदा करना बंद कर दिए गए और इनको अपनी बात को लोगों के सामने रखने का साहस मिला।" 31

सरकार को ऐसे कानून बनाने चाहिए जिसमें किन्नर बच्चों का बहिष्कार करने पर माता-पिता को अपराधी घोषित कर दंड का प्रावधान होना चाहिए। माता-पिता का दायित्व अपने बच्चों को सशक्त बनाने का होता है , चाहे वह लड़का हो , लड़की हो या फिर किन्नर इनमें भेद नहीं होना चाहिए। किसी माता-पिता के पुत्र या पुत्री विकलांग हो जाते हैं , तो क्या उनके माता-पिता उन्हें घर से बहिष्कृत कर देते हैं? समाज में कितने बच्चे विकलांग होते हैं। मंदबुद्धि, पैर से अपाहिज, बुद्धि का विकास नहीं

होता, दृष्टिहीन बच्चे, माता-पिता इन बच्चों को जिंदा लाश की तरह पालते हैं। इसी प्रकार समाज भी अपने किन्नर बच्चों को पाले व अपने परिवार में ही रखे उनकी शारीरिक अक्षमता की परवाह न करके दरकिनार का उनका सम्मान करें तो वे भी उत्तरोक्त विकास कर सकते हैं ।

किन्नर के बारे में कुछ मान्यताएं हैं जो तर्क संगत नहीं जैसे ताली बजाना। यह ताली बजाना उनके जन्मजात गुण नहीं है वह व्यवहार से आता है। माता-पिता द्वारा बहिष्कृत होने पर यह किन्नर समुदाय के साथ ही रहते हैं उनके रहन-सहन को अपनाते हैं। वे ताली बजाकर ही पैसे माँगकर बधाई उठाकर अपनी जीविका चलाते हैं इसलिए वे इसे अपनी पहचान के रूप में सम्मिलित कर लेते हैं। माता-पिता इन बच्चों को परिवार में रखेंगे तो यह समस्या नहीं होगी। हज़ारों बच्चों में किन्नर बच्चा एक ही पैदा होता है। भारत में अंग्रेजों के आने से पूर्व यदि किन्नर समाज अलग नहीं होता तो यह बहिष्कत समाज मुख्यधारा का हिस्सा बन सकता था ।

माता-पिता को अपने किन्नर बच्चों को पालते समय उनकी रुचियों और व्यवहार पर ध्यान देना चाहिए। अगर बच्चा फिर भी बदला-बदला लगता है तो उसे नकारने, उपेक्षा करने, डाँटने के स्थान पर बच्चे की आवश्यकतानुसार सहारा देना और उससे वार्तालाप करके दोस्ती जैसे संबध बनाएं। उसकी रुचि के अनुसार आगे बढ़ने का अवसर प्रदान करें। उसके संदेह व उत्सुकता को शांत कर उचित मार्गदर्शन देकर वही समाज

को नई राह दे सकता है क्योंकि मेधा , प्रतिभा का सम्बन्ध लिंग से नहीं होता है ।

कानून संबंधी बातों को जो किन्नरों के लिए बनाए गए हैं, प्रचारित-प्रसारित शिक्षा के माध्यम से रखना चाहिए । किस कार्य को अपराध की श्रेणी में रखा गया है उसको इसकी जानकारी दी जाए। किन्नर बच्चों के लिए केन्द्र एवं राज्य द्वारा खुली हुई संस्थाएं व विशेष सुविधाओं के बारे में माता-पिता को बताना चाहिए जिससे उनका शैक्षणिक विकास संभव हो सके ।

किन्नर में जननांग अविकसित रह जाते हैं। माता-पिता को बच्चों का डॉक्टरी परिक्षण करवाना चाहिए। इनका इलाज लिंग परिवर्तन, हारमोंस चिकित्सा एवं शल्य प्रक्रिया के माध्यम से किया जा सकता है। उसको पढ़ाई व अन्य कार्यों में अधिक मजबूत करना चाहिए जिससे वह आत्मनिर्भरता के साथ – साथ आत्मसम्मान से जी सके। अन्य परिवार के द्वारा भी उसे अयोग्य, असमर्थ होने जैसा दंश न झेलना पड़े। वह सबके साथ मिल-जुलकर एक सुखी परिवार बना रहे और वह दूसरे भाई – बहनों के साथ अपने परिवार में ही जीवन – यापन करे । घर की पार्टी में उसको भी हिस्सा मिलें।

2.10. भारतीय न्यायपालिका और किन्नर समाज

उच्च न्यायालय ने संविधान के मौलिक अधिकार के अनुच्छेद 14, 15, 16, 19 (1) (क) और 21 के अंतर्गत देश के सभी व्यक्तियों को दिए गए मूल अधिकारों की रक्षा के लिए किन्नरों के पक्ष में भी विस्तारित करते हुए निम्न निर्णय दिए हैं जिनके शब्दांशः लागू होने से समानता , विश्वबधुत्व एवं एकता का सन्देश दुनिया में जाएगा ।

(1) मौलिक और समता का अधिकार (अनुच्छेद 14)

अनुच्छेद 14 के अनुसार राज्य किसी भी व्यक्ति को समानता और संरक्षण से वंचित नहीं कर सकता। यह मौलिक अधिकार सभी व्यक्तियों को कानूनी तरीके से समान मानने की अवधारणा रखता है। इस अनुच्छेद को किसी विशेष लिंग के लिए न बनाकर सर्वजन हेतु संविधान में उल्लिखित किया गया है जिससे सभी प्राणियों को समान अवसर प्रदान हो सके। राज्य के सभी कार्य क्षेत्र स्वास्थ्य, शिक्षा, सेवाएं आदि सभी व्यक्ति को समान रूप से अवसर प्रदान करता है। उनके साथ किसी भी प्रकार का लिंगीय भेदभाव अर्थात् लिंग विभेद करना समानता के अधिकार का उल्लंघन माना जाएगा ।

(2) किन्नरों के साथ लिंग-विभेद (अनुच्छेद 15 व 16) –

सामाजिक न्याय की अवधारणा को समाज में बनाए रखने हेतु संविधान के अनुच्छेद 15 व 16 में लिंगीय विभेद को प्रतिबंधित किया गया है। लिंग शब्द किसी भी समुदाय के स्त्री व पुरूष के जैविक लिंग तक सीमित नहीं है। इसमें वे लोग भी समाहित हैं जिनके जैविक लिंग नहीं है जिन्हें न पुरूष माना जाता है और न ही स्त्री। उनको भी सभी लिंगों की भांति समान अधिकार है ।

(अनुच्छेद 15(4) व 16(4) के द्वारा किन्नर समुदाय के लोगों को दिए जाने वाले आरक्षण के लाभ को प्राप्त करने के अधिकारी है। जिसे देने हेतु राज्य सरकार भी बाध्य है। यह अनुच्छेद किन्नर समुदाय के लोगों को सामाजिक समानता की ओर दिशानिर्देश करता है। ताकि किन्नर समुदाय के लोग भी अन्य नियमों का पालन सामाजिक न्याय के लिए कर सकें।

(3)किन्नर समाज : स्व - पहचान और अधिकार -अनुच्छेद 19(i)(क) –

इस अनुच्छेद के अनुसार अपनी स्व-पहचानीकृत, बोलने तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता होगी अर्थात् इन्हें अभिव्यक्ति का पूर्ण अधिकार है जिसे कार्य, शब्द, व्यवहार या पहनावा अथवा अन्य किसी रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है।

2.11.1 किन्नर समाज की की संवैधानिक अवस्था –

संविधान में किसी विशेष लिंग या स्त्री, पुरूष कहने के बजाए नागरिक , लोग और लिंग से सम्बोधित किए गए हैं । जो संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16, 19 व 21 ट्रांसजेंडर व किन्नर समूह के लोगों को अपनी सीमाओं से अलग नहीं करते हैं । किन्नर समुदाय का व्यक्ति भी अन्य भारतीय नागरिकों की तरह समान भारतीय है। इन अनुच्छेदों में प्रयुक्त शब्द जैसे व्यक्ति, नागरिक व लिंग संपूर्ण 'मानव जाति' की ओर संकेत करता है। लैंगिक पहचान व उत्पत्ति के आधार पर कोई भी या किसी भी प्रकार का अंतर प्रतिबंधित या प्राथमिकता को शामिल करता है तथा संविधान सभी को समान कानून संरक्षण प्रदान करता है।

(6) लिंग परिवर्तन -अधिकार - पिछले तीन दशकों से देश की न्यायव्यवस्था ने अनुच्छेद 21 का निर्वाचन करते हुए कई नागारिक अधिकारों की घोषणा की ताकि समाज में जीवन स्तर मूल्यों को उठाया जा सके।

इन्हीं नागरिक अधिकारों के तहत कोई भी व्यक्ति अपने लिंग या लैंगिक विशेषता और मानसिक स्वभाव का मेडिकल पुर्नस्थापन शल्यप्रक्रिया द्वारा अपना लिंग परिवर्तन करा लेता है तो उसकी नई

पहचान कानूनी रूप से वैध मानी जाएगी और विधि के अनुसार उसे इसकी मान्यता देने में कोई रूकावट नहीं है।

किन्नर लोग भी भारतीय नागरिक हैं इसलिए उन्हें भी पहचान मिलनी चाहिए और अन्य लोगों की तरह वे अपना जीवन यापन सम्मानपूर्वक कर सकें। उन्हें भी देश के अन्य लोगों की तरह मतदान का अधिकार, संपत्ति का अधिकार, विवाह, पासपोर्ट, राशन कार्ड, वाहन चालन आदि के द्वारा पहचान प्राप्त करने का अधिकार शिक्षा, नियोजन आदि का हक़ प्राप्त हो सके।

2.11.2. द राइट आफ ट्रांसजेंडर पर्सन्स बिल 2014 और नालसा जजमेंट

उच्चतम न्यायालय की खंडपीठ ने किन्नर लोगों के विधिक व संवैधानिक अधिकारों के पक्ष में निम्न आदेश जारी किए हैं -

1. किन्नरों को युगल लिंगी होने के बावजूद भाग (1) के अंतर्गत उनके मूल अधिकारों तथा संसद द्वारा राज्य विधायिका द्वारा निर्मित कानूनों से सुरक्षा लेने हेतु थर्ड जेंडर माना जाएगा।31

2. केंद्र सरकार व राज्य सरकार इस वर्ग के लोगों को ‘पिछड़ा वर्ग’ घोषित करे ताकि यह शिक्षण संस्थानों व सरकारी नौकरी नियोजन में आरक्षण का लाभ ले सके।

3.. केंद्र व राज्य सरकार इस वर्ग के लिए स्वास्थ्य समस्याएं, उत्पीड़न आदि के लिए कदम उठाए और उनके बेहतर जीवन के लिए योजनाएँ बनाकर व जन जागरण द्वारा उन्हें समाज में सम्मान प्राप्त करवाएं।33

4.. कोर्ट ने अपने अंतिम फैसले में कहा है कि सरकार दस्तवेजों में स्त्री व पुरूष के साथ ही एक कॉलम थर्ड जेंडर का होना चाहिए।

5.. केंद्र सरकार, राज्य सरकार व केंद्र शासित प्रदेश किन्नरों के साथ शैक्षिक व सामाजिक तौर पर पिछड़े वर्ग की तरह सुविधा उपलब्ध कराए।

6. एम. के. राधाकृष्णन और एस. के सीकरी की खंडपीठ ने किन्नरों को देश के आम नागरिकों की तरह न्यायिक और संवैधानिक अधिकार देने की वकालत की है। इस फैसले से थर्ड जेंडर बहुत उत्साहित हैं क्योंकि अब उन्हें भी शादी करने, तलाक लेने, बच्चा गोद लेने, उत्तराधिकारी घोषित करने , व केंद्र व राज्य सरकारों द्वारा चलाई जाने वाली विभिन्न योजनाएँ जो कि स्वास्थ्य व कल्याण से संबंधित है उनका लाथ मिल सकेगा। इस खंडपीठ ने कहा कि अनुच्छेद 19(1) के तहत थर्ड जेंडर समुदाय को निजता व स्वतंत्रता का अधिकार

हासिल है और केंद्र व राज्य सरकार की यह जिम्मेदारी है कि उनके अधिकारों की रक्षा करे।

7. भारत के सुप्रीम कोर्ट ने 'अप्रैल 2014' को किन्नरों के तीसरे लिंग के रूप में पहचान दी थी 'नेशनल लीगल सर्विसेज अथॉरिटी' (NLSA) के कहने पर यह फैसला सुनाया था। इस फैसले के द्वारा ही किन्नरों को जन्म प्रमाण पत्र, राशन कार्ड, पासपोर्ट, ड्राइविंग लाइसेंस में तीसरे लिंग के तौर पर पहचान का अधिकार मिला। इसका मतलब उन्हें शादी का व तलाक का अधिकार भी मिल गया। वे बच्चों को गोद ले सकते हैं और उन्हें उत्तराधिकार कानून के तहत अपना वारिस कह सकते हैं ।

किन्नरों के अधिकारों के प्रति सचेत बिल फरवरी 2014 में सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के बाद दिसंबर 2014 में राज्यसभा में प्राइवेट मेम्बर्स बिल के रूप में "द राइट्स आफ ट्रांसजेंडर पर्सन्स बिल 2014"34 पास किया गया। इस बिल को संसद तिरूचि शिवा द्वारा 2015 में पेश किया गया। इस बिल में व्यक्ति को जन्म से दी जाने वाली जेंडर आधारित पहचान से अलग परिभाषित किया गया ऐसे व्यक्ति जिनमें किसी भी प्रकार से

शारीरिक निरीक्षण की बात न कही हो यह बिल उन्हीं के लिए सुरक्षित रखा गया है।

इस बिल को राज्यसभा से लोकसभा जाने में 1 वर्ष की अवधि लग गई तथा इसमें अनेक बदलाव भी सम्मिलित हो गए। इस बिल को ट्रांसजेंडर पर्सन्स बिल 2016 का पहला वर्जन माना गया क्योंकि यह पूर्वानुमानित बिल नहीं था। इसी आधार पर नया विधेयक भी तैयार किया गया। चार दशकों में यह एकमात्र ऐसा निजी विधेयक था जिसे ऊपरी सदन में मंजूरी मिली। इसी बिल को अंत में ट्रांसजेडर पर्सन्स प्रोटेक्शन ऑफ़ राइट्स बिल 2016 के रूप में पारित किया गया।

2.11.3. किन्नर - पोटेक्शन ऑफ़ राइट्स बिल 2016

19 जुलाई 2016 को ट्रांसजेंडर पर्सन्स बिल 2016 को नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता में मंजूरी दी गई। 20 जुलाई 2016 को राज्यसभा के द्वारा भी मंजूरी दी गई। इस बिल से किन्नरों को सामाजिक और आर्थिक रूप से सशक्त होने का अवसर प्राप्त हुआ । यह बिल किन्नरों के जीवन के लिए मददगार साबित होगा।

भारत में आज भी किन्नरों को हेय दृष्टि से देखा जाता है। किन्नरों की दशा को सुधारने के लिए ऐसे अनेक बिलों की आवश्यकता है वास्तव में

यह बिल किन्नरों को प्रगति के पथ पर एक पायदान आगे की ओर ले जाएगा। इस विधेयक से यह उम्मीद भी है कि किन्नरों के प्रति अपमान व भेदभाव वाले व्यवहार में कमी आएगी । इस विधेयक द्वारा ये लोग मुख्यधारा से जुड़ने में सफल हो सकेगे ।

यह स्पष्ट है कि प्राचीन और मध्यकाल में किन्नरों की स्थिति सम्मानजनक रही। मुगल काल तो किन्नरों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण रहा। अंग्रेजों के काल में इनकी स्थिति अपमान जनक रही। इनको अहिंसक व्यक्तियों की श्रेणी में रखा गया । प्रथम स्वाधीनता संग्राम और स्वतंत्रता संग्राम में किन्नरों की भूमिका भी सराहनीय रही इसलिए ब्रिटिश शासन ने इन्हें अपराधिक जनजाति घोषित कर दिया और आज़ाद भारत में किन्नर अपमान के शिकार हुए । एक लंबे समय बाद 2014 में इन्हें वैधानिक रूप से नागारिक सम्मान प्राप्त हुआ ।

शबनम मौसी सोहागपुर नामक किन्नर ने सन् 1998 ई, में एक नया कीर्तिमान रचा और किन्नरों के लिए राजनीति के दरवाज़े खोल दिए। मध्य प्रदेश से वह लेजिसलेटिव असम्बेली (MLA) के पद पर चुनी गयी जिससे देश में एक नया इतिहास दर्ज किया गया - भारत की पहली विधायक के दौरान भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, भूखमरी और किन्नरों के साथ होने वाले भेदभाव के लिए आवाज़ भी उठाई लेकिन आज भी वर्षों बाद राजनीति में

यह नाम मात्र को है। सन् 1998 से 2003 तक वह डस्ब् में किन्नरों को मतदान का अधिकार मिला और 2004 में किन्नर निर्दलीय चुनाव लड़े और चारों हार गए परंतु वे हद तक आगे बढ़े।

प्रारंभिक समय में कुछ आरक्षित सीट होने के बावजूद वह चुनाव तो जीती रही । लेकिन सत्ता पुरूष के हाथ में रहती थी और पुरुष ही सारा काम देखता है । वह बस मोहरे की तरह प्रयोग की जाती। यह कह कर उन्हें नकार दिया जाता कि उसको सोचने की क्षमता नहीं है कई पंचायत में चुनकर भी वह घूँघट नहीं उठा पाती है । ठीक उसी प्रकार किन्नरों का भी राजनीति में आना कठपुतली बनने जैसा है।

तमिलनाडु में किन्नरों के सामाजिक न्याय के लिए लड़ने वाली सारा मानती है कि राजनीतिक पार्टियाँ किन्नरों का उपयोग माहंरों की तरह करती हैं परंतु किन्नर सोचते हैं कि राजनीति खुद को स्थापित करने का एक अवसर है। एक और किन्नर सुधा ने AIADMK पार्टी से टिकट लेने का प्रयास किया क्योंकि वह मानती थी कि कोशिश करना भी आगे बढ़ने जैसा है। वास्तविकता तो यह है कि अभी किन्नरों को समाज में अपनी पहुँच बनाने के लिए निरंतर संघर्षरत रहना होगा, तभी वे राजनीतिक, सामाजिक जैसे सभी रूपों में मान्यताएँ प्राप्त कर पाएँगे।

निष्कर्ष

मनुष्य की उत्पत्ति किसी भी भेद - भाव एवं असमानता से अलग है । जब मनुष्य की उत्पत्ति हुई तब स्वयं के जीवन संचालन के लिए समाज बना। समाज के बिना मनुष्य का अस्तित्व ही नहीं है । वह समाज से ही सीखता , रचता और बसता है । मनुष्य ने अपने अस्तिव को बचाए रखने के लिए प्रजनन की प्रक्रिया अपनाई। प्राणी का अस्तिव अग्रसित होता रहा। किन्नर भी उसी प्रजनन प्रक्रिया के अंग के रूप में विद्यमान हैं जिनकी प्राचीन तथा मध्यकाल में सम्मानजनक स्थिति रही । आधुनिक दौर आते आते इन्हें उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाने लगा । मुख्यधारा के लोगों ने इनसे मुँह मोड़ना शुरू किया तो बुद्धिजीवियों ने इन्हें मुख्यधारा से जोड़ने का कार्य किया। मगर आज इनके ऊपर हो रहे अत्याचारों को बखूबी समझा जा सकता है और इनका अधिकार दिलाने के लिए निरंतर संघर्षशील रहना होगा ।

भारत सरकार ने किन्नर के अधिकारों के लिए जो कानून बनाये हैं , उनको पूर्णतया लागू किया जाए । लिंग के आधार पर किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं होना चाहिए बल्कि समानता के अधिकार का बोलबाला हो । देश को लिंग के आधार पर नहीं बल्कि मानवता के दृष्टिकोण से चलना चाहिए । किन्नर को किसी भी प्रकार से प्रताड़ित नहीं करना चाहिए उनको इंसान समझकर उनसे मानवों जैसा व्यवहार करने की आवश्यकता है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Sulaiman T.K Transition from homosociality sub culture to gay politics , Lambert publication , 2017 , p.28
2. क्रोमोज़ोम बायोलॉजी सं. रूडी अप्पेल्स , लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस इन पब्लिकेशन 2003 पृ. 19
3. http://www.oed.com>oed2
4. साहित्य और समाज में उभरता किन्नर विमर्श सं. भारती अग्रवाल , नालंदा प्रकाशन दिल्ली , 2019 , पृ. 85
5. http://judis.nic.in/supremecourt/imgs1.aspx?filename=41411
6. किन्नर विमर्श साहित्य के आइने में , डॉ. इकरार अहमद वांग्मय बुक्स अलीगढ़ 2017 , पृ. 25
7. ऋग्वेद 1.51.13
8. शतपथ ब्राह्मण 3.3.4.18
9. लिंगानुशासन , महर्षि पाणिनी , अनुवादक – दुर्गासिंह , पृ.88
10. http://www.ssbyneducation.com
11. शब्दर्णव पत्रिका सं. डॉ. रामशेखर तिवारी जुलाई – दिसम्बर 2018 पृ. 61
12. Research Journey , Special issue -158 , समकालीन साहित्य में विविध विमर्श 2019 पृ.56
13. वही , पृ. 41
14. रामायण , महर्षि वाल्मीकि 89 वां. सर्ग श्लोग 22
15. रामचरितमानस , गोस्वामी तुलसीदास , उत्तरकाण्ड पृ. 904

16. रामचरितमानस , गोस्वामी तुलसीदास अयोध्याकाण्ड पृ. ११२

17. http://www.ramcharitamanas.iitk.ac.in/content /11

18. http://hindi.webdunia.com/sanatan-dharma-history/shikhandi-1180610071_1.html?amp=1

19. http://hindi.webdunia.com/sanatan-dharma-history/shikhandi-1180610071_1.html?amp=1

20. http://ignca.gov.in/coilnet/mw063.htm

21. https://amp.bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%AC%E0%A5%83%E0%A4%B9%E0%A4%A8%E0%A5%8D%E0%A4%A8%E0%A4%B2%E0%A4%BE

22. किन्नर गाथा , शीला डागा , वाणी प्रकाशन नई दिल्ली , 2019 , पृ. 29

23. Same-sex love in india Edi. Ruth Vanita and Saleem Kidwai , st. martins press p.169

24. थर्ड जेंडर बी: कथा आलोचना , डॉ. एम फ़िरोज़ खान , 2017 अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूशन , कानपुर पृ. 52

25. मल्लिका वसंतम , विजयाराज मल्लिका , ग्रीन बुक्स 2019 पृ. 36

26. मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी , लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी , वाणी प्रकाशन नई दिल्ली , पृ.61

27. . Same-sex love in india Edi. Ruth Vanita and Saleem Kidwai , st. martins press p.119

28. Neither Man Nor Woman : The Hijras of india , Introduction part

29. Https://www.ibanet.org>article india new law on protection of rights of transgender persons

30. मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी , लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी , वाणी प्रकाशन नई दिल्ली , 2015 , पृ.61

31. नालसा जजमेंट , सुप्रीमकोर्ट 2014

32. वही

अध्याय तीन
हिंदी साहित्य में किन्नर समाज

साहित्य समाज का दर्पण है । साहित्यकार अपनी रचना के द्वारा अपने विचार और भाव को जनसामान्य तक पहुंचाते हैं । समाज एवं साहित्य आपस में एक दूसरे से जुड़े हुए हैं । कॉडवेल का कथन है कि "साहित्य का मोती समाज की सीपी में जन्म लेता है |"[1] अतः साहित्य वही अभिव्यक्त करता है जो समाज में घटित होता है और वह दबे, कुचले, शोषितों के प्रति आवाज़ भी उठाता है । साहित्य समतामूलक समाज की स्थापना करने के लिए निरंतर संघर्षशील रहता है, उसे समाज में चल रहे असमानता से नफरत होती है |

3.1. हिंदी साहित्य में किन्नर विमर्श

आज साहित्य में कई विमर्श आ रहे हैं जिसका प्रमुख कारण यह है कि समाज में बहुत सारी नई – नई गतिविधियाँ विकसित हो रही हैं । नए – नए विषय जुड़ रहे हैं । इसी कारण साहित्य इन विषयों पर अपना मत या विचार रखने के लिए विवश है और साहित्यकार उन विषयों को अनदेखा नहीं कर पा रहे हैं । ऐसे नए–नए समय में विमर्शों का उभरना स्वाभाविक सत्य है । अगर हम हिंदी साहित्य की बात करते समय पता

चलेगा कि इसका क्षेत्र कहानी , कविता, उपन्यास, नाटक, निबंध, आत्मकथा, यात्रा – वृतांत, रिपोतार्ज जैसे विविध विधाओं तक फैला हुआ है ।

हिंदी साहित्य के विकास का चरण निम्न चार भागों में वर्गीकृत है –

आदिकाल (वीरगाथा काल)
भक्तिकाल (पूर्व मध्यकाल)
रीतिकाल (उत्तर मध्यकाल)
आधुनिक काल (गद्य काल)

किसी भी समाज या साहित्य के बारे में जानने हेतु हमें उसके मूल रूप में जाना पड़ता है यही मूल उसका आदि होता है । हिंदी साहित्य के आदिकाल में धार्मिक साहित्य, लौकिक साहित्य, रासो साहित्य, नाथ साहित्य, सिद्ध साहित्य एवं जैन साहित्य का विकास धार्मिक परिस्थिति के अंतर्गत हुआ । सिद्ध साहित्य बौद्ध धर्म से ही विभाजित होकर निकला है । जैन एवं बौद्ध साहित्य में किन्नर का पृथकीकरण किया गया है । जैन दर्शन में मनुष्य की आत्मा को बंधन करनेवाली नौ दुष्प्रवृत्तियों का उल्लेख मिलता है जिसमें कर्म को 'स्त्री वेद', 'पुरुष वेद', तथा 'नपुंसक वेद' कहा गया है । 'नपुंसक वेद' से आशय है कि 'स्त्री' और 'पुरुष' दोनों के साथ भोग की इच्छा उत्पन्न करनेवाली मोहनीय कर्म अर्थात 'किन्नर' ।

हिंदी भक्ति साहित्य में किन्नर का प्रयोग अनेक संदर्भों में हुआ है। भक्तिकाल में भक्ति के प्रचार हेतु विभिन्न सम्प्रदायों का उदय हुआ था जिसमें वैष्णव सम्प्रदाय में चैतन्य महाप्रभु जिन्होंने स्वयं को कृष्ण की प्रेमिका माना ।

"युगायितं निमेषेण चक्षुषा प्रावृश्यितम ।
शून्यायिंत जगत् सर्वं गोविंद विरहेण में ।|"[2]

अर्थात चैतन्य महाप्रभु कहते हैं कि हे सखी ! गोविंद यानी कृष्ण के विरह में मेरा निमेष मात्र काल भी युग के समान प्रतीत होता है। मेरी आखों ने वर्षा ऋृतु का सा रूप धारण कर लिया है और यह समस्त जगत मुझे शून्य प्रतीत हो रहा है ।

यहाँ आत्मा के रूप में स्वयं को स्त्री माना है तथा परमात्मा के रूप में प्रियतम कृष्ण को भी माना है । यह पुरुष के भीतर बसी स्त्रैण ता का ही भाव था ।

कृष्ण काव्य के अलावा राम काव्य में भी रसिक संप्रदाय के अंतर्गत राम को पुरुष एवं स्वयं को प्रेमिका के रूप में चित्रित कर शृंगारिक लीला करके दिखाया गया है।

रीति काल में पुरुष मन की स्त्री सुलभ चेष्टाएँ घनानंद के पदों में देखी जा सकती हैं प्रेम की पीड़ा की तीव्र अनुभूति इनकी कविता में विचित्रता

और अभिव्यक्ति में विलक्षणता उत्पन्न करती है। घनानंद स्वयं अपने प्रिय को संबोधित करते हुए कहते हैं कि मैं तुमसे कितना प्रेम करता हूं यह शब्दों में कैसे व्यक्त करुँ ? यह मैं शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकता तथा करने की जरूरत भी नहीं क्योंकि तुम तो सुजान हो। इससे ही स्पष्ट हो जाता है कि घनानंद के मन में स्त्रीत्व की भावना थी। इसका उदाहरण निम्न पदों में घनानंद ने स्पष्ट रूप में चित्रित किया गया है -

"मन जैसे कछु तुम्हें चाहत है ,
सुजान ही हौ।
इन प्राननि एक सदा गति रावरे ,
बावरे लौं लगियै नित लौ।
बुधि और सुधि नैननि बैननि मैं
करिबास निरंतर अंतर गौ।
उधरौ जग चाय रहे घनआनंद
चातिक त्यौं तकिये अब तो।। [3]

आदिकाल से आरंभ होता साहित्य आधुनिक काल में आते काव्य के अलावा कथा साहित्य में किन्नर पात्र तो नहीं है बल्कि स्त्रैण भाव वाले पात्रों को देखा जा सकता है। रवींद्रनाथ टैगोर की कहानी 'गिन्नी' (1891) में आशु नामक बालक की कथा है। आशु अपने बचपन में अपनी सगी बहनों के साथ घर पर खेलता रहता है। इसी कारण आशु को गुरु गिन्नी ना

से पुकारता है। गिन्नी का मतलब है गृहिणी। यह उसके चरित्र को व्यंग्य रूप में दिया गया था । यह है हमारे समाज की लैंगिक पहरेदारी का नमूना।

आधुनिक काल तो आ गया लेकिन किन्नरों के साहित्य हिन्दी साहित्य में अछूत जैसा व्यवहार होने लगा। किसी की दृष्टि इन लोगों पर नहीं पड़ी I आधुनिक काल अथवा आधुनिक साहित्य से अधिक तो इसका पुराणों में उल्लेख मिल जाता है।

स्वतंत्रता के बाद से लेकर अब तक का हिन्दी साहित्य विविध विषयों को लेकर पाठकों के सामने आया है। हम वैज्ञानिक विकास की बात करते हैं , समाज की संरचना परिवर्तित होने लगी , लोगों की मानसिकता , लोगों के चिंतन , लोगों के सोच आदि में भी बदलाव आने लगा। बदलाव की जो बारीकियाँ हैं जिसे साहित्यकारों ने परखा तथा उसे अनुभव किया उसको उन्होंने बाद कथा साहित्य में पिरोना आरंभ कर दिया । दलित विमर्श , स्त्री विमर्श , आदिवासी विमर्श , दिव्यांग विमर्श , अल्पसंख्यक विमर्श , किसान विमर्श और किन्नर विमर्श इसके उदाहरण हैं I

इक्कीसवीं शती तक किन्नर केंद्रित रचना नहीं हुई । इसका कारण यह है कि किन्नर साहित्य में ही नहीं बल्कि समाज में भी अस्पृश माने जाते

रहे। इक्कीसवीं शती के साहित्यकारों में यह चेतना जाग्रत हुई और उन्होंने इस चेतना को लगातार गत्यात्मकता प्रदान किया।

किन्नर साहित्य ने किन्नरों के प्रति जो यथार्थ का चित्रण किया है उन्हें किन्नरों का वास्तविक दस्तावेज़ कहा जा सकता है। इन दस्तावेजों के माध्यम से सही मायने में किन्नरों की स्थितियों का परिचय प्राप्त किया जा सकता है । आज के उपन्यास , कहानी और आत्मकथाओं में किन्नर जीवन के मार्मिक पहलुओं का सहजता से बयान किया गया है । इनके जीवन में दुःख और पीड़ा के अलावा अन्य कुछ नहीं है ।

हिन्दी साहित्य जगत में किन्नरों को केंद्र में रखकर साहित्य बहुत ही कम मात्रा में लिखा गया है। राहुल सांकृत्यायन , रांगेय राघव , पांडे बेचन शर्मा 'उग्र' जैसे रचनाकारों को छोड़कर आधुनिक काल में किन्नर पात्रीय रचना बहुत कम हुई है। इक्कीसवीं शती के साहित्यकार किन्नरों को लेकर गंभीरता से रचनाएँ लिख रहे हैं। स्त्री , दलित , आदिवासी , दिव्यांग आदि विमर्शों की भाँति आज किन्नर विमर्श भी समाज के सामने आ रहा है और साहित्यकार निरंतर इस पर लेखनी

चला रहे है। उपन्यास , नाटक , कविता , आत्मकथा आदि विधाएँ इसमें अपना महत्वपूर्ण स्थान बना रही हैं ।

3.2. हिन्दी उपन्यास साहित्य में किन्नर जीवन

उपन्यास हिन्दी साहित्य की सशक्त विधा है। हिन्दी उपन्यासकारों ने विभिन्न विषयों को आधार बनाकर रचना की। डॉ. हबेट जे. मूलर के अनुसार " उपन्यास में मानव - अनुभवों का चित्रण एक विशिष्टता के साथ स्वतंत्र अथवा आदर्शात्मक दृष्टिकोण से किया जाता है। अतः अनिवार्यतः जीवन पर की गई टिप्पणी है।"[4] हिंदी उपन्यास का प्रारंभ श्रद्दाराम फुल्लौरी के 'भाग्यवती' उपन्यास से होता है। इसमें मतभेद होते हुए भी यह सर्वमान्य है कि भाग्यवती एक स्त्री चेतना वाला पहला उपन्यास है। इसके बाद लाला श्रीनिवासदास का उपन्यास परीक्षा गुरु समाज में व्याप्त कुरीतियों के खिलाफ साहित्य की दुनिया में प्रवेश पाता है। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि उपन्यास का आरंभ समाज में आम लोगों की चेतना के विकास में सहायक हुआ है।

प्रेमचंद की उपस्थिति ने उपन्यास को एक नया मोड़ दिया। सर्वप्रथम प्रेमचंद ने ही मज़दूरों, किसानों, स्त्रियों और दलितों को अपनी रचनाओं के ज़रिए पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया। आधुनिक युग में शिक्षा के प्रचार- प्रसार के कारण समाज में शोषित रहे लोगों के बारे में जानने का मौका मिलने लगा जिसमें स्त्रियाँ , दलितों , आदिवासियों के साथ - साथ किसान और मज़दूर भी शामिल हैं। हमारे समाज में इन लोगों के अलावा एक और वर्ग भी है जो सदियों से मुख्यधारा का अंग नहीं बन सका

। इस तबके को समाज किन्नर , हिजड़ा , ट्रांसजेंडर , खोजा आदि संज्ञाओं से संबोधित करता है।

समकालीन उपन्यास नए विमर्शों को लेकर अपनी यात्रा कर रहा है जिसमें स्त्री,दलित, आदिवासी, मजदूर और किसान अपनी अस्मिता के लिए लड़ रहे हैं । लेकिन इस कड़ी में हाशिए से भी हाशिए पर गए किन्नर समाज पर लोगों का ध्यान बहुत कम गया है। लेकिन आज कई साहित्यकार किन्नरों को लेकर गंभीरता से लिख रहे हैं ।

हिंदी उपन्यास के क्षेत्र में किन्नर विमर्श पर लिखा गया पहला उपन्यास नीरजा माधव द्वारा लिखित ' यमदीप ' है। यह उपन्यास किन्नर पर आधारित हिंदी साहित्य जगत में मील के पत्थर के समान है। उसके बाद प्रदीप सौरभ का 'तीसरी ताली' ,महेंद्र भीष्म का 'किन्नर कथा' , निर्मला भुराडिया का 'गुलाम मंडी' , चित्रा मुद्गल जी का ' पोस्ट बॉक्स नंबर 203 नालासोपारा' , डॉ.मोनिका देवी का 'अस्तित्व की तलाश में सिमरन' आदि महत्वपूर्ण उपन्यास लिखे गए हैं । और इस क्षेत्र में कई अन्य उपन्यास भी प्रकाशित हो रहे हैं । मैं यहां कुछ महत्वपूर्ण उपन्यासों का जिक्र करूंगा।

3.2.1. यमदीप

हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में यदि हम यमदीप उपन्यास की बात करें तो, यह नीरजा माधव जी द्वारा रचित उपन्यास किन्नरों के जीवन पर

आधारित है। यह हिन्दी का प्रथम उपन्यास है जिसमें किन्नर के विषय में कहा गया है। इसका प्रकाशन 2002 में हुआ था | इसके अनेक संस्करण आए हैं। जो पाठकों में बहुत ही लोकप्रिय हुए हैं। नीरजा माधव जी एक ऐसी उपन्यासकार हैं जिनका ध्यान समाज में उपेक्षित वर्ग के ऊपर गया है और उन्होंने इस समुदाय को अपने लेखन का विषय बनाया। उन्होंने इन सबके बीच में जाकर उनके रहने के तौर तरीके, उनके स्वभाव, उनका खानपान, और उनके जीवन में दुख और कष्टों को बड़ी ही निकटता से देखा है। उपन्यासकार ने इन्हें सभ्य समाज से जोड़ने के लिए ही अपनी कलम उठाई और किन्नरों के संपूर्ण जीवन को एक दिशा देते हुए 'यमदीप' नाम के इस उपन्यास को हम सबके बीच प्रस्तुत किया है। जिस प्रकार हम दीपावली के एक दिन पहले घर से यमदीप निकालते हैं और उस दीप को जहाँ भी घर से बाहर कूड़ा कचरा या गोबर एकत्र करने के स्थान पर जिसे हम घूर कहते हैं वहाँ पर रखा जाता है | वह दीप तो होता है लेकिन वह दीप साधारण नहीं, बल्कि यम का होता है और इस दीप को घर के अंदर नहीं रखा जाता है। हालांकि वह सामान्य दीपों की तरह ही रौशनी बिखेरता है, उतना ही उजाला प्रदान करता है, अपने आसपास की जगह को रोशन करता है परंतु उसे घर में जगह नहीं दी जा सकती है | समाज में उसका स्थान घर से बाहर गोबर एकत्र करने वाले स्थान यानी घूर के ऊपर होता है। उपन्यासकार के अनुसार ठीक इसी प्रकार से किन्नर को भी हमारे समाज में जगह न देते हुए उन्हें घर से बाहर निकाल करके एक

स्थान प्रदान किया गया है। यह बड़ा ही दुखद है, वह घर के अन्य बच्चों के साथ नहीं रह सकता है क्योंकि वह उनसे भिन्न है। वह किन्नर है, इसलिए उसे परिवार में माता- पिता, भाई-बहन अपने साथ नहीं रखना चाहते हैं। वह लिंगविहीन होने के कारण उपेक्षित हो चुका है, तिरस्कृत हो चुका है और परिवार से दूर भी हो चुका है। वह अब भीख या फिर वेश्यावृत्ति कर अपना जीवन यापन करने को विवश है और जिस तरह से हम सब यमदीप को घूर पर रखने के बाद मुड़कर भी उसे देखना पसंद नहीं करते हैं ठीक उसी तरह से इन किन्नर बच्चों को भी घर से बाहर निकालने के बाद उनकी खोज खबर लेने वाला कोई नहीं होता | इसलिए नीरजा माधव जी के इस उपन्यास का शीर्षक बहुत ही उचित और प्रतिकात्मक सिद्ध होता है।

यमदीप उपन्यास के प्रारंभ में ही किन्नरों का मन मानवतावाद से ओतप्रोत देखने को मिलता है | जहाँ गली में एक पागल स्त्री प्रसव पीड़ा से तड़प रही है और कुछ मनचले पुरुष तथा स्त्रियाँ चुपचाप तमाशबीन बनकर उसे देख रहे हैं परन्तु उस पागल स्त्री के पास कोई नहीं जाता | तब यह किन्नर (नाजबीबी) अपने मानव धर्म को निभाते हुए कहती है- “ अब कोई पूछनहार नहीं, इसका, तो क्या हम भी छोड़ जायेंगे ? अरे हम हिजड़े हैं, हिजड़े ..... इंसान हैं क्या जो मुंह फेर लें ? जा, जल्दी कर |”[5]

इतना ही नहीं उस नवजात बच्ची को सभी पालने से मना कर देते हैं तो नाजबीबी यह कहकर उसे अपने साथ ले जाती है कि इसका इस दुनिया में कोई नहीं यदि वह भी छोड़ देगी तो यह मर जाएगी | सभी बच्ची को देखर खुश हो जाते हैं | अब उस बच्ची के नामकरण को लेकर विवाद चलता है कि इसका क्या नाम रखें ? किस धर्म की है ? तभी किन्नरों के महताब गुरु कहते हैं कि - "अरे, दुर्र रे धरम ! रात-बिरात एक पागल के साथ मुंह काला किया, धरम की बात पर....थू है ऐसे धरम पर और ऐसे धरमवालों पर ! मैं इसका नाम सोना रखती हूँ और इसका नाम अब से सोना ही रहेगा | सारे धरम में सोना सोना ही रहता है कीमती & चमकदार, सभी धरम के लोग पहनते हैं चाहे हिंदू हो या फिर मुसलमान|रही इस बच्ची के धरम कि बात तो नाजबीबी पैदाइशी हिंदू है और इसे पालने के कारण सोना का भी धरम हिंदू | चल , अब सारा झगडा ख़तम"6 |

किन्नरों का न तो कोई परिवार होता है और न ही उनके बच्चे, वे प्रेम से लालायित आपस में ही प्रेम करते हैं। सोना के आने से पूरी बस्ती में एक नई जान आ गई थी सब उस नन्ही बच्ची को बहुत प्यार करते थे। परन्तु नाजबीवी अब उसकी माँ बन गयी थी, नाजबीबी का हृदय ममता से उमड़ रहा था उसके हृदय में एक माँ की ममता घर कर गई थी। वह हमेशा सोना का ध्यान रखती थी- "एक बार सोना पेशाब से गीली होने के कारण रोने

लगती हैं, वह अपनी नींद गंवा जल्दी से उठकर बच्ची को गोद में उठा लिया। गुलाबी रंग का सूती झबला पूरी तरह गीला हो गया था उसने दूसरे हाथ से बिस्तर छुआ तो गीला था नाजबीबी ने बड़े आराम से गीले स्थान पर अपना दुपट्टा फैला दिया।" [7] यहाँ पर रचनाकार ने एक किन्नर के मन में माँ की ममता को दिखलाने का प्रयास किया है |

हालांकि अगर हम किन्नर समाज की बात करें तो वहाँ पुरुषों का प्रवेश या उनके साथ किसी भी प्रकार का सम्पर्क वर्जित होता है, परंतु समाज की बाध्यताओं को तोड़कर नाजबीबी ने सभ्य समाज की बच्ची सोना को अच्छी परवरिश के लिए रामशरण नामक पुरुष को गिरिया बनाती है। सभ्य समाज के कुछ पुरुष इतने नैतिकता विहीन है कि पागल स्त्री तक का बलात्कार करने से नहीं चूकते। पर ये किन्नर इन सभ्य समाज से कहीं बेहतर है जो ऐसी बच्ची का लालन पालन करते हैं जिसके साथ उनका कोई रिश्ता नहीं है। वे इसके लिए अपने आप तक को बेचते हैं। अगर हम सरकार की बात करें तो सरकार ने इनके लिए न तो कोई रोजगार के अवसर दिए और न ही इन्हें सभ्य समाज में जगह दिलाई। पर इनकी जीविका तो सबके समान ही हैं। रोटी, कपड़ा और मकान जिससे ये अपने जीवन का यापन कर सकें। नीरजा माधव जी ने इस उपन्यास में किन्नरों के भावात्मक प्रेम का बड़ा ही सूक्ष्मता से वर्णन किया है | पागल स्त्री की बेटी सोना जो अब किन्नर नाजबीबी की जान बन चुकी है थी उसे वह अपने से

दूर नहीं करना चाहती है किंतु डॉक्टर की शिकायत पर हमारे समाज के रक्षक पुलिस उस किन्नरों से लेकर गृह पहुंचाने आ जाती है | सोना को अब तक यह भी पता न था कि वह पागल स्त्री की पुत्री है | उसने अपनी आंखें नाजबीबी की गोद में खोली थी और बचपन नाजबीबी के साथ ही किन्नरों की बस्ती में गुजारा था | बस्ती के सारे किन्नर उसे अपनी बेटी की तरह प्यार किया करते थे लेकिन सोना इस बस्ती से दूर जाने की बात सुन कर के बहुत उदास हो जाती है | नाजबीबी ने इतने सालों से सोना को अपनी बेटी की तरह पाला था अब उससे दूर जाने की बात सुनकर के वह रोती हुई चमेली से कहती है कि - "हिम्मत नहीं पड़ रही चमेली सोना को सच बताने की क्या करूं ? पता नहीं उसके दिमाग पर क्या असर पड़े ? जब वह यह जाने कि वह पागल औरत के पेट से जन्मी है और उसकी मां मर चुकी है"[४]। नाजबीबी की आवाज में बड़ा दुख था उद्धार गृह के नाम पर वेश्यावृत्ति चलाने वालों ने सभ्य समाज की पोल खोल दी है | लेखिका ने दिखाया है कि किस प्रकार वेश्यावृत्ति करने वाली महिलाओं के साथ समाज दुर्व्यवहार करता है परंतु समाज में महिलाओं के उद्दार के नाम पर वेश्यालय चलाने वाले सफेद पोहा रात के अंधेरे में समाज का कितना उद्दार कर रहें ये प्रश्न बहुत गहरे में बैठा हुआ है। समाज की पारस्परिक तुलना वेश्यालय से की है और इस उपन्यास में उस चीज को दिखाने का प्रयास भी किया गया है इस संस्थान की पोल खुलती है तो सारे के सारे समाज के सफेदपोश नेता इसकी चपेट में आ जाते हैं |

उपन्यास की लेखिका की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि कोई ऐसा उपन्यास नहीं है जिसमें किन्नरों की सांकेतिक भाषा का उल्लेख हो लेकिन नीरजा माधव जी ने उनकी संकेतिक भाषा को यहाँ दिखने का प्रयास किया है साथ ही उनकी जितनी भी समस्याएं हैं उन सभी को अपने इस उपन्यास का विषय बनाया है और उसको साहित्य के साथ समाज में भी स्थान देने की कोशिश की है | नीरजा माधव जी हिंदी साहित्य जगत की पहली ऐसी लेखिका हैं जो किन्नर समाज को पाठकों के समक्ष बेबाकी से प्रस्तुत करती है । उन्होंने यह बताने का प्रयास किया है कि हमारे समाज में भ्रष्टाचार, कुरीतियां, अनैतिकता, हिंसा अपने चरम सीमा पर है और जिसे शायद यह किन्नर ही दूर कर सकेंगे | उपन्यास के अंत में किन्नर नाजबीबी को राजनीति में प्रवेश करते दिखाया गया है क्योंकि उसका अपने समाज से मोहभंग हो चुका है | लेखिका ने भी सकारात्मक दृष्टिकोण के आधार पर आशा की किरण दिखाते हुए इस बात पर बल दिया है कि शायद किन्नर ही देश में बदलाव ला सकें | यह उपन्यास हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि है जिसके लिए जितनी भी सराहना की जाए उतनी कम है |

3.2.2. मैं भी औरत हूँ

'मैं भी औरत हूँ' डॉक्टर अनुसूया त्यागी जी का ऐसा उपन्यास है जिसमें उन्होंने जन्म से बच्चों में लैंगिक कमी से आई परेशानियों को पूरी तरह से उजागर करने की कोशिश की है। अगर हम इस उपन्यास की बात

करें तो उन्होंने इस उपन्यास के जरिए लिंग विकृति को एक ऐसे समूह की सच्चाई को हम सबके सामने लाने का प्रयास किया है जिसे हम किन्नर के रूप में जानते हैं आज जहां एक ओर किन्नर का एक बड़ा समूह अपने आप को मुख्यधारा से कटा हुआ सा महसूस करता है वहीं हैं अज्ञानतावश कई लोग इस पूर्णता से वंचित रह जाते हैं इसी जागरूकता की ओर लेखिका ने इशारा किया है और इसको बताने व समझाने का प्रयास किया है | इसमें रोशनी और दो पात्रों को केंद्र में रखकर इस उपन्यास का ताना-बाना बुनने की कोशिश की गई है | दोनों बचपन में लड़कियों की अपेक्षा अपने आपको थोड़ा अलग महसूस करती हैं और किशोरावस्था से युवावस्था में प्रवेश करती हैं तो उस समय उनके शरीर में तमाम परिवर्तन उस प्रकार से नहीं होते हैं जो एक सामान्य लड़कियों में देखा जाता है और लेखिका ने इन दोनों को मेडिकल साइंस के जरिए सामान्य बनाने का जो प्रयास किया है वह सचमुच बच्चों के मां-बाप के लिए एक मील का पत्थर साबित हो सकता है | एक अच्छी प्रेरणा का स्रोत बन सकता है | लेखिका ने रोशनी के बचपन की एक घटना का उल्लेख किया है जिसमें "एक दिन वह सुबह शौच के लिए जाती है और वहां पर कई लड़के आकर उसके साथ दुराचार करने की कोशिश करते हैं लेकिन उन लड़कों में से एक लड़का बलात्कार की कोशिश करता है तो उसे यह अहसास होता है कि यह किन्नर है और वह उसे अपमानित करता है साथ ही साथ बाकी लड़कों को बताता है कि यह किन्नर है और वहां से सभी रौशनी को धमकी देकर भाग

जाते हैं”[9] | तब रौशनी को पता चलता है कि शायद इसके अंदर कुछ शारीरिक बदलाव हैं जो एक आम लड़कियों में होते हैं | उपन्यासकार ने यह बताने की कोशिश की है कि ऐसे लोगों को मुख्यधारा में जोड़ने के लिए उनका ऑपरेशन किया जा सकता है | यह किन्नरों के मां-बाप के लिए बहुत ही अच्छी पहल के रूप में हो सकता है |

3.2.3. तीसरी ताली

यह उपन्यास उभयलिंगी, किन्नरों और लेस्बियन की हाशिये पर बसर हो रही जिंदगी की कहानी का बयान करती है| "यह उभयलिंगी सामाजिक दुनिया के बीच और किन्नरों लौंडों, लौंडेबाजों, लेस्बियनों और विकृत-प्रकृति की ऐसी दुनिया है जो हर शहर में मौजूद है और समाज के हाशिये पर जिन्दगी जीते रहते हैं । अलीगढ़ से लेकर आरा, बलिया, छपरा, देवरिया यानी 'एबीसीडी' तक, दिल्ली से लेकर पूरे भारत में फैली यह दुनिया समान्तर जीवन जीती है।”[10] प्रदीप सौरभ ने इस दुनिया के उस तहखाने में झाँका है, जिसका अस्तित्व सब 'मानते' तो हैं लेकिन 'जानते' नहीं। समकालीन 'बहुसांस्कृतिक' दौर के 'गे', 'लेस्बियन', 'ट्रांसजेंडर' अप्राकृत-यौनात्मक जीवन शैलियों के सीमित सांस्कृतिक

स्वीकार में भी यह दुनिया अप्रिय, अकाम्य, अवांछित और वर्जित दुनिया है। यहाँ जितने चरित्र आते हैं वे सब नपुंसकत्व या परलिंगी या अप्राकृत यौन वाले ही हैं। परिवार परित्यक्त, समाज बहिष्कृत-दण्डित ये 'जन' भी किसी तरह जीते हैं। असामान्य लिंगी होने के साथ ही समाज के हाशियों पर धकेल दिए गये हैं। इनकी सबसे बड़ी समस्या आजीविका है जो इन्हें अन्तत: इनके समुदायों में ले जाती है। इनका वर्जित लिंगी होने का अकेलापन 'एक्स्ट्रा' है और वही इनकी जिन्दगी का निर्णायक तत्त्व है। अकेले-अकेले बहिष्कृत ये किन्नर आर्थिक रूप से भी हाशिये पर डाल दिये जाते हैं। कल्चरल तरीके से 'फिक्स' कर दिये जाते हैं। हमारे समाज में किन्नर समुदाय का एक बड़ा हिस्सा हाशिए पर जीवन व्यतीत कर रहा है। सामाजिक अस्वीकार्यता की वजह से रोजगार के सामान्य अवसर भी इनके हाथ से छिन जाते हैं। इनकी अशिक्षा भी अधिकारों की लड़ाई में इन्हें अक्षम बनाती है। हालांकि वैश्विक परिदृश्य में इस तरह के लोगों के संगठित होने से तृतीय लिंग की स्थिति में बदलाव दिखाई दे रहे हैं। इसमें कोई दो राय नहीं कि वर्तमान समय में तृतीय लिंग समुदाय की स्थिति में बदलाव आया है। वे अपनी अस्मिता और अधिकारों को लेकर गंभीर हुए हैं, साथ ही पारंपरिक रूप से जो सांस्कृतिक घेरा बनाया गया है, उनके काम को

लेकर जीविकोपार्जन के साधन को लेकर आज उनमें भी बदलाव आ रहा है और यह समुदाय शिक्षा और स्वरोजगार के क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहे हैं। जीवनशैली की लिंगीयता है जिसमें स्त्रीलिंग-पुल्लिंग मुख्यधाराएँ हैं जो इनको दबा देती हैं। नपुंसकलिंगी कहाँ कैसे जिएँगे ? समाज का सहज स्वीकृत हिस्सा कब बनेंगे ? यह एक बहुत बड़ा प्रश्न है।

प्रदीप सौरभ का यह उपन्यास 'तीसरी ताली' लेखक की जबरदस्त पर्यवेक्षण-क्षमता का सबूत है। यहाँ वर्जित समाज की फुर्तीली कहानी है, जिसमें इस दुनिया का शब्दकोश जीवित हो उठा है। लेखक की गहरी हमदर्दी इस जिन्दगी के अयाचित दुखों और अकेलेपन की तरह है। इस दुनिया को पढ़कर ही समझा जा सकता है कि इस दुनिया को बाकी समाज जिस निर्मम क्रूरता से 'डील' करता है वही क्रूरता इनमें हर स्तर पर 'इनवर्ट' होती रहती है। उनकी जिन्दगी का हर पाठ आत्मदंड, आत्मक्रूरता, चिर यातना का पाठ है। यह हिन्दी का एक साहसी उपन्यास है जो जेंडर के इस अकेलेपन और जेंडर के अलगाव के बावजूद समाज में जीने की ललक से भरपूर दुनिया का परिचय कराता है। एक तृतीय लिंगी बच्चे में भी वे प्रत्येक संवेदनाएं होती हैं जो सामान्यतः हर बालक में नजर आती हैं जैसे अक्सर जब बच्चे को माता-पिता से कुछ क्षणों के लिए दूर

किया जाता है तो वह बच्चा उनके बगैर रह नहीं पाता प्रतिक्रिया स्वरूप रोने लगता है और उनके सान्निध्य में ही रहना चाहता है लेकिन एक तृतीय लिंगी बालक को जब परिवार से परित्यक्त कर किन्नर समुदाय में दे दिया जाता है तो उसके लिए धारणा बना ली जाती है कि वह बच्चा (किन्नर) अपने परिवार को पूरी तरह से भूल किन्नर समुदाय को ही अपना परिवार मान लेता है और अपने मूल परिवार के प्रति उसके मन में कोई संवेदना नहीं रहती, जो कि गलत तथ्य है। बाकी बच्चों की तरह इनका भी मन अपने परिवार के लिए छटपटाता है लेकिन विपरीत परिस्थितियों के कारण ये अपनी इच्छाओं का दमन कर जाते हैं। दमन की प्रक्रिया में कहीं न कहीं हमारी सामाजिक व्यवस्था जिम्मेदार होती है, जिसके तानों और उपेक्षाओं से अपने परिवार को बचाने के लिए यह समुदाय उनसे अलगाव की स्थिति ग्रहण कर लेता है।

प्रदीप सौरभ कृत "तीसरी ताली" उपन्यास में भी विनीता स्वेच्छा से अपना गृह त्याग करती है लेकिन उसके परिवार द्वारा उसे ढूंढने की एक मृत कोशिश भी नहीं की जाती समाज से जूझते हुए विनीता को घर में रखने के अपने फैसले पर गौतम साहब भी अफसोस मनाते हैं। घर में विनीता की अनुपस्थिति सब को सुकून दे जाती है लेकिन सब कुछ त्याग करने वाली विनीता संसार में अकेली हो चुकी थी उसके पास अपना कहने वाला कोई नहीं था जिससे वह अपने सुख-दुख साझा कर सके। "बेशक वह

दूर निकली गई थी और प्रतिशोध में अपने जीवित माता-पिता की तेरहवीं भी कर चुकी थी, मगर सब कुछ के बावजूद वह अकेली थी। वह जितनी ऊपर जाती, उतनी अकेली हो जाती।"[11] 'गे वर्ल्ड' जैसे पॉप्यूलर ब्यूटी सैलून को खोलने एवं पेज थ्री की ब्यूटी क्वीन बनने के बावजूद विनीता का अकेलापन उसको सांप की तरह डंसत सुबह का सूरज अपनी चमक से विनीता की कामयाबी में नित नया उजाला भरता, दोपहर-भर उसकी उष्णता उसके काम में ऊर्जा भरती, पर शाम ढलते-ढलते ही थके सूरज की तरह, वह मानो अपने लिए ही बेमानी हो जाती थी। विनीता के भीतर अकेलेपन से उपजा द्वंद्व उसे बेचैन बना जाता। असल में वह प्रतिशोध और प्यार के उस द्वंद्व से जूझ रही थी जिसमें परिवार द्वारा न तलाशे जाने की नफरत थी और साथ ही पिता से बिछुड़ने की पीड़ा। मिलन सिंह ने इस उपन्यास के बारे में अपनी पुस्तक 'किन्नर विमर्श' में कहा गया है कि - "यह हिन्दी का एक ऐसा उपन्यास है जो जेंडर के अकेलेपन और जेंडर के अलगाव के बावजूद समाज में जीने की ललक से भरपूर दुनिया का परिचय कराता है। जीवन में ऐसे तमाम सच होते हैं जिसे हम माने या नहीं माने लेकिन उनका अपना वजूद है क्योंकि उन पर समाज की मुहर भले ही नहीं लगी हो लेकिन वक्त ने बेवक्त मुहर जरूर लगाई है।"[12] दुनिया का हर जीव

किसी न किसी के सान्निध्य में रहना स्वीकार करता है। यही सान्निध्य उसे परिवार से बांधकर समाज निर्माण में सहायक होता है लेकिन इस समुदाय को परिवार में ही संरक्षण नहीं मिलता तो ये समाज में अपना अस्तित्व कहां से बना पाएंगे? इस उपन्यास में अकेलेपन की अभिव्यक्ति के रूप में तृतीय लिंग समुदाय के जीवन के उस पक्ष पर प्रकाश डाला गया है जो परिवार से दूर होने से लेकर इनकी मृत्यु तक इनके साथ चलता है। आपस में रिश्तों को जन्म देना इसी अकेलेपन को दूर करने की एक कवायद होती है। होश संभालने के साथ ही जब ये आम परिवार से पृथक कर दिए जाते हैं या हो जाते हैं तो अपने अकेलेपन की कमी को कम करने के लिए हिजड़े आपस में ही रिश्ते कायम कर लेते हैं जब कहीं कोई हिजड़ा बच्चा उन्हें प्राप्त होता है तो लक्षणों के अनुसार बेटा या बेटी मान लेते हैं। परंतु वस्तुतः इसमें कोई पूर्ण पुरुष या स्त्री तो होता नहीं है। इस प्रकार समकक्ष लोगों के बीच ही ये माता, पिता, पति, बहन, बेटी आदि रिश्ते कायम कर रहते हैं।

3.2.4 किन्नर कथा

महेंद्र भीष्म एक जाना पहचाना नाम है। इनकी अनेक रचनाएँ हिंदी साहित्य की सेवा में तत्पर हैं लेकिन इन्होंने अपने रचना संसार में जो धमाका किया है वह 'किन्नर कथा' के नाम से जाना जाता है।

प्राय: चर्चाओं में सुनने में आता है कि ईश्वर ने मानव समुदाय में केवल दो ही जातियां बनाई हैं स्त्री और पुरुष। लेकिन ऐसी चर्चाओं में तीसरी जाति को सिरे से ही अलग कर दिया जाता है। यह तीसरी जाति है मंगलमुखी (किन्नर)समुदाय की जिसको हमारे समाज में कभी महत्व ही नहीं दिया गया। बल्कि सच कहें तो उसे बराबर अपमानित किया गया। सर्वोच्च न्यायालय के संज्ञान में आने के बाद ट्रांसजेंडर को मिला चुनाव का अधिकार इस समुदाय के जीवन के लिए एक क्रांतिकारी घटना है। साहित्य सिनेमा और समाज तीनों में किन्नर समुदाय हमेशा उपहास का पात्र बनाया जाता रहा है। सभी को हंसाने, खिलखिलाने , गुदगुदाने और बधाइयां देने वाला यह समुदाय कभी भी आदर और सम्मान नहीं पाता यह हमारे समाज की सबसे बड़ी विडंबना है। महेंद्र भीष्म एक ऐसे संवेदनशील कथाकार हैं जिन्होंने किन्नर समुदाय के जीवन की पीड़ा उससे गहरे जुड़कर व्यक्त की।उनकी पीड़ा को महसूस किया और उन्हें एक नहीं दो-दो उपन्यासों में बड़ी गरिमा और गहरी संवेदना के साथ चित्रित किया। उनके जीवन के दुख दर्द को जितनी गंभीरता से महेंद्र भीष्म लेते हैं उससे यह प्रतीत होता है कि वे केवल किन्नर को लेखन तक ही सीमित नहीं करना चाहते बल्कि वे समाज में उन्हें वह खोया हुआ स्थान दिलाना चाहते हैं जिससे कि वे अपनी प्रतिष्ठा को प्राप्त कर सकें और सम्मानजनक जीवन जी सकें। लिंग भेद से ऊपर उठकर वह एक मनुष्य की तरह अपना जीवन यापन कर सकें। इस उपन्यास में मंगलमुखी समाज वह मनोविज्ञान है

जिसे कोई फ्रायड नहीं मिला। इसी वज़ह से यहाँ का इडिपस कन्प्लेक्श सामाजिक काम्प्लैक्स बन के रह जाता है। यहाँ एक साथ समाज मनोविज्ञान भी है और बाल मनोविज्ञान भी। साथ ही बच्चे के भीतर लिंग बोध से उपजे असुरक्षा का भय भी है।इस मनो विज्ञान के आलोक में साफ़ देखा जा सकता है कि बच्चों को शरीर का दर्द उतना नहीं सताता जितना मन का और बच्चा जब अंक में हो तो उसके संवेग और प्रबल हो जाते हैं।इस कारण वे कभी-कभी ऐसे फैसले भी ले लेते हैं जिससे उनका सारा जीवन नरक हो जाता है l इसका प्रमाण उपन्यास में इस प्रकार चित्रित किया है -"एकाएक मेरे मन में विचार आया फिर पीटी जाऊं मारी जाऊँ इससे अच्छा है मैं खुद ही न मर जाऊं और फिर एक बार जो मेरे मन में यह विचार आया तो फिर मरने की इच्छा गहराती चली गई ।अम्मा को भीगी पलकों से निहारते हुए दालान में पड़े तख्त पर लेटे अपने जन्मदाता को देख रोने लगी । मुझे वह दृश्य याद आ गया जब भरे गले पिताजी ने मुझे पहली बार स्नेह के साथ लड़के के कपड़े देते हुए कहा था 'जुगनू।' जुगनू नाम से जिंदा रहे। मैंने तख्त के दो चक्कर लगाते हुए पिताजी की ओर देखा। उनके पैरों के पास आकर अपना सिर रख दिया और बिना पीछे मुड़कर देखे घर का दरवाजा खोल--- देह का विनाश करने निकल पड़ी मैंने तय कर लिया था घर के बाहर के रास्ते अगले मोड पर बने कुएं में छलांग लगा दूंगी ना रहेगी यह हिजड़ा देह ना रहेंगे ताने जो मुझे और मेरे परिवार को मेरे कारण मिल रहे थे। पिताजी मानसिक कष्ट विहीन हो जाएंगे।मेरी वजह

से अम्मा और बहनों को जो संताप और दुख उठाने पड़ते हैं उससे वह मुक्त हो जाएंगी।" [13] इस तरह महेंद्र भीष्म के समूचे कथा साहित्य और विशेष रूप से 'किन्नर कथा' की झंकृति पर झूमता लोक है।

3.2.5 'गुलाम मंडी'

सुविख्यात लेखिका निर्मला भुराड़िया विशेष बधाई की हकदार हैं कि उपन्यास 'गुलाम मंडी' लिखकर उन्होंने न सिर्फ एक जटिल विषय को अपने लेखन का केंद्र बनाया है बल्कि गहनतम संवेदना के स्तर पर गुलामी के दंश को वे बड़ी कुशलता से अभिव्यक्त भी कर सकी हैं। इस एक ज्वलंत विषय के बहाने उन्होंने कोशिश की है कि इसके आसपास की जो भी विकराल समस्याएं हैं उन्हें भी समेटा जाए। परिणाम स्वरूप उनके सद्य:प्रकाशित उपन्यास 'गुलाम मंडी' में समाज के सर्वाधिक तिरस्कृत वर्ग किन्नर से लेकर जिस्मफरोशी और मानव तस्करी की निर्मोही और भयावह दुनिया को भी उकेरा गया है। उपन्यास में विषय की मांग के अनुसार उपन्यासकार ने हर उस सच को उघाड़कर रख दिया है जिसे हमारा दो चेहरे वाला तथाकथित सभ्य समाज अपनी मायावी दुनिया की सतह के नीचे ही रखना चाहता है। जब-जब सतह फोड़कर यह सच सामने आने की कोशिश करता है उसे बेशर्मी से दबाने की पुरजोर कोशिश की जाती है। उपन्यास की नायिकाएं कल्याणी और जानकी हैं जिनके माध्यम

से चमकीली दुनिया के पीछे सांस लेती उस कठोर और दिल को हिलाकर रख देने वाली दुनिया का रेशा-रेशा चरित्र उधेड़ा गया है जो आज भी हमारे लिए रहस्यमयी अपराध की दुनिया है। उपन्यास में समाज का हर रंग है, हर तरह का रस है, लेकिन फिर इसी के साथ जोर से पड़ने वाला वह करारा तमाचा भी है जो पाठक को झनझना कर रख देता है । कहीं-कहीं पर भाषा के लिहाज से खुली अभिव्यक्ति देखने को मिलती है जो किसी पाठक को नागवार गुजर सकती है लेकिन कड़वे और नग्न सच की तुलना में विषय की गंभीरता को इसी तीखे अंदाज में रखना जरूरी भी है। उपन्यास में एक से अधिक कहानियां गुंथी गई है हर कहानी का अपना स्वतंत्र वजूद भी है और वे परस्पर सरोकार भी रखती हैं। पढ़ते-पढ़ते कहीं-कहीं स्तब्ध होकर बस दो बूंद भर आंख से निकल पाती है तो कहीं व्यग्रता की उबकाई आते-आते रूक जाती है। उपन्यास बताता है कि मात्र देह मानी जाने से लेकर देवी कहलाने तक एक स्त्री के अंतर का दुःख आज तक कोई नहीं समझ सका तो किन्नरों के दर्द को समझने का कलेजा कहां से आएगा? लेखिका निर्मला भुराड़िया के अनुसार- “बचपन से ही देखती आई हूं उन लोगों के प्रति समाज के तिरस्कार को जिन्हें प्रकृति ने तयशुदा जेंडर नहीं दिया। इसमें उनका क्या दोष? ये क्यों हमेशा त्यागे गए, दुरदुराए गए, सताए गए, अपमान के भागी बने? इन्हें हिजड़ा, किन्नर, वृहन्नला कई नामों से पुकारा जाता है मगर हमेशा तिरस्कार के साथ ही क्यों? आखिर

ये बाकी इंसानों की तरह मानवीय गरिमा के हकदार क्यों नहीं?”[14]

उपन्यास पठनीय है और लेखिका का प्रयास प्रशंसनीय है। क्योंकि यह एक ऐसे विषय पर रचा गया है जिस पर सारा समाज बोलने और लिखने से बचता है।

3.2.6. मैं पायल

सामान्य समाज के लोग नपुसंकलिंगी सन्तान का पालन-पोषण करने में स्वयं को कलंकित होना मानते हैं जबकि समाज विकलांग, रोगग्रसित बच्चों का पालन-पोषण प्यार से करता है। इस प्रकार अगर किन्नर बच्चों की परवरिश भी सही तरीके से की जाए, तो वही बच्चे आगे चलकर समाज में सक्षम होकर समाज के लिए एक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत हो सकते हैं। इसके विपरीत समाज उन्हें अपनाने से दूर भागता है फिर वे दर-दर की ठोकर खाते हैं। इस संदर्भ में ‘शबनम मौसी किन्नर’ समाज के प्रति अपना मत प्रकट करती हैं-“लोग कुत्ते को पालते हैं, उनको इज्जत देते हैं, कितने प्यार से उसको खाना खिलाते हैं, अपनी गाड़ियों में बिठाते हैं, बिस्तर पर सुलाते हैं, वह एक कुत्ता है, जब आप उसे जीने का अधिकार देते हो तो किन्नर को क्यों नही?” [15] कथन से स्पष्ट होता हैं कि समाज तृतीयलिंगी लोगों के प्रति कितना असंवेदनशील है।

आज किन्नर भले ही कहीं लम्बी कतार में दिखाई दे रहे हैं परन्तु उनका स्थान हमेशा ही आखिरी छोर रहा है।

"मैं पायल" लखनऊ की किन्नर गुरु पायल सिंह के जीवन-संघर्ष पर आधारित एक जीवनीपरक उपन्यास है जिसे कहानीकार और उपन्यासकार महेंद्र भीष्म जी ने लिखा है।

"मैं पायल" उपन्यास के पहले पृष्ठ ने ही मुझे अपनी शैली में क़ैद कर लिया। इस उपन्यास में महेंद्र भीष्म की लेखन शैली बहुत प्रभावी है जो पाठकों के मन-मस्तिष्क में ज़बरदस्त छाप छोड़ती है। इस उपन्यास का प्रत्येक पृष्ठ पाठक को देर तक बाँधकर रखता है और पेज पर कुछ पल के लिए रूकने को मज़बूर करता है।

"मैं पायल" उपन्यास की एक सबसे बड़ी खासियत यह है कि यह एक जीवनीपरक उपन्यास होते हुए भी आपको एक काल्पनिक उपन्यास से कई गुना ज़्यादा मज़ा महसूस होगा। अगर लेखक के पास बेहतरीन शिल्प हो, लेखन में जादू हो, तभी इस तरह का बेहतरीन उपन्यास लिखा जा सकता है। जीवनीपरक उपन्यास होने के बावजूद जिस तरह से प्लाट और सबप्लाट को आपस में बड़ी कुशलता के साथ जोड़ा गया है, यह भी

एक बहुत बड़ी कलाकारी है। इस तरह का जीवनीपरक उपन्यास लिखना इतना आसान काम नहीं है।

इस उपन्यास में वाक्य और वाक्य-विन्यास नदी के धारे की तरह प्रवाहित होता रहता है जिसमें आप बहते चले जायेंगे और पता भी नहीं चलेगा, उपन्यास खत्म हो जायेगा। यह भी इस उपन्यास की एक ख़ासियत है। लेखक ने इस बात का भी बहुत ध्यान रखा है कि उपन्यास में कोई वाक्य भद्दा और अश्लील नहीं लगे। ऐसी जगहों पर सांकेतिक वाक्य भी बहुत कुछ कह जाते हैं और वे कहीं से भी अश्लील नहीं लगते हैं। जैसे- "वे पलंग पर उलटे लेटे पंडिताइन भौजी के स्तन पान कर रहे थे। मैं सोचने लगी दाऊ बाबा बहुत भूखे प्यासे हैं, जो ऐसा कर रहे हैं। दूध तो बैठकर, गोदी में या बगल में लेटकर पीना चाहिए, जैसे अम्मा मुझे पिलाती है। यह इस तरह क्यों दूध पी रहे हैं, मैं सोचने लगी। अम्मा के दूध भी तो अच्छे और बड़े-बड़े हैं, फिर उनके दूध न पीकर यहाँ इतनी दूर दूध पीने क्यों आये।"16 पायल जी बचपन में यह दृश्य देखकर ऐसा सोच-विचार करती हैं। उदाहरण के लिए एक और वाक्य देखें- "दाऊ बाबा अपना लंगौट खोले पूरे नंग धडंग अपने शरीर के मालिश कर रहे थे। दो पैरों के बीच तीसरे पैर को लटकते देख मैं आश्चर्य में पड़ गयी।" बहन ने बताया, "वह दाऊ

बाबा का घोड़ा है। यह घोड़ा बहुत खतरनाक होता है। बहुत चोट करता है। इसी की चोट से माँ रोती है, क्योंकि पिताजी के पास भी घोड़ा है"।[17]

यह उपन्यास भारतीय समाज की छोटी मानसिकता पर बहुत ज़ोरदार प्रहार करता है। पाठक जिसने गरीब भारतीय समाज में अपना बचपन गुज़ारा है, उसे "मैं पायल" जैसे किरदार से हमदर्दी हो जाती है। इस उपन्यास को सिर्फ़ किन्नर विमर्श के संदर्भ में न लें।

भारतीय नारी की भी कम दुर्दशा नहीं होती है। "मैं पायल" समाज के सभी दबे-कुचले तबक़े की मज़बूत आवाज़ बुलंद करता है। इस उपन्यास में पायल जी के ज़रिये भारतीय मानसिकता का जो बयान देखने को मिलता है, इससे कई बार पाठकों के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। अगर पायल जी को बचपन में ही अच्छा समाज, अच्छे पिता, अच्छे भाई मिलते तो कितना अच्छा होता। अगर किसी का बचपन ही अधूरा रह जाता है, तो बाद में पैसे, धन-दौलत, कार, बंगले हासिल हो जाने पर भी दिल से बचपन की उदासी बाहर नहीं जाती है। ज़िंदगी में किसी न किसी बात का मलाल तो रह ही जाता है।

'मैं पायल' मानसिक और हार्दिक संवेदना से भरा उपन्यास है। पिता और भाई की तरफ़ से अनदेखी, प्रताड़ना, अमानवीय

बर्ताव, पारिवारिक तिरस्कार, समाज का सौतेला व्यवहार, समाज में मर्दों के भेष में कामोत्तेजित भेड़िए आदि पायल की ज़िंदगी को नरक में तब्दील कर देते हैं। ज़िंदगी की इस घड़ी में भी माँ कभी साथ नहीं छोड़ती । माँ माँ होती है, जगत जननी है। एक माँ का दिल अपने हर बच्चे के लिए निर्मल होता है। अगर पायल को ज़िंदगी में करुणारूपी माँ नहीं मिलती तो बेचारी की संवेदना से भी दिल लगाने वाला कोई नहीं होता। उपन्यास में कई भावनात्मक मोड़ आते हैं जो पाठकों का दिल झकझोर देते हैं। बचपन में वह पिताजी के अत्याचार और मार-पीट से आजीज़ आकर घर छोड़ देती है।

फिर बेचारी की ज़िंदगी एक भिखारी से भी बदतर हो जाती है। दर-दर की ठोकर खाती फिरती है। इस मुश्किल घड़ी में अच्छे-बुरे हर तरह के लोगों से उनका सामना होता है। किन्नर गुरु के भेष में ऐसे भी लोग होते हैं, जो अपनों से संवेदना नहीं रखते हैं। उनमें अच्छे लोग भी मिलते हैं। उपन्यास में ये भी देखने को मिलता है कि कैसे किन्नर लोग ख़ुद अंदर से खोखले हैं, मतलबी हैं। इस समाज से लड़ने की, जागरूकता फैलाने की उनमें हिम्मत नहीं है। पायल अपने संघर्ष और उपलब्धि से किन्नर समाज को इस क्रूर भारतीय समाज से लड़ने के लिए हिम्मत प्रदान करती है।

इस उपन्यास के माध्यम से हमें न सिर्फ पायल की समस्याएँ देखने को मिलती हैं बल्कि इसमें तृतीयलिंगी औलाद के प्रति एक माँ की ममता और पिता का पितृसत्तामक आक्रोश भी देखने को मिलता है। किन्नर को सर्वप्रथम घर से तिरस्कृत, उपेक्षित किया जाता है, अगर वहीं अच्छी शिक्षा दी जाए तो वे ताली बजाने का पेशा शायद ही अपनाएंगे। सामान्य समाज के लोगों ने अपने स्वार्थ के खातिर इन लोगों को हाशिये की परिधि पर धकेल दिया तथा कई सालों से इनके साथ अमानवीय व्यवहार करते नज़र आ रहे हैं। लेकिन पायल जैसी संघर्षशील पात्रा से बहुत कुछ सीखने को मिलता है। इस प्रकार कह सकते हैं कि आज किन्नरों को समाज में अपनाने की शुरूआत किन्नर के पैदाइशी परिवार को करनी चाहिए । उनको शारीरिक और मानसिक रूप से प्रताड़ित करके विस्थापित न करे। यदि घर में ही उनके साथ दुर्व्यवहार किया जाएगा तो फिर समाज के अन्य लोग उन्हें परेशान करेंगे ही। इसलिए हम सभी तृतीयलिंगी वर्ग को उपेक्षित और तिस्कृत करने के बजाय उन्हें समानता की दृष्टि से देखें ताकि वे भी अपना जीवन हमारी ही तरह सामान्य जीवन जीने का हौंसला और जज्बा रख सके।

3.2.7. पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा :

यह उपन्यास महान कहानी और उपन्यासकार चित्रा मुद्गल जी की प्रमुख रचनाओं में से एक है | आधुनिक भारतीय साहित्य में चित्रा मुद्गल

का अपना एक विशिष्ट स्थान है। मूलभूत मानवाधिकारों से वंचित समुदायों के बीच रहकर उन्होंने किन्नरों अधिकारों के लिए संघर्ष किया है। अतः उनकी कथनी और करनी में अंतर नहीं दिखाई देता। उनके अन्य उपन्यासों में एक जमीन अपनी, आवाँ और गिलीगडु उल्लेखनीय हैं। उनकी संपूर्ण कहानियाँ 'आदि-अनादि' नाम से तीन खंडों में प्रकाशित हैं। सहकारी विकास संगठन, मुंबई द्वारा फणीशवरनाथ रेणु सम्मान (एक जमीन अपनी), यू.के. अंतरराष्ट्रीय इंदु शर्मा कथा सम्मान (आवाँ), हिंदी अकादमी दिल्ली के साहित्यकार सम्मान से वे अलंकृत हो चुकी हैं। उनके उपन्यासों एवं कहानियों की कथा-भूमि में वैविध्य द्रष्टव्य है। उनके कथा साहित्य का ग्राफ नीचे से ऊपर की ओर जाती हुई नजर आती है।

चित्रा मुद्गल अपने प्रयोगों के लिए जानी जाती हैं। उनकी सब कथाकृतियों का प्लॉट एक-दूसरे से भिन्न है। वे हमेशा ही चर्चा में रहीं। 'एक जमीन अपनी' और 'आवाँ' में जहाँ उन्होंने स्त्री विमर्श को ऊँचाइयों तक पहुँचाया, वहीं 'गिलीगडु' में वृद्धावस्था की चर्चा की। इन सबसे अलग, 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा' की कथावस्तु उस हाशियाकृत समुदाय (किन्नर) पर केंद्रित है, जिसे सभ्य समाज में कीड़े-मकौड़ों से भी हेय दृष्टि से देखता है। इस उपन्यास की शैली पत्रात्मक है। पत्रों में पुत्र का एक बेबस माँ से संवाद है। कुल मिलाकर सत्रह (23 जुलाई, 2011 से लेकर

24 दिसंबर 2011 के बीच लिखे गए) पत्र और उपसंहार में दो समाचार इस उपन्यास में सम्मिलित हैं। यह उनकी प्रयोगधर्मिता का ही परिचायक है।

इस कथा की शुरूआत होती है विनोद के पत्र से संपूर्ण उपन्यास में सिर्फ विनोद के ही पत्र हैं। उन्हीं पत्रों में माँ की पीड़ा को भी संवादों के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है । उपन्यास के नायक विनोद को अपने परिवार से किन्नर होने के कारण दूर होना पड़ता है –अपनी बा को संबोधित करते हुए वह लिखता है कि "जब बाहर और भीतर एक साथ मेघ बरस रहे हों तो तुझे लिखी जाने वाली चिट्ठी शुरू कैसे हो सकती है?[18] | इस वाक्य में गुँथी विनोद की पीड़ा द्रष्टव्य है। माँ अपने बेटे की पीड़ा को कम करने के लिए कहती है कि जब जब वह अनमना महसूस करे, तब तब ध्यान मुद्रा में बैठकर अपनी अंतरात्मा में कृष्ण की छवि को उतारने की कोशिश करे। लेकिन विनोद को कृष्ण दिखाई नहीं देते। इसीलिए वह पूछ बैठता है कि कृष्ण को उस जगह से परहेज तो नहीं, जहाँ वह रह रहा है या फिर आधे-अधूरे उससे!

विडंबना देखिए, जब शरीर का कोई अंग काम नहीं करता या उसे काटना पड़ जाए तो उसके स्थान पर नकली अंग लगाया जा सकता है। लेकिन आनुवंशिक विकलांगता के लिए ऐसा कोई प्रावधान नहीं है कि

इसके सिवाय उस बच्चे को हमेशा-हमेशा के लिए त्याग दिया जाए। विनोद की मानसिक व्यथा को चित्रा मुद्गल ने इन वाक्यों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है – "तूने, मेरी बा, तूने और पप्पा ने मिलकर मुझे कसाइयों के हाथ मासूम बकरी-सा सौंप दिया। मेरी सुरक्षा के लिए कोई कानूनी कार्रवाई क्यों नहीं की? मनसुख भाई जैसे पुलिस अधीक्षक पप्पा के गहरे दोस्त के होते हुए? वो अपने आप मुझे बचाने के लिए तो आ नहीं सकते थे? मेरे आंगिक दोष की बात पप्पा ने उनसे बाँटी जो नहीं होगी। वरना वह मुझे बचाने जरूर आ जाते। क्यों वह अनर्थ हो जाने दिया तूने, जिसके लिए मैं दोषी नहीं था! ... क्या सामान्य लोगों की तरह जीवन जीने का अधिकार न होता मेरा?" [19] | किन्नरों के लिए कानून बना है, फिर भी ज़मीनी सच्चाई यह है कि उन्हें वह अधिकार प्राप्त नहीं है। वे तो हर तरह से उपेक्षित हैं। सरकार ने कन्याभ्रूण हत्या को अपराध मानते हुए कानून बनाया। इसके तहत माता-पिता को अपराधी माना जाता है। लेकिन जननांग दोषी बच्चों को त्यागने वाले माता-पिता अपराधी नहीं हैं? मेडिकल साइंस के चमत्कारों से क्या नहीं हो सकता? हार्मोन असंतुलन को भी संतुलित किया जा रहा है। सर्जरी के माध्यम से दोषों को ठीक किया जा सकता है, तो जननांग दोष को क्यों नहीं? अतः चित्रा मुद्गल विनोद के माध्यम से

टिप्पणी करती हैं कि “अविकसित लिंग दोषियों के दिल-दिमाग में स्वयं के प्रति बैठे हुए नकारात्मक सोच को निष्कासित करना जरूरी है”। [20]

कानून ने अब किन्नरों को ‘अन्य’ वर्ग में शामिल किया है। जब पूनम विनोद से कहती है कि जनगणना में सरकार ने किन्नरों को शामिल कर लिया है, तो विनोद आक्रोश व्यक्त करता है और कहता है कि किन्नरों को अन्य कहने के पीछे निहित सत्ता के मकसद को समझने की कोशिश करनी होगी। “मर्द और औरत तक तो जेंडर का विभाजन ठीक है पर अन्य क्यों? लिंग दोष के चलते हमें ‘अन्य’ की श्रेणी में झोंक दिया जाएगा। हम तुम्हें पहचान दे रहे हैं। पहचान देने के लिए ही यह श्रेणी बनाई है। पहचान लेकिन वही रहेगी जो रही चली आई है”। [21] | विनोद नहीं चाहता है तिरस्कार और अपमान की ज़िंदगी जीना। वह तो सम्मान की ज़िंदगी जीना चाहता है। इसलिए वह कहता है “कह देना सरदार से। ‘अन्य’ में शरीक होकर नहीं बनवाना मुझे आधार कार्ड। .... फोटो ऊपर की खिंचेगी, नीचे की नहीं”[22]

चित्रा मुद्गल ने विनोद के माध्यम से किन्नर समुदाय की मनोकामना को अभिव्यक्त किया है कि वे भी हम सबकी तरह ही सम्मान की ज़िंदगी जीना चाहते हैं। सरकार ने किन्नरों को तीसरे खाने में आरक्षित किया है।

चित्रा मुद्गल विनोद के माध्यम से यह टिप्पणी करती हैं कि "इस खेल को जननांग दोषी नहीं समझ पा रहे हैं। नहीं समझ पाएँगे"।[23] विनोद रिश्तों के लिए तड़पता है, अपनों के प्यार के लिए तरसता है। वह अपनी पीड़ा को एक पत्र में अभिव्यक्त करता है, जिसे पढ़ते समय आँखें नम हो आती हैं – "अपने इस दीकरे को तुम लोगों ने स्वयं घर से खदेड़ उन हाथों में सौंप दिया, जिन्होंने अपने मानसिक अनुकूलन को ही अपनी नियति मान लिया और हाशिये के उस नरक की शर्तों को अपने जीवन का पर्याय। मन सुलगती-भीगती लकड़ियों सा घुनता रहता है बा, क्यों नहीं तोड़ने की कोशिश की उन लोगों ने उन शर्तों को कि नहीं जिएंगे हम उस तरह से, जिस तरह वो जिलाए रखने की साजिश रच रहे हैं। अपने मनोरंजन और खिलंदड़ेपन के रस को जीने के लिए !"[24] । विनोद यहाँ एक व्यक्ति नहीं, बल्कि किन्नर समुदाय का प्रतिनिधि है। वह कहता है कि जिस नरक में उसे धकेला गया है, वह एक अंधा कुआं है, जिसमें सिर्फ साँप-बिच्छू रहते हैं। "साँप-बिच्छू बनकर वह पैदा नहीं हुए होंगे। बस, इस कुएं ने उन्हें आदमी नहीं रहने दिया"।[25] विनोद की मानसिक पीड़ा को पढ़ते समय ऐसा नहीं लगता कि चित्रा मुद्गल ने मात्र कल्पना का सहारा लिया है। पूरे उपन्यास में विनोद किन्नर होकर पैदा होने की पीड़ा, घर-परिवार और समाज से

तिरस्कृत होने का दंश झेलता है। वह किन्नर समुदाय के कायदे-कानून नहीं अपना सकता। वह कहता है, "उनके लात, घूंसे, थप्पड़ और कानों में गरम तेल सी टपकती किसी भी संबंध को न बख्शने वाली अश्लील गालियों के बावजूद न मैं मटक-मटक कर ताली पीटने को राजी हुआ, न सलमे-सितारे वाली साड़ियाँ लपेट लिपिस्टिक लगा कानों में बुंदे लटकाने को। बहुत कुछ अविश्वसनीय वह हरकतें भी, जिन्होंने मुझे बहुत तोड़ने की कोशिश की और जिनका जिक्र मैं बा, तुझसे कैसे कर सकता हूँ"[26] चित्रा मुद्गल यदि इतने स्वाभाविक रूप से एक किन्नर की पीड़ा को अभिव्यक्त कर सकीं, तो इसके पीछे कारण है। साहित्य अकादमी पुरस्कार घोषित होने पर एनडीटीवी को दिए एक साक्षात्कार में इस बारे में उन्होंने बताया – "जब मैं मुंबई के नाला सोपारा में रहती थी, तब मैं एक ऐसे ही युवक से मिली थी। उसे किन्नर होने की वजह से घर से निकाल दिया गया था। यह उपन्यास उसी युवक के विद्रोह की कहानी है। मैंने उसे अपने घर पर बहुत दिनों तक साथ रखा"[27]

घर-परिवार के लोग किन्नर के रूप में पैदा हुए बच्चे को त्याग देते हैं। समाज उसे दुत्कारता है। लेकिन विडंबना देखिए, जब कभी किसी के घर विवाह संपन्न होता है या फिर नवजात शिशु का जन्म होता है तो किन्नरों का आशीर्वाद लिया जाता है। सामाजिक मान्यता है, किन्नर के आशीर्वाद

से लोगों के वंश सुख-समृद्धि की वृद्धि होती है। लेकिन उसी किन्नर समुदाय को हेय दृष्टि से देखा जाता है।

माँ और बेटे के बीच सामाजिक दूरी है। उन्हें आपस में एक-दूसरे से बात करने के लिए पत्रों का सहारा लेना पड़ा। पत्र भी सीधे घर के पते पर नहीं भेज सकता वह इसलिए माँ ने पोस्ट बॉक्स का सहारा लिया ताकि परिवार के सदस्य न जान सकें और जगहँसाई से भी बच सके। आखिर ऐसा क्यों? क्या दोष है उस बेटे का? उस माँ की स्थिति क्या होगी, जिसने उसे जन्म दिया? विनोद अपनी माँ से अपनी पीड़ा व्यक्त करते हुए कहता है- "मनुष्य के दो ही रूप अब तक देखे थे मैंने। इस तीसरे रूप से मैं परिचित तो था, लेकिन उसे मैं पहले रूप का ही एक अलग हिस्सा मानता था। तूने मेरे जन्मते ही मनुष्य के इस तीसरे रूप को देख लिया था न, बा! उसी समय खतम कर देना था न बा मुझे! तू किस मोह में पड़ गई थी, बोल ?[28]। यह अंश पढ़ते समय पाठक एक बार ही सही सोचने लगता है। उसकी आँखों के समक्ष विनोद जैसे अनेक लोगों की पीड़ा का उभर आना स्वाभाविक है।

कुल मिलाकर यह कहना उचित होगा कि पिछले दो दशकों में आई किन्नर विमर्श की रचनाओं की बाढ़ में चित्रा मुद्गल का यह उपन्यास औरों से एकदम अलग है। लेखिका किन्नर को किन्नर बनाए रखने की राजनीति

को उघाड़ने में पूरी तरह सफल रही हैं। किन्नर नहीं, उस समुदाय के प्रत्येक सदस्य को पूर्ण मनुष्य का सम्मान दिलवाना इस कथाकृति का चरम प्रयोजन है। इसीलिए यह अपने निहितार्थ में विमर्श से आगे की रचना है – किन्नर विमर्श की सीमाओं को लाँघती हुई।

3.2.8 जिंदगी 50-50

'जिंदगी 50-50' युवा लेखक भगवंत अनमोल द्वारा लिखा गया उपन्यास है। इस उपन्यास में इक्कीसवीं सदी के समाज में आए बदलावों को दर्शाया गया है। चिकित्सा, इंजीनियरिंग जैसे क्षेत्रों में जो उछाल आया है, उसने समाज में एक नया वर्ग पैदा कर दिया है जिसे मध्यम वर्गीय परिवार कहा जा सकता है। इस उपन्यास में एक मध्यम वर्गीय परिवार की कहानी है जिसके छोटे-छोटे सपने होते हैं और इन सपनों के पीछे वह समाज है, जो इन सपनों को लोगों के मन में गढ़ता है और इस तरह एक मध्यम वर्गीय परिवार का जीवन पीढ़ी दर पीढ़ी गुजरता जाता है। यह किसी फिल्म की कहानी की तरह बीच-बीच में बीते समय में जाता है और फिर एक कड़ी शुरू होती है। बीच-बीच में कई हिंदी फिल्मों के किस्से भी हैं जिससे पाठक को उपन्यास रोचक और समझने में आसान लगता है और यही उपन्यास की मजबूती है।

'जिंदगी 50-50' उपन्यास की कहानी मुख्य रूप से तीन धाराओं में प्रवाहित होती है | दो धाराएँ अनमोल के जीवन के अतीत और एक धारा वर्तमान की चलती रहती है | अनमोल के बेटे के जन्म से कहानी की शुरुआत होती है और अनमोल को अपने बेटे के किन्नर होने की जानकारी प्राप्त होती है | बेटे के किन्नर होने के विषय में जानकर अनमोल अपने अतीत में खो जाता है | उसे अतीत के वे सारे दर्द महसूस होने लगते हैं, जो उसके अपने भाई अर्थात हर्षा ने भुगता था | अतः अनमोल मनो मन यह निश्चय करता है कि जो अन्याय, अत्याचार हर्षा के साथ हुआ है, वैसा वह अपने पुत्र सूर्या के साथ नहीं होने देगा | शरीर एक पुरुष का किन्तु भावनाएं एक स्त्री की ऐसी परिस्थिति में जीवन जी रहे व्यक्ति की क्या दशा हो सकती है, उसके परिवार वालों पर इस का क्या प्रभाव पड़ता है तथा वह व्यक्ति जिस समाज में जन्मा है, उसके प्रति समाज के रवैये आदि का बेहद मार्मिक वर्णन प्रस्तुत उपन्यास में किया गया है |

'जिंदगी 50-50' उपन्यास में हर्षा उर्फ़ हर्षिता एक किन्नर के रूप में जन्म लेता है | किन्नर रूप में जन्म लेना उसके जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप सिद्ध होता है | उसे न केवल समाज से बल्कि अपने ही पिता

द्वारा अनेक यातनाएं भोगनी पड़ती हैं | यहाँ तक कि उसके जन्म के बाद उसके पिता उसे मार डालने का भी प्रयास करते हैं और एक दिन घर में किसी के न रहने पर हर्षा के पिता उसे चूहा मारने की दवा पिलाने का प्रयास करते हैं | एक किन्नर संतान का पिता होने से हर्षा के पिता की मानवता मानो मर सी जाती है | समाज से ठुकराए गए अपने किन्नर संतान को प्रेम देना तो दूर उसे किसी न किसी तरह तिरष्कृत करते रहते हैं | हर्षा को निरंतर यह एहसास दिलाया जाता है कि वह औरों से भिन्न है | आस-पड़ोस वाले भी हर्षा को लेकर उसके पिता का मजाक उड़ाया करते हैं जिससे हर्षा के पिता का उसके प्रति क्रोध और बढ़ जाता है | हर्षा के जन्म के बाद उसकी माँ जब उसके जन्म की ख़ुशी में कुछ लोगों को न्योता देने की बात हर्षा के बाबू जी से करती है तब वे अपनी पत्नी को अपमानित करते हुए कहते हैं –

"अरे, आज के बाद न्योता का नाम न लियो | तुम किसकी खातिर न्योता देना चाहती हो ? जो कुछ सालों बाद हमारी हर जगह पर नाक कटवाएगा, बेइज्जती करवाएगा ? हर कोई इसे हिजड़ा-हिजड़ा पुकारेगा और मुझे हिजड़े का बाप |"[29]

हर्षा की माँ अपने बेटे के साथ हो रहे अन्याय को देख तिल-तिल आहात होती रहती है लेकिन कुछ नहीं कर पाती | हर्षा जैसे –जैसे बड़ा होता है, समाज में उसका जीना और भी मुश्किल हो जाता है | घर से लेकर बाहर तक उसका मजाक उड़ाया जाता है | उसको इस बात की पूरी संभावना नजर आ रही थी कि बात खुलने पर दोनों का परिवार बिखर जाएगा। जिस बेटे ने 28 साल अपने पिता को न देखा हो समाज से तरह तरह की बातें सुनने को मिली हों वह भला कैसे अपने पिता से मिलकर खुश होता? अनेक सवाल होते, धिक्कार होता, शायद इस डर से अनाया ने अपने बेटे से मिलने से मना कर दिया। अनाया भी इंजीनियर थी और अनमोल के आफिस में जॉब करती थी। अनाया अनमोल को पंसद करती थी। पर कुछ कह नहीं पाती थी। इस डर से कि वह सुंदर नहीं थी। उसके एक गाल पर बर्थ मार्क जो था। अनमोल बहुत सी बातों को फिल्मी अंदाज में कहती हैं। अपने आफिस के माहौल में नायक कभी फिल्मों की कल्पना करता है तो कभी फिल्मों का उदाहरण देता है। जिंदगी 50-50 का मतलब ये नहीं है कि इसमें सिर्फ थर्ड जेंडर की बात कही गई है। जहां लड़की का शरीर है और वह लड़के जैसा सोचता है। या लड़के के शरीर में है और लड़की जैसी हरकतें करता है। बल्कि इसमें दुख-सुख, खूबसूरती-बदसूरती तथा त्याग के भी उदाहरण दिए गए हैं।

उपन्यासों में किन्नर जनजीवन में व्याप्त शोषण, उपेक्षा, तिरस्कार, घृणा, संघर्ष, जिजीविषा को पूरे सामर्थ्य के साथ प्रस्तुत किया गया है। उक्त कथाकारों ने मुंबई और दिल्ली महानगरों की किन्नर गंदी बस्तियों में नारकीय जीवन जीने के लिए अभिशप्त किन्नर लोगों की सवेदनाओं, अपेक्षा और आकांक्षाओं का चित्रण यथार्थ के धरातल पर किया है। जिस तरह किन्नरों में स्वयं को पुरुष या स्त्री का वेश धारण करने की स्वैच्छिक परंपरा विद्यमान है, इनमें जननेन्द्रिय दोष होने के बावजूद विवाह की परंपरा और पति-पत्नी के रूप में जीवन यापन की स्थितियों का चित्रण, किन्नर समाज के समाजशास्त्रीय स्वरूप को पहचानने में सहायक होता है। किन्नरों के यौन शोषण के प्रसंग किन्नर कथा साहित्य में बहुतायत से पाये जाते हैं। राजनेताओं से संबंध रखने वाले प्रभावशाली किन्नर नेताओं के जीवन की कथाएँ भी इस साहित्य में दिखाई देती हैं। राजनैतिक प्रयोजनों के लिए भी किन्नर समुदाय को प्रलोभन के मार्ग से शोषित किया जाता है और कुछ परिस्थितियों में ये राजनीतिक हत्या के भी शिकार हो जाते हैं। प्रदीप सौरभ कृत 'तीसरी ताली' उपन्यास एक किन्नर समुदाय में गद्दी अर्थात शीर्ष नायकत्व को हासिल करने के लिए चलाने वाले षडयंत्र और परस्पर संघर्ष को दर्शाता है। आकर्षक किन्नर अक्सर तथाकथित संभ्रांत वर्ग के विकृत यौनाचार के शिकार हो जाते हैं, ऐसी घटनाओं को किन्नर कथा

साहित्य में प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया गया है। जहाँ एक ओर प्रदीप सौरभ किन्नरों के सशक्तिकरण के लिए आवाज़ उठाते हैं वहीं दूसरी ओर महेंद्र भीष्म किन्नरों के मानवाधिकारों के लिए पक्षधर बनकर खड़े होते हैं। किन्नर जन्म लेने वाला व्यक्ति बार-बार सवाल करता है कि उसके जन्म के लिए उसका तो कोई दोष नहीं किन्तु समाज उसे इसका दंड क्यों देता है? यह महत्वपूर्ण प्रश्न है जिसका सामाधान कोई सभ्य समाज देने में समर्थ नहीं दिखाई देता। समाज में किन्नरों की स्वीकार्यता महत्वपूर्ण मुद्दा है। भारतीय समाज में एक विचित्र दोहरापन मौजूद है जो सदियों से लिंग के आधार पर सामाजिक अधिकार तय करता है। स्त्रीलिंग और पुल्लिंग इन दोनों को सामाजिक संरचना का आधार माना गया है। ये दोनों मिलकर ही जीवन का सृजन करते हैं जिससे जीवन की शृंखला पीढ़ियों का निर्माण करती है। जननेन्द्रिय के बिना मनुष्य की प्रजनन शक्ति का ह्रास सुनिश्चित है। संतानोत्पत्ति स्त्री-पुरुष के वैवाहिक जीवन का महत्वपूर्ण सामाजिक प्रदेय है। लिंगविहीन या नपुंसक मनुष्य इस अधिकार से वंचित हो जाता है जिससे समाज में इस श्रेणी के मनुष्यों को असामाजिक और अवांछित माना जाता है। इस समुदाय के प्रति सभ्य समाज की यह मानसिकता मानवोचित नहीं है। किन्नर जीवन को जीने के लिए अभिशप्त समुदाय के प्रति मानवीय संवेदना को जागृत करने का गुरुतर दायित्व साहित्यकार और सामाजिक आंदोलनकारियों ने स्वीकार किया।

3.2.9 अस्तित्व :

'अस्तित्व' युवा लेखिका गिरिजा भारती का प्रथम उपन्यास है। प्रस्तुत उपन्यास एक किन्नर के जीवन की गाथा है। उपन्यास का कथानक एक मध्यमवर्गीय परिवार के इर्द-गिर्द बुना गया है। विवाह के चार वर्ष बाद वर्मा जी एवं उनकी पत्नी सुधा को एक कन्यारत्न की प्राप्ति होती है। बेटी के जन्म की खुशी एवं उत्साह उस समय ठंडा हो जाता है जब सुधा, वर्मा जी को बताती हैं कि उनकी बेटी वास्तव में एक किन्नर है - "...जब बीवी ने बताया कि बेटी एक किन्नर है तो वर्मा जी को लगा मानों किसी ने उनके कानों में शीशा पिघलाकर डाल दिया हो और वह अभी यह खबर सुनकर बेहोश हो जाएँगे।"[30] सुधा को जीवनपर्यन्त अपनी किन्नर बेटी को किन्नरों द्वारा ले जाने का भय सताता है। अक्सर उसे ऐसे स्वप्न आते हैं जिनमें वह किन्नरों को अपनी बेटी को छीनकर ले जाते हुए देखती है- "...मैंने सपना देखा कि किन्नर मेरी बच्ची को मुझसे छीनकर ले जा रहे हैं।"[31] इसलिए वह यह बात किसी को नहीं बताती की उसकी बेटी किन्नर है और उसका लालन-पालन अपने अलावा किसी को नहीं करने देती। यहाँ तक कि वह अपनी माँ से भी यह बात छुपाती है। एक दिन उसकी माँ को सच्चाई पता लगती है तो वह बहुत दुखी होती है तथा अपनी माँ से निवेदन करती है कि वह यह बात किसी को भी न बताएँ वरना किन्नर उसकी बेटी

को उसके पास नहीं रहने देंगे और अपने साथ ले जाएँगे। उसे इस बात की चिन्ता होती है कि हमारी सामाजिक व्यवस्था किस प्रकार की है जिसमें कुत्तों तक को लोग अपने साथ रखते हैं, उनकी एक संतान की तरह देख-रेख करते हैं किन्तु किन्नर का नाम सुनते ही उससे घृणा करते हैं तथा समाज से बहिष्कृत कर देते हैं। वह अपनी माँ से कहती है- "मुझे यह समझ नहीं आता माँ, लोग कुत्ते पालते हैं। उसको अच्छे-अच्छे साबुन, शैंपू से नहलाते हैं। उसको कितना प्यार और इज्जत देते हैं। कितने प्यार से उसको खाना खिलाते हैं, दूध पिलाते हैं, गाड़ियों में बिठाते हैं, उसको बिस्तर पर सुलाते हैं। वो तो एक कुत्ता है, जानवर है। जब आप उसे जीने का अधिकार देते हैं तो एक किन्नर को क्यों नहीं?" वह अपनी माँ से कहती है कि वह अपनी बेटी के अधिकार के लिए इस समाज से लड़ेगी, "मैं अपनी बेटी के हक के लिए इस पूरे समाज से लड़ लूँगी। पर माँ मुझ पर दया कर। किसी को मेरी बेटी का राज मत बताना।"[32]

कथा इसी प्रकार आगे बढ़ती है। सुधा अपनी किन्नर बेटी का नाम 'प्रीत' रखती है और उसके पालन-पोषण एवं पढ़ाई-लिखाई का दायित्व स्वयं सँभालती है। अपने पति से कहकर उनका तबादला दिल्ली करवा लेती है जिससे उसे अपनी किन्नर बेटी की परवरिश में कोई समस्या न आए। यद्यपि वर्मा जी की माँ को यह बात नागवार गुजरती कि सुधा अपनी

बड़ी बेटी को किसी को भी हाथ नहीं लगाने देती और अक्सर वह उसे ताने देने लगती- "बेटी पैदा की हो तो हाथ नहीं लगाने देती। अगर बेटा पैदा करती तो चेहरा भी नहीं दिखाती। पर्दे में रखती।"[33] दिल्ली आने के कुछ ही वर्षों में वह एक बेटे और एक बेटी को जन्म देती है और इस बात से निश्ंिचत हो जाती है कि अब वह प्रीत की देखभाल अच्छी तरह से कर सकती है क्योंकि उसकी सास उसके दोनों बच्चों की देख-रेख करती रहेंगी।

समय के साथ बच्चे बड़े होने लगते हैं। स्कूल जाने लगते हैं। प्रीत एक होनहार छात्रा के रूप में उभरती है। वह पढ़ी-लिखी व समझदार होने के साथ-साथ संवेदनशील भी है। बड़े होते हुए ही उसे इस बात का पता चल जाता है कि वह एक आम लड़की नहीं बल्कि एक किन्नर है- "...अब वह पूरी तरह समझ गयी थी कि वह एक आम लड़की नहीं है। वह एक किन्नर है। इसका प्रीत को बहुत बड़ा धक्का लगा। वह खोई-खोई-सी रहने लगी। कभी मन करता तो एकदम पढ़ने बैठ जाती तो कभी बाहर घूमने निकल जाती।"[34] समाज को देखते समझते हुए वह हर परिस्थिति का सामना करने को तैयार हो जाती है। वह समाज के झूठे नियमों को समझ जाती है- "प्रीत समझ चुकी थी कि इस समाज में कोई नियम नहीं, समाज खुद नियम बनाता है और उसे जो भी खुद कमजोर लगता है। उसे समाज की बलि वेदी पर चढ़ा देता है।"[35] वह गंभीर विचार विमर्श करती है और अपनी

माँ से कहती है- "वह सोचती है, मैं इतनी कमजोर नहीं। मैं अपनी पहचान खुद बनाऊँगी।....उसने एक दिन अपनी माँ को अकेले देखकर कहा। माँ आप मेरे बारे में सोचकर चिन्ता मत किया करो। कोई कभी नहीं समझ पाएगा कि मुझमें क्या कमी है और अगर मुझमें कोई कमी है भी तो माँ लोगों को क्या फर्क पड़ता है।"[36]

जिस प्रकार इस उपन्यास में सुधा और वर्मा ने प्रीत को बेशक अपनाया लेकिन समाज एवं उनके रिश्तेदारों का भय उनके मन-मस्तिष्क पर सदैव बना रहा। जैसे-जैसे प्रीत बड़ी होने लगी वैसे ही सुधा और वर्मा जी की चिन्ताओं के बादल उमड़ने लगे। सुधा का व्यवहार भी अपनी मां और सास के प्रति बदल सा गया। "पता नहीं बहन जी जब से पोती का जन्म हुआ है हमारी बहू का तो मानसिक संतुलन ही ठीक नहीं। कभी-कभी तो ऐसा लगता है किसी के बस में है। यह मेरी बहू नहीं है। अजीब-अजीब हरकत करती रहती है। पोती मुझे छूने नहीं देती। आजकल तो रट लगा रखी कि दिल्ली में या किसी शहर में ट्रांसफर करा लो और तो और बेटा भी उसी के इशारे पर है। ऑफिस में तबादले की अर्जी दे दी है"[37] सुधा के बदलाव का कारण सिर्फ प्रीत का अधूरा शरीर है इसे छुपाने के लिए रिश्तेदारों से दूर जाना चाहती है। आस-पडोस में अगर पता चल गया तो प्रीत व उसके माता-पिता का जीना मुश्किल हो जाएगा। लोग ताने देने लग जाते कि घर में हिजड़े को रख रहे इत्यादि कटु वचन सुनाते। वर्माजी

और सुधा हमेशा यही सोचते कि आने वाले समय में जरूर बदलाव आएगा लोग लिंगीय भेदभाव को महत्व नहीं देगें। लेकिन सुधा की माँ को प्रीत के अधूरेपन का पता चलने पर उनके पैर से जमीन खिसक जाती -"यह सब नहीं जानती बेटा' माँ ने कहा। पूर्वजों से चला आ रहा है कि किन्नरों का अलग ही समुदाय होता है'। तुम इस समाज से कैसे जीत पाओगी"।[38] सुधा अपनी माँ से प्रीत का राज किसी को ना बताने की याचना करती है । अपनी बेटी के लिए पूरे समाज से लङने का जज्ब़ा रखती है वह अपनी प्रीत को पढ़ा-लिखा कर योग्य बनाना चाहती है। लेकिन यहां सुधा का भय समाज के प्रति इसलिए बन रहता है कि सभ्य कहा जाने वाला समाज आज भी संकीर्ण मानसिकता से घिरा हुआ है।

प्रीत के अब दो भाई-बहन रीत और शुभम का जन्म हुआ इसलिए सुधा और वर्माजी खुश हैं । कुछ समय पश्चात तीनों भाई बहन स्कूल जाने लगते हैं और सुधा का ध्यान रीत और शुभम से प्रीत की तरफ अधिक होने के कारण दादी को बुरा लगता है इस बात की शिकायत करती है। कुछ वर्ष पश्चात उम्र बढने के साथ – साथ प्रीत को अपने वजूद का पता चलता है और वह निराश रहने लगती है अपनी अधूरी देह से परेशान भी रहती कभी-कभी भगवान के मंदिर में मूर्तियों को देखती फिर भगवान से शिकायत करती। कभी बगीचे में घंटो बैठे आते-जाते लोगों को देखती फिर

उठकर घर में चुपचाप चली जाती । इस तरह अपने मन की पहेली की उलझन को स्वयं सुलझाती। शिक्षित होने के कारण प्रीत समझदार और स्वाभिमानी थी इसलिए अपनी मां को कहती - "मां मैं अब डर-डर कर नहीं जीना चाहती बहुत जी ली इस तरह की जिंदगी आप क्यों नहीं बता देती इस समाज को कि मैं एक किन्नर हूं। ....मां आज समाज बदल रहा है। हमें छिपकर नहीं डटकर सामना करना चाहिए।"[39] प्रीत स्वयं के वजूद को छुपाकर नहीं रखना चाहती वह अपनी मां को सफल किन्नरों के उदाहरण के द्वारा समझाती है । समाज की वास्तविकता रही है कि पुरूषवादी सत्ता ने महिलाओं,दलितों,पिछडे व निम्न वर्ग को भी कई सालों तक शोषित किया । आखिर में इन सभी वर्ग ने एकजुट होकर आवाज उठाई तब जाकर राहत मिली। इस प्रकार किन्नर समाज में कुछ चेहरे हैं जिन्होनें पहचान संविधान और समाज में अपने वर्ग की असली पहचान दिलाई और आज भी संघर्षरत हैं। जैसे- लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी, शबनममौसी, मानवी बंधोपध्याय , मधु,पायल सिंह,धन्जय आदि।

उपन्यास की मुख्य पात्र प्रीत की तरह 'वर्तमान समाज में गंगा कुमारी (राजस्थान) को उसके माता-पिता ने पढाया-लिखाया ।उदाहरणार्थ राजस्थान के जालोर जिले की किन्नर गंगा कुमारी का वर्ष 2014 में पुलिस पद पर हुआ पर गृह विभाग द्वारा उनका नियुक्ति-पत्र इस

आधार पर खारिज कर दिया गया कि वह किन्नर है। जिसके विरोध में किन्नर गंगा कुमारी द्वारा लम्बी न्यायिक लड़ाई लड़ी गई। राजस्थान उच्च न्यायालय द्वारा गंगा कुमारी की याचिका स्वीकार कर सरकार को कड़ी फटकार लगाते हुए नियुक्ति देने का आदेश दिया फलस्वरुप 4 वर्षों बाद फरवरी 2018 में उनका नियुक्ति-पत्र जारी हुआ|

3.2.10. दरमियाना

'दरमियाना' शब्द भी किन्नरों के लिए प्रयोग में लाए जाने वाला पर्याय है। पत्रकार एवं साहित्यकार सुभाष अखिल द्वारा रचित 'दरमियाना' उपन्यास किन्नर जीवन की त्रासदी को मानवीय रूप में देखने की सार्थक पहल है। इस औपन्यासिक कृति में किन्नरों को एक नया अभिधान दिया गया है- दरमियाना यानी न तो वे नर है और न ही माता।

पाँच अध्यायों में विभक्त इस औपन्यासिक रचना की विशेषता यह है कि इन पाँचों अध्यायों के दरमियाना के बीच परस्पर अन्तर्सम्बंध होते हुए भी वे एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं। प्रत्येक अध्याय में लेखक, भिन्न-भिन्न किन्नर पात्रों से रू-ब-रू होता है और उसके जीवन-संघर्षों का साक्षी बनता है। एक उल्लेखनीय बात यह भी है कि यह उपन्यास सुभाष अखिल द्वारा रचित एक कहानी दरमियाना पर आधारित है जो सारिका पत्रिका

में इसी शीर्षक से अक्टूबर 1980 में प्रकाशित हुई थी। इस कहानी से सुभाष अचानक चर्चा में आ गये।

'दरमियाना' उपन्यास तारा और रेशमा ज़िन्दगी पर केन्द्रित है। तारा किन्नरों की गुरु और रेशमा उसकी शिष्या है। तारा को नटराज की भाभी कहलाना अत्यधिक पसंद है। जब ग्यारह-बारह वर्ष की अवस्था में लेखक का तारा से परिचय प्रगाढ़ होता है तो वह स्वयं को नटराज कहलाना पसंद करता है। बकौल रचनाकार- ''साहित्य से परिचय प्रगाढ़ होता है और परिचय की प्रगाढ़ता से प्रेम। किन्तु जिस तरह से प्रेम की प्रक्रिया को क्षणों में विभाजित नहीं किया जा सकता है" [40] ठीक उसी तरह मेरे और तारा के अंतरंग हो जाने वाले क्षणों को भी रेखांकित करना कठिन है। मैं कब और क्यों उसके इतना समीप चला गया, वह क्यों और कब मुझ तक इतना सिमट आयी थी- नहीं कहा जा सकता। यह प्रगाढ़ता और प्रेम था, एक माता का पुत्र के प्रति, एक भाभी का देवर के प्रति। तारा माँ और रेशमा भाभी। तभी रचनाकार के गलत संगति में पड़ जाने के कारण तारा को उसी तरह क्रोध आता है, जैसे कि माता को अपने पुत्र पर आता है- ''तारा चीख उठी तूने मुझे भी अपनी माँ समझ लिया है क्या? तू क्या समझता है, अगर उसे बेवकूफ बना लेता तो मुझे भी बना लेगा?''[41] मैंने देखा जब

माँ बिगड़ती है, तो वह भी ऐसी लगती है। धिक्कार के साथ तारा उसे तिरस्कृत करती है किन्तु कुछ समय पश्चात् ही उसका पुत्र स्नेह पुनः जागृत हो जाता है और वह उसे समझाने लगती है- "मान जा बेटा ये सब अच्छे घर के लड़कों का काम नहीं है। तू उनका साथ छोड़ दे, तुझे कोई परेशानी हो तो मुझसे कह, जितना पैसा-धेला चाहिए मुझे बता। क्या मैं छाती पर धर कर ले जाऊँगी ये सब न जाने खुदा ने किस जनम का बैर ढाया है। मेरे ही बीज पड़ सकता तो अब तक मेरा जना भी तेरे जैसा ही होता, पर अपनी तो धरती ही..."[42] इसमें प्रेम और पश्चाताप में ममत्त्व की झलक स्पष्ट है। इसी तरह वह अपने व्यवहार में सुधार न करके एक दिन छल से तारा से पढ़ाई के नाम पर पैसा माँगकर शराब पीता है। जब यह बात तारा को पता चलती है तो आशू से एक माँ की तरह बातचीत करना बन्द कर देती है परन्तु मृत शैय्या पर पड़े-पड़े वह एक बार पुनः अपने अशुए या नटराज को ही देखना चाहती है। रेशमा कहती है- "बाबू जी! हम छोटे लोग हैं जिन्दगी भर हक माँगते रहते हैं। मगर आज मैं आपसे भीख माँगती हूँ। आप एक बार उसे देख आयें तो वह डायन चैन से देह छोड़ देगी।"[43] इस प्रकार स्पष्ट है कि लेखक ने तारा के चरित्र में मानवीय करुणा, ममता, त्याग, समर्पण और प्रेम जैसे उदात्त मूल्यों का अंकन किया है।

प्रथम कहानी किन्नरों के मानवता प्रेम और सद्भाव को प्रस्तुत करती है। तारा का लेखक के प्रति पुत्रवत प्रेम तथा रेशमा का मर्यादापूर्ण प्रेमी स्वरूप लगाव किन्नरों के सादगीपूर्ण जीवन को प्रस्तुत करता है। सगे संबंधी की तरह वह लेखक की गलत सोहबत से परेशान होती है।''न जाने कैसे! तारा को पता चल गया कि मेरी बैठ-उठ अच्छी नहीं है। मेरी सोहबत में जुआरी शराबी बैठते हैं।.........तारा ने धीरे-धीरे कहना शुरू किया, क्यों रे नट्टू, उसने नटराज को संक्षिप्त कर दिया था, मैं यह क्या सुन रही हूं?..... तारा लेखक के गलत मोहबत में पड़ जाने तथा चोरी करने की आदत जानकर बहुत दुखी होती है" ।44

दूसरी कहानी में ''छिबरना या छिबराने'' की सत्यता या क्रूरता के विस्तारित एवं संवेदनात्मक विवरण मिलता है। गिरिया रखना और गुरू बदलने का दुष्परिणाम संध्या को झेलना पड़ता है क्योंकि उसका नया गुरू उसके अर्धविकसित यौनांग को डॉक्टर द्वारा कटवा कर उसे छिबरा बना देता है परंतु चूंकि संध्या को हेमोफिलिया की बीमारी होती है जिसके कारण उसका रक्तस्राव रूकता नहीं है और अंततः उसकी मृत्यु के बाद कहानी का अंत होता है। इन दोनों कहानियां से लेखक व्यक्तिगत रूप से जुड़ा प्रतीत होता है परंतु इसके बाद की कहानियाँ प्रोफेशनल जीवन का हिस्सा कही जा सकती हैं।

तीसरी कहानी में सुनंदा नामक किन्नर के माध्यम से जहां पहेली स्वरूप रहने वाले किन्नरों के व्यक्तिगत जीवन में झांकने का प्रयास किया है वहीं विभिन्न दवाओं का किन्नरों द्वारा उपयोग कर शारीरिक काया को बनाए रखना, गिरिया रखना, गिरयों के दबाव में उसी तरह जीवन जीना जैसा कि एक परिवार में पत्नी पति के दबाव में जीती है आदि के माध्यम से हिजड़े द्वारा लेखक से उसकी सलामती के लिए संबंध विच्छेद कर उसकी इज्जत एवं जान की रक्षा करने का त्याग करना किन्नरों में नीहित मानवीयता को दर्शाता है - "ये सभी, उतने सरल नहीं होते। अनके तरह की जटिलतओां में गड्डमड्ड होते हैं, जहां इनके व्यक्तित्व और जीवन को समझकर इनकी जटिलताओं के सिरे पकड़ पाना वाकई कठिन होता है"[45]

चौथी कहानी कनाट पैलेस जैसे उच्च वर्गीय क्षेत्र में हिजड़ों की गंदी बस्ती होने के पीछे सभ्य और सुसभ्य समाज की एक और हकीकत को उजागर करती है तथा रेखा नामक हिजड़ें के माध्यम से हिजड़ों की सामान्य जीवन के प्रति ललक तथा विभिन्न माध्यमों से आय के स्रोत ढूंढने एवं बढ़ाकर वैभवपूर्ण जीवन जीने की आकांक्षा को दर्शाती है। -"दिल्ली के दिल क्नॉट प्लेस के आसपास का यह इलाका वीआईपी कहलता है। इसके एक तरफ राष्ट्रीय शान इंडिया गेट है, तो दूसरी तरफ कला और संस्कृति का क्षेत्र मंडी हाउस–जहां दूरदर्शनकेंद से लेकर साहित्य, कला, नाट्य आदि से

जुडत्रे अनके संस्थान और सभागार। ....आप इस सुपर वीवीआईपी एरिया के पास, सांगली मैस या प्रिंसि पार्क जैसे इलाके को देख लें तो आपके होश फाख्ता हो जाएं”[46] इसके साथ ही किन्नरों के परस्पर तनावों, झगड़ों तथा कभी कभार पास पड़ोस के अन्य गुंडों द्वारा हिजड़ों को गोली या अन्य माध्यमों से मार दिए जाने तथा उनके बाद उनके परिवार के अन्य सदस्यों को पूरी तरह से बेसहारा हो जाने की मार्मिक स्थिति को प्रकट करती है।

पाँचवीं कहानी दया मौसी नामक किन्नर की कहानी है। इस कहानी में से लेखक ने किन्नरों का राजनीति में दखल, उनकी समाज सेवा की भावना तथा उनके लोक परोपकारी रूप के बारे में बताया है। वह गाज़ियाबाद की रहने वाली थी। मोहिनी नाम की थर्ड जेण्डर ने अशुए को दया का पता दिया था। दयारानी ने राजनीति में किस्मत आजमाई। उन्होंने मेयर का चुनाव लड़ा और लोकसभा में भी किस्मत आजमाई। वर्तमान में विधानसभा की तैयारी में है। लेखक से बातचीत के दौरान दयारानी से वर्तमान भारत की राजनैतिक उठा-पटक का पता चला, साथ ही भारतीय राजनीति में दरमियाना के लिए जगह बनाना कितना कठिन है इसका अनुमान दयारानी के इस संवाद से लगाया जा सकता है- “बाबू हम किसी

पार्टी के बड़े नेता तो हैं नहीं, न ही हमारे पास हराम का पैसा और गुंडे बदमाश हैं।.... हम तो ईमानदारी के बल पर ही लड़ते हैं।"[47]

भारतीय राजनीति में किन्नरों की उपस्थिति एक ऐतिहासिक कदम है। शबनम मौसी से लेकर दया तक ने अपनी उर्जा व महत्वाकांक्षा के हिसाब से इसमें कदम रखा लेकिन मुख्यधारा के राजनैतिज्ञों के झूठ व फरेब के आगे उनकी न चल सकी। वे आज भी हाशिए पर हैं - "...हमारी बात इन नेताओं के झूठे नारों और वादों से दब जाती है। ....ऐसा नहीं कि मैं केवल चुनाव के लिए सामने आती हूँ।...दो अनाथ आश्रमों, दूधेश्वरनाथ मंदिर और गऊशाला के लिए भी मुझसे जो बन पड़ता है, मैं करती हूँ।...चाहो तो इलाके में किसी से पूछ लो।"[48]

हार-जीत के प्रश्न पर दया ने बहुत ही सहजता से अशुए को उत्तर दिया। किंतु इस संवाद में उसके थर्ड जेण्डर होने का दर्द छलक उठा। "जीवन की बहुत बड़ी लड़ाई हार जाने की तरह ही... बहुत सहज रूप से स्वीकार किया था"[49] यानी जब स्त्री व पुरुष के मध्य स्थापित हो रहे, अपने अस्तित्व को उन्होंने स्वीकार किया होगा.... तब क्या यह हार उसके सामने कुछ मायने रखती है?

दयारानी का बचपन गरीबी में बीता। पिताजी जूते बनाने का काम किया करते थे, लिहाजा घर की माली हालत ठीक नहीं थी। उसके भाई,

बाबू और पिता का निधन जल्दी हो गया था। लेखक ने बहुत ही सरल और रोचक ढंग से उसके जीवन के बारे में बताया है- "17-18 वर्ष की आयु तक दया कड़ेताल (पुरुषों के कपड़े) में ही रहा करती थी। पढ़ाई-लिखाई में ज्यादा मन नहीं लगा। कभी सिंहासिनी गेट के बाहर कोयले की टाल पर जा बैठता युवक दया... कभी चौपला या डासमा गेट के मोहल्लों में मटरगश्ती। परिवार ने तो पहले से कन्नी काटना शुरू कर दिया था। फिर जैसे-जैसे शरीर में परिवर्तन उभरने लगा, तो इन्होंने पूरी तरह यह जीवन जीने का निर्णय ले लिया। घर-बार सब त्यागकर ये अपने गुरु हाजी किन्नर के पास ही चली आई थी और गाना-बजाना, बधाई मांगना-खाना शुरू कर दिया था।"[50]

इस उपन्यास की पांचों कहानियों में वर्णित किन्नर जीवन की दास्तां जन्म से लेकर मृत्यु पर्यंत पारिवारिक कलह,अवहेलना, तिरस्कार से लेकर परिवारजनों का प्रेम, लगाव, त्याग आदि के साथ-साथ प्रतिदिन का जीवन संघर्ष किन्नरों के मध्य गैंगवार, जीने के लिए मुंह बोले रिश्तों के प्रति जन्मजात रिश्तों से बढ़कर समर्पण, पुरूष के सहारे के रूप में गिरिया पालना तथा उसकी गिरफ्त में रहना तथा उसके अत्याचार झेलना। कभी कभी गिरियों का परित्याग, भाई बहनों तथा बुजुर्गवारों की

परवरिश का जज्बा तथा अंतर्मन से परिजनों की तिरस्कृत भावनाओं एवं व्यवहार के बाद भी दायित्वों के निर्वहन की भावना आदि सभी कहानियों को परस्पर जोड़कर एक औपन्यासिक रूप देती हैं। लेखक सर्वत्र उपस्थित हैं और इसे रिपोर्ताज सह संस्मरणात्मक शैली की रचना कहा जा सकता है। भाषा शैली की दृष्टि से हिजड़ों के मध्य प्रयोग में लाई जाने वाली भाषा के कुछ कूट शब्दों का प्रयोग छोड़ दें तो वर्णनात्मक शैली का उपयोग किया गया है।

3.2.11. अस्तित्व की तलाश में सिमरन

यह डॉ.मोनिका देवी कृत जीवनी परक लघु उपन्यास है। एक सौ बारह पृष्ठों तथा इक्कीस छोटे-छोटे अध्यायों में विभक्त किन्नर सिमरन द्वारा कथित उसके दुर्वह, अभावग्रस्त जीवन की कहानी भी है। वैश्विक स्तर पर नारी विमर्श, दलित विमर्श, प्रवासी विमर्श, वृद्ध विमर्श आदि की भांति ही समाज की मुख्यधारा से कटी, गरीबी की सीमा रेखा पर उपेक्षित-तिरस्कृत जीवन जीते इस तृतीय लिंगी जनों के प्रति भी अब विचारकों में जिज्ञासा जगी है तथा उनसे संबद्ध कई कृतियों की रचना भी हुई है। विवेच्य कृति में पूर्व कथित तथ्यों से इतर किसी विशेष तथ्य का उल्लेख नहीं हुआ है किन्तु इसका मुख्य उद्देश्य सबसे किंचित भिन्न किन्नरों के अतंर्गत में उमड़ती उनके अस्तित्व संबंधी शंका रही है। यथार्थ में कल्पना को समज्जित

कर लेखिका ने सिमरन को कथा रूपक के रूप में प्रस्तुत कर जनसामान्य को उनके पीड़ायुक्त जीवन से अवगत कराने का प्रयास किया है। उनके लिए उपहासात्मक अभिधानों तथा बधाई लेने आने वाली टोलियों के रंगे -पुते चेहरों, भड़कीले वस्त्र, एक विशिष्ट प्रकार में ताली बजाने, हंसी मजाक करने, गाने नाचने के कारण सामान्यतः उनके सुखी जीवन की भ्रांति होती है, जबकि वास्तव में उनका जीवन उतार-चढ़ाव, अभावों, पीड़ा और तिरस्कार का एक ऐसा अंतहीन सिलसिला होता है जो जीवन पर्यंत चलता रहता है।

किन्नर जीवन की सच्चाई बताता उपन्यास सिमरन के बचपन से आरंभ होता है। एक साधारण परिवार में जब बच्चा जन्म लेता है तो कोई यह नहीं सोचता कि यह किन्नर है। उस समय भी यही हुआ जब परिवार में बहुत खुशियाँ मनाई गईं और सिमरन को लड़के के रूप में रखा गया। पहली संतान के जन्म से सभी लोग बड़े प्रसन्न थे। सामान्य बच्चे की भांति सिमरन भी पाठशाला जाने लगी। वहीं से जीवन के दर्द भरे पलों का सवेरा होने लगा। ऐसा सवेरा जिसकी कोई संध्या नही होती। सहपाठियों के द्वारा छेड़छाड़ किये जाने पर उसके मन में एक टीस सी होने लगी। एक हृदय विदारक चुभन जो जीवन भर की घुटन बन गयी। दीपावली के त्यौहार में पिताजी ने रंगोली के रंग लाकर दिए। सिमरन ने भी बड़े मन से सुंदर रंगोली का निर्माण किया जिसे देखकर परिवार वाले बहुत खुश हुए कि

बच्चे ने रंगोली बढ़िया बनाई है। अब सिमरन उम्र के बारह बरस काट चुकी थी। परिवेश के साथ वह स्वयं को ढाल नही पा रही थी। क्योंकि उसकी आत्मा एक नारी की थी जिस्म नर का। वह स्त्री रूप में रहना चाहती । अपनी भावनाओं को शब्दों में पिरोकर परिवार के समक्ष रखना चाहा, लेकिन कोई सुनने को तैयार ही नहीं था। वे उसको समाज, इज्ज़त आदि का डर देकर चुप कर देते। वह खुलकर जीना चाहती है। परिवार साथ छोड़ देता है आस का दामन छूट जाता है परंतु सिमरन हार नहीं मानती। स्कूल में होने वाले दुर्व्यवहार के बारे में अपने परिवार को बताने पर परिणाम विपरीत हो जाता है। उसको फिर से वही पुरानी डर की कहानी सुनाकर चुप करा दिया जाता है ।

अब यह घटनाएँ सिमरन की रोज की दिनचर्या का हिस्सा बनती जा रही थीं । परिवार में आर्थिक तंगी पाँव पसारने लगी। ऐसे वक्त में सिमरन ने दुकान चलाकर अपने परिवार को सहारा दिया। घर का काम, स्कूल की पढ़ाई करना, यही उसका उद्देश्य बन गया। नौवीं कक्षा में अच्छे अंक पाकर भी उसके घर वाले खुश नहीं हुए । माँ ने फीस भरने से मना कर दिया। सिमरन की स्कूल शिक्षिकाओं ने फीस भरी तब जाकर उसकी दसवीं की पढ़ाई शुरू हुई लेकिन पूरी नहीं हो सकी। पिताजी ने दुकान बंद कर दी जिससे घर का माहौल दूषित हो गया। घर में मारपीट गाली-

गलौज, यही सब होने लगा। कमाने का काम सिर्फ सिमरन का था। सिमरन का भाई जो भी पैसा मिलता उसे दोस्तों में उड़ा देता। उसे घर की कोई चिंता नहीं थी। सिमरन कई समस्याओं, सफलताओं, असफलताओं से रूबरू होती नजर आती है। बाल्यावस्था से ही सिमरन कई समस्याओं से घिरी हुई नज़र आती है। परिवार एवं समाज द्वारा उसे तिरस्कृत किया जाता है। जहां परिवार के प्रेम की उसे आवश्यकता है उसके स्थान पर पारिवारिक सदस्यों द्वारा उसे प्रताड़ना दी जाती है । समाज द्वारा भी उसे अपनाया नहीं जाता है। शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार सभी को है। लेकिन सिमरन इसके लिए भी संघर्ष करती नज़र आती है। घर परिवार द्वारा तिरस्कृत करने पर अकेले जीवन जीने के लिए मज़बूर होती है। आवास के लिए भी उसे संघर्ष करना पड़ता है। लोगों की बुरी दृष्टि का भी उसे सामना करना पड़ता है। जब वह किन्नर समुदाय में शामिल होती है तब किन्नर गुरु द्वारा उसे भीख मांगने के लिए मजबूर किया जाता है जिसे वह स्वीकार नहीं करती है। सिमरन ने जिसे गुरु बनाया उसने भी उसको तकलीफ ही दी। यहाँ तक कि किन्नर समाज की रस्म का निवारण करवाकर उसे मरने के लिए छोड़ दिया। उसकी गुरु शराब पीकर मारने-पीटने पर आमदा हो जाती, कभी कभी सारी रात गाली-गलौज में कटती थी। ट्रेन में भीख मांगने से लेकर संस्थाओं में काम करने तक के सफर में कहीं न कहीं उसके शरीर से अपनी प्यास बुझाने की कोशिश करते समाज के इज्जतदार लोग मिलते

रहे। राजवीर नाम के लड़के से सिमरन को प्यार भी हुआ। यह लड़का उसे एक बार रेल में मिला था, जिसकी आर्थिक सहायता सिमरन ने की। उसने उसे अपने घर पाँच साल तक रखा। उसने भी बुरे वक्त में सिमरन का बहुत साथ दिया। लेकिन वह सिमरन को अपनाता नहीं है क्योंकि वह एक हिजड़ा है और हिजड़ों के हमदर्द नहीं होते, उन्हें सिर्फ दर्द ही दर्द मिलता है। अगर उसके माता पिता ही उसे अपना लेते तो शायद यह दास्तान नहीं बन पाती और उसका जीवन भी एक सुनहरी याद जैसा होता जिसे जितना याद करो उतना ही मन प्रसन्न होता है। एक अबोध बच्चे के साथ है वानियत की पीड़ा सहने के लिए उसे मजबूर किया गया – "आखिर क्यों? क्या इसलिए कि वह किन्नर है? क्या उसका कोई अस्तित्व नहीं" [51] ? इन्हीं मुद्दों को सोचने के लिए मज़बूर करती है यह सिमरन की कहानी। आगे कोई सिमरन न बन पाए। किन्नर भी समाज का अंग है तब भला समाज द्वारा क्यों अलग-थलग कोने में उसे धकेल दिया जाता है? क्यों उसके साथ दुर्व्यवहार किया जाता है? समाज को अपनी दृष्टि में परिवर्तन लाना होगा यह परिवर्तन तभी संभव है जब शिक्षक समुदाय द्वारा जागृति लाई जाए। शिक्षा ही परिवर्तन लाने का महत्वपूर्ण उपाय है। जब तक हम भेदभाव की दृष्टि को तिलांजलि नहीं देते तब तक सकारात्मक परिणाम आना असंभव है। ईश्वर की सृष्टि में कोई भी प्राणी हो चाहे जीव जंतु हो, चाहे स्त्री हो,

चाहे पुरुष हो सब अपना अपना अहम रोल निभाते हैं एक दूसरे के बिना सब अधूरे हैं सब एक दूसरे से जुड़े हुए हैं तब किन्नर को भी समाज, राष्ट्र एवं विश्व के लिए महत्वपूर्ण क्यों नहीं माना जाता है? मेरा मानना है कि वे भी अपने कृत्यों द्वारा समाज हित, राष्ट्रहित एवं विश्व हित में सहभागिता निभा सकते हैं। उन्हें आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करना, उन्हें सहयोग देना, उनका सहयोग लेना इस तरह की विचारधारा यदि हम अपनाते हैं तो वे भी आगे बढ़ेंगे और अपने को समाज का हिस्सा समझने लगेंगे ।

यह परिवर्तन समाज, राष्ट्र एवं विश्व के लिए हितकर होगा। मोनिका देवी ने अपने लेखन के माध्यम से किन्नर समस्या को उल्लेखित कर समाज के नजरिए में परिवर्तन लाने एवं किन्नर को अपनाने के लिए प्रेरित किया है। लेखिका की यह कृति पठनीय और समाज के लिए महत्वपूर्ण संदेश प्रेषित करती है। यह कृति पाठक को आदि से अंत तक भावुकता एवं गंभीरता से जोड़े रखती है। यह कृति सराहनीय है। अधिक से अधिक शोध लेखन में यह कृति महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करने योग्य है। यह न केवल सिमरन की कहानी है बल्कि प्रत्येक किन्नर की कहानी है जिन्हें कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है परिवार एवं समाज द्वारा तिरस्कृत होना पड़ता है। समाज के दृष्टिकोण में परिवर्तन की आवश्यकता है किन्नर

भी समाज का ही अंग है उसे भेदभाव की दृष्टि से ना देख कर उसे आगे बढ़ाने के लिए हमें कार्य करने की आवश्यकता है।

डॉ. मोनिका देवी ने सिमरन की इस हकीकत को अपने शब्दों में पिरोकर साहित्य जगत को एक अनमोल खज़ाना सौंप दिया है। यह पाठक का कर्तव्य है कि वह यह देखे और समझे कि यह उपन्यास यथार्थ से कितना जुड़ा हुआ है। इसमें किन्नर समाज के रीति रिवाज, लोक गीत आदि के बारे में भी जानने का अवसर मिलेगा। उपन्यास साधारण भाषा शैली में लिखा गया है। मुहावरे व लोकोक्तियों का प्रयोग अपनी-अपनी जगह सार्थक सिद्ध होता है। कुल मिला कर यह उपन्यास पाठक को बांधे रखता है।

3.3. हिंदी नाटक साहित्य में किन्नर जीवन

हिंदी गद्य साहित्य विधाओं में नाटक का एक अलग स्थान है क्योंकि वह दृश्य कला है । प्रारंभ से ही नाटक शिक्षा के साथ मनोरंजन भी करते रहे हैं । भारतेंदु हरिश्चंद्र ने खड़ीबोली नाटकों को एक स्वतंत्र नाट्यकला के रूप में एक पहचान दिलायी है । इन्होंने स्वयं नाटक लिखे और अन्य नाटककारों को मौलिक तथा अन्य भाषाओं से अनुवाद करने के लिए प्रेरित भी किया । हिंदी नाटक पर बात करते समय जयशंकर प्रसाद जी को केंद्र में रखकर हम अध्ययन करते हैं । हिंदी नाटक के इतिहास में प्रसाद पूर्व हिंदी नाटक , प्रसादयुगीन हिंदी नाटक , तथा प्रसादोत्तर हिंदी नाटक इसी प्रकार का विभाजन देखा जा सकता है ।

हिंदी नाटक के क्षेत्र में किन्नर पात्रों का उदय जयशंकर प्रसाद के नाटक ‘ ध्रुवस्वामिनी ‘ में देखा जा सकता है । नाटक के प्रथम अंक में ही ध्रुवस्वामिनी की विवशता के साथ रामगुप्त की विलासिता भाव को दिखाने के लिए कुबड़े,बौने और किन्नरों को प्रस्तुत किया गया है ।

“कुबड़ा : युद्ध ! भयानक युद्ध !

बौना : हो रहा है कि कहीं होगा मित्र ?

हिजड़ा : बहनो ! यहीं युद्ध करके दिखाओ न , महादेवी भी देखे ।

हिजड़ा : अरे ! यह तो मैं हूँ नलकूबर की वधु ! दिग्विजयी वीर , क्या तुम स्त्री से युद्ध करोगे ! लौट जाओ , कल आना ....अरे मैं स्त्री हूँ...”[52]

लेकिन किन्नर इसमें एक गौण पात्र है । इस नाटक में एक और अर्थ भी छिपा हुआ है कि रामगुप्त किन्नरों के साथ मनोरंजन करना चाहता है । इससे यह ज्ञात होता है कि रामगुप्त के मन में नपुंसकता है ।

इसके अलावा किन्नर पात्र के रूप में आने वाले नाटक कम है । लेकिन इक्कीसवीं शती में इसपर नाटक लिखना शुरू कर दिया है जिसका परिचय प्रस्तुत कर रहा है –

3.3.1.किन्नर केन्द्रित नाटक

इसके बाद प्रसादोत्तर युग में परिस्थितियां बदलने लगीं । इस समय के इक्कीसवीं शती हिंदी नाटक के क्षेत्र को भी एक नया मोड़ दिया ।

स्त्री , दलित , आदिवासी , किसान तथा अल्पसंख्यक आदि विमर्शों को लेकर नाटक रचे गए । लेकिन हिंदी किन्नर केन्द्रित नाटक बहुत कम मिलते हैं । अब नाटककारों की दृष्टि किन्नर पर आ रही है । आशा है कि भविष्य में इस विधा में बहुत सारी रचानाएँ होनेवाली हैं । किन्नरों को समाज से वर्जित माना जाता है । साहित्यकारों की दृष्टि किन्नरों पर बहुत कम गयी है । इस दृष्टि से किन्नर पर आधारित केवल दो ही नाटक उपलब्ध हैं – महेश दत्तानि द्वारा लिखित "आग के सात फेरे" और हरीश बी शर्मा द्वारा विरचित "हरारत" ।

3.3.2. आग के सात फेरे - महेश दत्तानी

"आग के सात फेरे" महेश दत्तानी द्वारा लिखा गया बहुचर्चित नाटक है जिसमें उन्होंने अग्नि को सप्तपदी द्वारा सात प्रदक्षिणा अर्थात् वर-वधू के विवाह के प्रमाण के रूप में स्वीकार किया गया है। नाटककार ने विवाह के इस पवित्र बंधन पर प्रश्न-चिन्ह लगाकर संशय की स्थिति पैदा की है जिससे कुलीन वर्ग कटघरे में खड़ा हो गया है। महेश दत्तानी के अनुसार किन्नर यानि तीसरा लिंग जिसे अंग्रेजी में थर्ड जेंडर की भी संज्ञा दी गई है, भी पुरुष और स्त्री की तरह ईश्वर की रचना है, उनके साथ समाज द्वारा उपेक्षा का व्यवहार दैवीय व्यवस्था की अवहेलना नहीं है? उनका यह

कथन चिन्तनीय है कि "आग के सात फेरे" लेने के बाद यदि स्त्री और पुरूष के कोई संतान नहीं हैं या स्त्री बांझ है तो क्या समाज उनकी उपेक्षा करता है? नहीं न...। तो फिर किन्नर के लिए ही यह दोहरा व्यवहार क्यों? नाटककार उन सभी भ्रमों की दीवार को ध्वस्त कर देते हैं जो किन्नरों के साथ उपेक्षा, भेद भाव व तिरस्कार का वातावरण उत्पन्न करता है। इस नाटक की विशिष्टता का व्याख्यान करती हुई डॉ. बीना अग्रवाल लिखती हैं-"महेश दत्तानी ने नाटक को उनकी आवाज बनाया है, जो वर्षों से अपनी पहचान के लिए संघर्ष कर रहे हैं, जिनकी आवाज को कुलीनों ने दबा दिया है और जिन्हें अंधेरे में रखने के लिए कई मिथक और सामाजिक पूर्वाग्रह बनाए गए हैं। दत्तानी उन लोगों की पहचान कराने की कोशिश करते हैं जिनका आधुनिक वैज्ञानिक, सभ्य और व्यवस्थित सामाजिक ढांचे में कोई स्थान नहीं है।"[53]

नाटक “सेवन स्टेप्स एराउण्ड दि फायर" यानी "आग के सात फेरे" हमें न केवल किन्नरों की समस्याओं से आत्मसात कराता है बल्कि उन्हें उनके नारकीय दुखद जीवन की पीड़ा, दुख दर्द से भी रु-ब-रु कराता है। इसमें कमला, अनारकली, चंपा, खुशबू, उमा, मानस्वामी, श्री शर्मा आदि के

माध्यम से नाटक का उद्देश्य पूरा होता है। यहां राजनीति और प्रशासन में भी किन्नरों के प्रति दया व सहानुभूति के भाव दृष्टिगत होते हैं। नाटककार न्याय के लिए तरसने वालों और कोने में कराहने और उन्हें मुख्य धुरी पर लाने की दृष्टि से लेखन के लक्ष्य को वर्णित करता है। नाटककार का कथन दृष्टव्य है- "मैं अपने सामाजिक ताने-बाने, अपने समय, मध्यम वर्ग और 'शहरी भारत' के लिए लिखता हूँ। मेरा नाटक उन सभी लोगों की आवाज है जो समाज में आजादी और पहचान पाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। मैं ऐसी किसी भी चीज का खुलासा नहीं करता जो लोगों को रोमांचित करती हो या ऐसी सामग्री का खुलासा करती हो जिसे दर्शकों ने कभी नहीं देखा हो, बल्कि उन लोगों के बारे में लिखता हूँ जो हाशिए पर हैं, जो उदासीन महसूस करते हैं। यही मेरी पहचान है।"[54]

नाटक में पुलिस अधीक्षक सुरेश राव की पत्नी उमोराव पी.एच.डी. के संबंध में अनारकली से मुलाकात करती है जब उसे मालूम होता है कि अनारकली पर किन्नर की हत्या का आरोप लगाया गया है। इसके साथ ही जब उसे पता चलता है कि अनारकली राजनेताओं और पुलिस के बीच सांठगांठ के कारण एक कैदी है, तो वह चौंक जाता है। मंत्री-पुत्र सुब्बू के

प्रति कमला के प्रेम का क्या होता है, सार्वजनिक आलस्य और मर्यादा के भय में सलीम को धोखा देकर सलीम की हत्या कर दी जाती है और निर्दोष अनारकली पर इसका झूठा इल्जाम लगाकर जेल भेज दिया जाता है। यहां यह प्रश्न उठता है कि क्या मानस्वामी जैसे पुलिसकर्मी के चरित्र में अमानवीय किन्नर की मानसिकता साफ झलकती है? क्या उसे प्यार करने का अधिकार नहीं है? अनारकली उमा किन्नर की बहन है, इसलिए उसके द्वारा उसकी हत्या किए जाने का सवाल ही नहीं उठता। यहां किन्नर से किन्नर का स्खलन उसके प्रति संवेदनशील होने का प्रमाण है। किन्नरों की समस्या हर देश-विदेश में है लेकिन ,किन्नर की सबसे दयनीय स्थिति भारत में देखने को मिलती है। यहाँ उन्हें गैर-मानव के रूप में देखा जाता है और उनकी समाज के हर वर्गों द्वारा उपेक्षा की जाती है और उन्हें 'आग के सात फेरे' यानी वैवाहिक बंधन से वंचित कर दिया जाता है। इसी तरह जब उमा की किन्नर समुदाय के गुरु चंपा से मुलाकात होती है, तो वह किन्नरों के रहन-सहन, संस्कृति, भाषा और जीवन शैली के साथ उनकी समस्याओं और वास्तविकताओं से पूरी तरह परिचित हो जाती है। इसी तरह जब

उमा को चंपा के बारे में पता चलता है कि वह कमला को अपनी असली बेटी से भी ज़्यादा प्यार करती है, तो उसे अहसास हो जाता है कि मानवीय संबंधों को निभाने व उसका निर्वहन करने में किन्नरों का कोई मुकाबला नहीं है। जिस प्रकार बंजर भूमि को अथक परिश्रम से उपयोगी बनाया जा सकता है, उसी प्रकार किन्नरों की सहभागिता भी समाज को सजाने और संवारने के लिए क्यों नहीं हो सकती है? इतिहास साक्षी है कि अभिकथित कुलीन लोग धर्म, जाति, वर्ग और रंग के आधार पर समाज में भेदभाव की स्थिति उत्पन्न करते हैं। यह समाज के वही लोग हैं जिन्होंने द्रौपदी का चीर-हरण किया और सीता को अग्नि परीक्षा के लिए बाध्य किया था। किन्नरों को समाज ने कभी स्वीकार नहीं किया बल्कि हमेशा ही हाशिये पर रखा। किन्नरों ने कोई भ्रष्टाचार नहीं किया और न ही किसी का शोषण किया, फिर भी समाज के स्वार्थी लोगों ने उनके लिए अपराधी और विकृत मानसिकता का माहौल बना कर उनमें भय और भ्रम की स्थिति पैदा कर दी। यह नाटक किन्नरों के जीवन यथार्थ को देखने और समझने के लिए कान और आंखें खोलने का सफल प्रयास है।

3.3.2. **हरारत** - हरीश बी. शर्मा

"हरारत" हरीश बी. शर्मा द्वारा लिखा गया एक लघु नाटक है जिसमें किन्नर माल चंपा की केंद्रीय भूमिका है, जो मानवीय मूल्यों को देखने के लिए हरारत का बखान है। आज एक ओर जहां शिक्षित समाज शोषण और भ्रष्टाचार में लिप्त हैं, वहीं सभ्य समाज द्वारा मानवीय मूल्यों का क्षरण हो रहा है और सेवा, समर्पण और बलिदान से तथाकथित निरक्षर किन्नर चंपा, जिन्हें कुलीन माना जाता है, द्वारा मानव मूल्यों का क्षरण हो रहा है। उसकी समस्या का निदान उसके उज्ज्वल-धवल वाले मानवीय पक्ष को उजागर करता है।

किन्नर का स्मरण होते ही धधकती साड़ियां, होठों से सजे चेहरे, छल कपट, पैसे हड़पने वाले विशेषज्ञ, मारपीट में दांतेदार, अश्लील हरकतें करने वाले मर्द, डर और दहशत के माहौल में अपनी औकात दिखाने पर आमादा ये लोगो में आतंक का माहौल उत्पन्न करते हैं और डरा धमका कर बहुत से कार्य भी करते हैं। जब आते हैं तो लोग उनके लिए रास्ता छोड़ देते हैं या आगे-पीछे हट जाते हैं। उनके अमानवीय चेहरे और घिनौने व्यवहार उनके भीतर की मर्दानगी तक नहीं पहुँच पाते हैं, जिससे वे अकेले रहने के लिए

ऐसा बाहरी आवरण ढक लेते हैं, ताकि वे सकून से रह सकें और आजीविका चला सकें। यदि आप ऐसा मुखौटा नहीं लगाते हैं, तो आप शोषण के चक्र को कैसे चला पाएंगे। यही कारण है कि सामान्य लोग अपने बाहरी व्यक्तित्व के बारे में जानते हैं, अपने आंतरिक अस्तित्व के विषय में नहीं। वे भी इंसान हैं, उनमें भी मानवता है, जो आम आदमी से जुड़ी है। वे परिवार को प्यार, माँ का प्यार, भाई से उपहार और मातृत्व की स्वीकृति सबका साथ छोड़ देते हैं। यहां उल्लेखनीय है कि परिवार में रहने वाले बर्तनों की तरह एक दूसरे से टकराते हैं, जबकि किन्नर परिवार के साथ रहने और उनका प्यार पाने के लिए तरसते हैं। इन्हीं मानवीय गुणों को उजागर करने की दृष्टि से इस लघु नाटक की रचना की गई है। हरीश बी. शर्मा के अनुसार समाचारपत्र नाटक के लिए विषयवस्तु दे सकता है। इसका एक उदाहरण है यह नाटक “हरारत" । कैसे एक वर्ष 2003 में एक न्यूज फैली थी ‘लव स्टोरी-2003 पति, पत्नी और किन्नर’। इस न्यूज में एक किन्नर की कहानी थी जिसने एक आदमी से शादी कर ली लेकिन जब उसे महसूस हुआ था कि आदमी को अपनी पत्नी के रूप में एक महिला की

जरूरत है, तो उसने खुद उसका विवाह करा दिया। इस लघु नाटक ने इस मूल प्रकरण की शुरुआत की, जिसने मूल रूप से यह संदेश दिया कि किन्नरों के मन में भी माता-पिता बनने की इच्छा होती है। नाटक का आरंभ शशि नाम की एक कुंवारी लड़की से होता है जो प्रेमी के चंगुल में फंसने के बाद गर्भवती हो जाती है।उसके प्रेमी द्वारा धोखा दिए जाने से वह बहुत हताश हो जाती है,उसके भावजूद भी वह अपने प्यार की निशानी को सुरक्षित रखना चाहती है। उसके माता-पिता आगामी जीवन देखते हुए उससे उसके गर्भ में पल रहे बच्चे को गिराने की जिद करते हैं। लेकिन वह अपने इरादे पर अडिग रहती है और एक दिन वह ट्रेन में बैठकर अपना घर छोड़कर चली जाती है। भावुक शशि इस बात पर अटल है कि जब बच्चे का पिता गैर-जिम्मेदार है और उसके पिता निर्दोष बच्चे को पापी साबित कर उसे मारने को आतुर है, तो उसके रक्षा और जन्म देने के लिए एक नया घर ढूंढना ही श्रेयस्कर रहेगा। आज कहाँ सुरक्षित थी अकेली महिला की जान? शशि के ये शब्द स्टांप कलेक्टर के धमकाने और फिर तीन गुंडों – मावली अकबर, पप्पू और बबलू – को बचाए जाने के बाद उनकी पकड़ से बाहर

आने से पता चलता है "आज तक फायदा ही तो उठाते हो मर्द होने का फायदा! मुगलसराय से यहाँ तक सारे मर्द एक से नाटक करते है, मददगार बनने का फिर कर्ज चढ़ा देते हैं।"55

बच्चे को जन्म देते हुए शशि की आंखे आंसुओ से नम थी। थोड़ी देर बाद एक महिला आती है और खुशखबरी सुनाती है कि तुमने एक बेटे को जन्म दिया है। यह खबर सुनकर चंपा खुशी से फूली न समाई, लेकिन कुछ देर बाद जानकारी मिलती है कि शशि की मौत हो गई है। शशि का अंतिम वाक्य भविष्यवाणी की तरह सच साबित होता है "मुझे भूल जाए, लेकिन तुम्हें भूले नहीं, चंपा किन्नर को पुत्र-गहना मिलता है" [56] इस घटना से अभी भी यह प्रश्न बना हुआ है कि क्या किन्नर माता-पिता नहीं बन सकते? क्या किन्नर को बच्चा गोद लेने का अधिकार हैं? आदि मुद्दों को भी इस नाटक में उजागर किया गया है। इस दृष्टि से यह नाटक सफल है।

3.4. हिंदी आत्मकथा साहित्य में किन्नर जीवन

डॉ.सविता सिंह के अनुसार “किसी व्यक्ति द्वारा अपने बारे में लिखी गयी पुस्तक / आत्मकथा अपने ही मुख से या अपना लिखा हुआ

जीवन वृतांत , आत्मचरित , आपबीती" [57] आत्मकथा नाम से ही स्पष्ट है कि लेखकीय जीवनी है , जिसमें वह 'मैं' बनकर केन्द्रीय भूमिका का निर्वाह करता है। अपनी जुबानी में स्वतः लिखने की एक विधा है।

बनारसी दास जैन द्वारा लिखित 'अर्धकथा' (1941) को हिंदी की पहली कृति माना जाता है। इस कृति से शुरू होकर आत्मकथा साहित्य एक नदी की तरह प्रवाहमय बन गयी है। स्त्री , दलित, आदिवासी एवं विकलांग पर भी अनेक आत्मकथाएं चर्चित रही है।

मूलतः किन्नर साहित्य में सहानुभूति परक रचनायें ज़्यादा हैं स्वानुभूति का नहीं। इसका मुख्य कारण यह है कि शिक्षा का अभाव। शिक्षा ग्रहण करना , नौकरी पाना आदि किन्नरों से बहुत दूर की बात है। बचपन से ही किन्नरों को अपने परिवारों से अलग होना पड़ता है।

हिंदी आत्मकथा के क्षेत्र में किन्नर पर आधारित मौलिक आत्मकथा संख्या में नहीं है। " मैं पायल" महेंद्र भीष्म द्वारा रचित एक आत्मकथात्मक उपन्यास है। मराठी भाषा में लिखित लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी जी की आत्मकथा 'मैं हिजड़ा ,...मैं लक्ष्मी' एक अनमोल रचना है। इसके साथ मानोबी बंध्योपाध्याय की 'पुरुष तन में फँसा मेरा नारी-मन' भी किन्नर पर केंद्रित आत्मकथा में महत्वपूर्ण है।इसके साथ ए रेवती की " हमारी कहानियां , हमारी बातें" और "मैं पायल" जैसी रचनाओं में लेखक खुद किन्नर की व्यथा को हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं।

यहाँ किन्नर पर आधारित दो उल्लेखनीय आत्मकथाओं का विवेचन किया जा रहा है ।

3.4.1.'मैं हिजड़ा ... मैं लक्ष्मी' – लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी

लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी द्वारा लिखित "मैं हिजड़ा ... मैं लक्ष्मी" (2015) पहली किन्नर आत्मकथा है जिसमें लक्ष्मी के बचपन से लेकर अब तक के यात्रा का वर्णन है । यह आत्मकथा किन्नरों के तमाम जीवन के विषय में बारीकी से किया गया अवलोकन है। इसके ज़रिये लक्ष्मी जी के जीवन के कई पड़ाव इसमें दर्ज हुए हैं । लक्ष्मी जी 2008 में संयुक्त राष्ट्र में एशिया का प्रतिनिधित्व करने वाली पहली किन्नर व्यक्ति है । यह आत्मकथा मूलतः मराठी में लिखी गयी बाद में गुजरती और अब अंग्रेज़ी और हिंदी में भी प्राप्त है । इसका हिंदी अनुवाद डॉ. शशिकला राय और सुरेखा दोनों ने मिलकर किया है।

लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी की आत्मकथा की शुरूआत होती है –"पूर्वी उत्तर प्रदेश के सरयूपारीण ब्राह्मण चन्द्रदेव चंडीनाथ त्रिपाठी के बड़े बेटे लक्ष्मीनारायण उर्फ राजू के बचपन की यादों से .... ठाणे शहर में सिद्धेश्वर तालाब के किनारे एक कच्चे घर में माँ, पापा, बड़ी बहन, मिंटू, छोटा भाई शशि और राजू। राजू का पूरा बचपन अस्थमा की बीमारी में ही बीता। कमज़ोर होने के नाते बहुत भागदौड़ की मनाही के बावजूद उसे

नृत्य का बेहद शौक था अकेला था, बीमार था, फिर भी मुझे नृत्य करना बहुत पसंद था......शायद मेरी बीमारी में यही मेरे दिल बहलाने का जरिया"[58]

यह सत्य है कि जान – बूझकर कोई किन्नर नहीं बनता । यह एक सरल बात भी नहीं है । लेकिन समाज की नज़र पर वह नाचनेवाला था। उसे छक्का, बायकया, मामू कहकर लोग चिढ़ाने लगे। " हिजड़ा बनना बहुत बड़ी और कठिन प्रक्रिया है । असल में वह मानसिक होती है और बाद में उसे आध्यात्मिक और सामाजिक अधिष्ठान दिया जाता है । किसी पुरुष को , विशेष रूप से वह औरत है , ऐसा लगने लगता है कि पुरुष के रूप में उसका जीना मुश्किल हो जाता है और वह हिजड़ा होने का फैसला करता है"[59]

लक्ष्मी जी के जीवन में डांस ने उनको एक नया मोड दिया। डांस लक्ष्मी के अंदर था - ''एक कलाकार, डांसर के रूप में इससे पहले मैं सहज ही लोगों के सामने जाती थी। पर अब मैं हिजड़ा थी। मेरी कला मेरे साथ थी ही, पर उसके साथ ही समाज में रहकर हिजड़ों के लिए काम भी करना था। सिर्फ कला पूरी पड़नेवाली नहीं थी उसके साथ एक्टिविज़्म को जोड़ना था।''[60] एक आम किन्नर की तरह लक्ष्मी अपनी जिंदगी को सामाजिक उपेक्षा और कलंक का निशाना नहीं बनाना चाहती थी बल्कि अपनी शिक्षा

और कला के बल पर वह समाज में दूसरों की तरह जीने का दृढ़ निश्चय करती है । लक्ष्मी भी अपने समाज के पिछड़ेपन का कारण शिक्षा का अभाव ही मानती है। लक्ष्मी स्वयं पढ़ी-लिखी है और उसी प्रकार अपने समाज के किन्नरों को शिक्षा देना चाहती है। वह कहती है - "मुझे प्रोग्रेसिव् हिजड़ा होना है...... और सिर्फ मैं ही नहीं अपनी पूरी कम्यूनिटी को मुझे प्रोग्रेसिव बनाना है"[61]

लक्ष्मी ने अपने समाज के नियमों का पालन करना बधाई माँगना, नाचना, भीख माँगना आदि कामों का विरोध किया। वह एक सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में कार्य करना चाहती है। लक्ष्मी का मानना है जो सम्मान उसे मिल रहा था, वही सम्मान उसके जैसे अन्य लोगों को भी मिलना चाहिए। इस उद्देश्य से अन्य साथियों से मिलकर 'दाई वेलकेयर सोसाइटी' के छात्रों के साथ नया काम शुरू किया। लक्ष्मी उस संस्था की पहली अध्यक्षा भी बनी। लक्ष्मी ने किन्नरों द्वारा स्वयं के स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के हल एवं उसके प्रति सचेत होने के उद्देश्य से अन्य संस्था भी शुरू की। इसका नाम 'अस्तित्व' रखा गया था।

लक्ष्मी सिर्फ अपने ही विकास, अपनी ही भलाई की चिंता नहीं करती अपितु अपने संपूर्ण समाज के लिए संघर्ष करती है। सन् 2007 में वह 'अस्तित्व' को रजिस्टर करके प्रोजेक्ट शुरू करते हुए किन्नरों की तरफ देखने

व व्यवहार करने का समाज का नज़रिया तबदील कर दिया , दूसरा मई 2007 में ट्रांसजेंडर फिल्म फेस्टिवल में लक्ष्मी द्वारा अभिनीत फिल्म 'बिटवीन द लाइन्स' दिखाकर किन्नर को प्रेरणा भी दिया।

अंततः यह कहा जा सकता है कि लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी की 'मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी आत्मकथा' एक ऐसी अमूल्य कृति है जो उनके ज़रिए किये विभिन्न कार्यों, संघर्षों , और उस संघर्षों से मिले सम्मान व प्रसिद्धि प्राप्त करने को दर्शाती है। किन्नर को प्रेरणा देनेवाली यह एक अनुपम साहित्यिक सृष्टि है। यह कृति नकार को स्वीकार में बदलते जीवन का सच्चा दस्तावेज़ है।

3.4.2. पुरूष तन में फँसा मेरा नारी-मन

एक ऐसी ही चर्चित एवं महत्त्वपूर्ण आत्मकथा है 'पुरूष तन में फँसा मेरा नारी मन।' यह मूल रूप से अंग्रेजी में ' A Gift of Goddess Lakshmi' नाम से लिखा गया है जिसका हिन्दी का शब्दबद्ध करने का श्रेय सिमयी मुखर्जी पांडेय को है। मानोबी जी अपने जीवन में काफी सफलता हासिल कर पाई। उसके लिए उन्हें जो मदद मिली है, उनको यह आत्मकथा समर्पित करते हुए वे लिखती हैं कि "उन सबके नाम जिन्होंने मुझे अपमानित किया और अवमानव कहकर जीवन के हाशिए पर धकेला

दिया। उन्हीं के कारण मुझे लडने की ताकत मिली और मैं जीवन में आगे बढ़ पायी।''62

सोमनाथ से मानोवी बनने तक की यात्रा कितना संघर्ष पूर्ण रही यह आत्मकथा पढ़ने से पता चल जाता है। मानोबी के शब्दों में - ''मीडिया का कहना है कि कोई ट्रांसजेंडर पहली बार कॉलेज के प्रिंसीपल पद पर नियुक्त हुई जो अपने-आप में एक उल्लेखनीय कदम है।''63

आत्मकथा की सबसे महत्त्वपूर्ण बात शिक्षा को ले कर आयी है। अपनी शिक्षा के द्वारा सोमनाथ ने अपनी ज़िन्दगी की कठिन परिस्थितियों का मुकाबला किया। उसने अपनी शिक्षा के बल पर ही अध्यापन का क्षेत्र चुना, न कि गाने-बजाने, नाचने या धंधा करने का - "मैंने अपनी वैकल्पिक लैंगिकता के बावजूद के लिए उच्च शिक्षा अर्जित की थी।''64

उन्होंने अपनी पी. एच. डी. की शिक्षा पूर्ण की। सन् 2012 में राज्य ने प्रधानाचार्य पद की नियुक्ति का विज्ञापन दिया। मनोबी बंघोपाध्याय भारत की पहली प्रिंसीपल तक पहुंचनेवाली किन्नर है। सामान्य तौर पर हम मानते हैं कि किन्नर जो हैं पढ़े – लिखे नहीं होते हैं थोड़ी बहुत उनकी जानकारी होती है बस। लेकिन मनोबी जी ने इस मिथ को तोड़ा और महिला कॉलेज में प्रिंसिपल तक बनी। जिस सामान्य रूप में हम किन्नरों

को जानते हैं कि वे भीख मांगते हैं , लोगों को तंग करते हैं , पैसे हटते हैं , मानोबी ने जीवन में ये सब कभी नहीं किये ।

मानोबी का जन्म चितरंजन के घर में होता है। पिता समझते हैं कि दो बेटियों के बाद दुर्गा प्रसाद भी लाया है तो पुत्र का नाम सोमनाथ रख देते हैं। जैसे जैसे सोमनाथ बड़े होता है वह नारी बनने के लिए छटपटाने लगता है। उसे महसूस होता है कि मैं स्त्री हूँ , मेरे अंतर , मेरे हाव – भाव में , मेरी आत्मा में एक स्त्री का निवास है। अपनी दोनों बड़ी बहनों के कपड़े मानोबी अपना लेता है। घर में वह स्त्रियों के कपड़े पहनता है। उसके हाव – भाव , चलने का ढ़ंग , बात करने का तरीका सबकुछ स्त्रियों जैसा ही रहता है। उसे नृत्य बहुत पसंद होता है संगीत बहुत पसंद होता है जैसे यह उसके जन्मजात गुण हो।

स्कूल के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में वह भाग लेता है। पढाई में वह होशियार था। लोग सोमनाथ के बारे में उलटी – सीधी बातें तो करते हैं। माँ पुत्र को समझाती है कि लड़के स्त्रियों जैसा व्यवहार नहीं करते हैं , स्त्रियों के कपड़े नहीं पहनते हैं। सोमनाथ का जवाब होता है " माँ तुम क्यों

नहीं जानती हो कि मैं स्त्री ही तो हूं , स्त्री बनना चाहता हूं , , मुझे ऐसे ही रहने दो" 65 माँ निरुत्तर हो जाते हैं।

घर में सम्पन्नता थीं। आर्थिक रूप से कोई दिक्कत नहीं थी ।लेकिन कभी भी सोमनाथ चैन से नहीं रह सका । हमेशा उसके अंतर स्त्री बनने की ललक रहती है जो नहीं था वह वही बनना चाहता था । वैसा ही व्यवहार करना चाहता था ।

सोमनाथ परेशान होता रहता है ।पहली परेशानी होती अपने अंतर की बेचैनी को दूर करने की , अपने अंतर के स्त्री को सामने लाने की , दूसरी बेचैनी होती है लोगों का सामना करने की । सात – आठ साल की उम्र तक उसके हाव भाव बिल्कुल लड़कियों जैसे हो गये थे ।संभवतः अपनी इसी भावना को जताने के लिए ही वह लड़कों को अपनी ओर आकर्षित करता था । " पांचवीं कक्षा तक आते -आते , मैं सुदंर नौजवानों की ओर आकर्षित होने लगी थी ।"66

एक आम धारणा है कि किन्नर मतलब सिर्फ किन्नर । हम लोगों से कई यह नहीं जानते हैं कि किन्नर बहुत प्रकार के होते हैं जिनमें कुछ लैगिक कमज़ोर रहते हैं , कुछ वे जो विपरीत लिंग के प्रति आकर्षित रहते हैं जैसा

कि सोमनाथ था। पुरुष तन था लेकिन स्त्री बनना चाहता था। कई ऐसे किन्नर भी होते हैं जो स्त्री तन में रहते हैं लेकिन पुरुष बनना चाहते हैं। उनके अंदर हार्मोनल बदलाव होते रहते हैं और ये सब कुछ जन्म से ही होते हैं।

आज विज्ञान ने इतनी तरक्की कर ली है कि लिंग परिवर्तन हो जाता है। लिंग परिवर्तन के साथ ही हॉर्मोन के इंजेक्शनस दिये जाते हैं जिसके बाद जिस लिंग में व्यक्ति को परिवर्तित किया जाता है व्यक्ति का उसी तरीके से उसका शरीर सही रेट करने लगता है। त्वचा वैसी ही बनने लगती है व्यक्ति वैसा ही दीखने लगता है और जो लिंग परिवर्तन कराके अपने मनोवांचित रूप में आते हैं उसे ही किन्नर कहते हैं। सोमनाथ भी किन्नर बनने के लिए , अपना ऑपरेशन कराने के लिए बेचैन रहता है। अपने चित और लगन के बल पर सोमनाथ अपना ऑपरेशन करवाने में सफल होता है। लेकिन तब उनको पता चला कि यह रास्ता कितना मुश्किल था। सिर्फ ऑपरेशन कराना काफी नहीं था। इस दौरान शरीर में बहुत सारे बदलाव होते हैं । हर बदलाव मन तक पहुंचता है , मानसिक रूप से भी कई तरह का भेदभाव झेलना पड़ता है। इसके लिए एक मानवशास्त्री से

भी उन्हें मिलना पड़ता था । मन और शरीर पर विजय पाने के बाद उसका सामना समाज से होता है। समाज अब तक उसे पुरुष समझता था। अब स्त्री के रूप में समाज के सामने जाना और समाज का सामना करना बहुत कठिन था।

नया तन पाने के बाद उसने अपना नया नाम 'मनोबी बंघोपाध्याय' रखा। 'मानोबी' यानी कि 'सर्व श्रेष्ठ माता'। इस आत्मकथा में मनोबी ने अपने यौन जीवन के बारे में भी सब कुछ खुलकर लिखा है। इतना खुलापन आपको अन्य आत्मकथाओं में नहीं मिलेगा। स्त्रीपन की तलाश में सोमनाथ कितने लोगों से संबंध बनाता चला गया। शुरुआत में लोगों ने उसका काफी शोषण किया फिर उसकी इस आदत में शामिल होता चला गया। " यह सब यहीं समाप्त नहीं हुआ। वह उस आदमखोर बाघ की तरह था जिसने इंसानी लहू चख लिया था , वह हमेशा इसी मौके की ताक में रहता है कि मुझे अकेले में कैसे घेरा जा सकता था। धीरे – धीरे हम दोनों के लिए यह सब नियमित होता चला गया" [67] मानोबी ने पूरी ईमानदारी से अपनी चंचल और अस्थिर मनोवृत्ति के बारे में बताया है। उसने किन्नरों के यौन व्यवहार के बारे में भी खुलकर लिखा है।

यह ऐसी आत्मकथा है जो समाज के हिस्से के बारे में भी बता देते हैं जिसके बारे में हम बिल्कुल नहीं जानते थे I निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि 'पुरूष तन में फँसा मेरा नारी मन' आत्मकथा हरेक किन्नरों में चेतना जगाने का प्रयास करती है।

3.5. हिंदी कविता साहित्य में किन्नर जीवन

भारतीय वाग्मय की प्राचीनतम विधाओं में कविता का अपना महत्व है I साहित्य में कविताओं को पृथक स्थान रखती हैं I क्योंकि जितना भी प्राचीन साहित्य हमें प्राप्त होता है वह पद्य विधा में ही मिलता है I हिंदी , संस्कृत में रचित धार्मिक साहित्य पद्य विधा में ही दृष्टिगत होता है I प्राचीन काल में कविता का क्षेत्र धीरे – धीरे उदात्त नायक तक सीमित था , वहीं वर्तमान परिप्रेक्ष्य में वह हाशिये के उन अनेक वंचित लोगों को अपने में समाहित करता है जिनका वर्णन न तो इतिहास ने किया और ही परंपरागत कविताओं में दृष्टिगत हुआ I इस परिप्रेक्ष्य में कविता आज उन वंचितों की भावुकता और संवेदना उत्पन्न करती है और कविता का अनायास ही सृजन होता है जिन्हें समाज ने बहिष्कृत , उपेक्षित और अपनी हेय दृष्टि के कारण हाशिय पर धकेल दिया था I जहां उनके सन्दर्भ में कोई भी बात नहीं करना चाहता था I वर्त्तमान में बहुत ऐसे विद्वान भी हैं जो

विमर्शों को नहीं मानते हैं और मानते हैं कि इससे साहित्य का बंटवारा होता है क्योंकि साहित्य सबकी भावनाओं को एक धागे में पिरोने का कार्य करता है जबकि कविता भावात्मक अभिव्यक्ति का सशक्त एवं संवेदना का प्रतीक है। साहित्य का सृजन ही पीड़ा की अनुभूति होने पर होता है। जिसका मुख्य मार्ग कविता की विधा से ही होकर जाता है जिसमें अक्सर कम शब्दों में प्रतिबिंब , आभास , संवेदना , भावुकता , पीड़ा को महसूस किया जा सकता है।

वर्तमान समय के अनेक विमर्शों में किन्नर – विमर्श का भी स्थान उल्लेखनीय है जिसमें पद्य और गद्य दोनों विधाओं में सृजन हो रहा है। इस भाग में हम किन्नरों के सन्दर्भ में कविताओं में जो चर्चा हुई है उसका विश्लेषण करें जिससे किन्नरों की पीड़ा को आसानी से कम शब्दों के माध्यम से समझा जा सके।

किन्नर जीवन वास्तव में बहुत कष्टदायी और दुखों से परिपूर्ण है क्योंकि किसी परिवार में इनके जन्म लेने के बाद ही कठिनाईयां प्रारंभ हो जाती हैं। यद्दपि उस नवजात को ही पता नहीं होता है कि वह लैंगिक तौर पर भिन्न है और उसकी शारीरिक संरचना भी पृथक है। फिर भी उसके बदले का कष्ट माँ सहना प्रारंभ कर देती है। और पितृसत्तात्मक समाज ने

उनको अधिक प्रताड़ित किया है। क्योंकि इस समाज ने स्त्रियों को ही दोयम दर्ज का समझा तो अलैंगिक व्यक्तियों की स्थिति किस प्रकार की होगी इसको आसानी से समझा जा सकता है।

किसी व्यक्ति के प्रति प्रथम दृष्टया उसके हाव – भाव , चाल – चलन , पहनावे के आधार पर बनाई जाती है। लेकिन व्यक्ति उसके कार्य के द्वारा ही उसका आंकलन करते है कि व्यक्ति किस प्रकार का है। उसका कार्य क्षेत्र किस कोटि का है , ऐसा ही किन्नरों के लिए होता है। जब वह हमारे सामने बधाई लेने आते है तो मस्तिष्क में एक प्रतिबिंब बनता है कि पहनावे और रूप श्रृंगार से तो स्त्री है लेकिन वह जब मुंह खोलते है तो उनकी आवाज़ से वह पुरुषों के बहुत निकट होते है। इस प्रकार वह न तो स्त्री की श्रेणी में आते है और न ही पुरुष की। उनको तो स्त्री – पुरुष के मध्य एक दूसरी प्रजाति समझा जाता है जिसको पूरी दुनिया भिन्न – भिन्न भाषाओं में भिन्न – भिन्न नाम से पुकारती है जैसा कि कविराज किशोर राजन ने जनता की सोच का प्रतिबिंब दिया है –

“ हिजड़ा कहते ही दुनिया की साड़ी गालियां
नग्न हो करने लगती हवा में नृत्य जिसमें नहीं होते

शब्द , स्पर्श , रस , रूप और गंध के छयंक भर
बस होता है चित्कार , हाहाकार , रूदन की
जैसे फट पड़ा हो धरती का कलेजा
हिजड़ा कहते ही मनुष्य की आदिम बर्बरता
अपनी पुरी ताकत के साथ रखती धरती पर पैर
और धरती की आँखों से ढुलक पड़ते अश्रुजल"[68]

समाज में अक्सर देखा जाता है कि किसी भी शुभ कार्य में किन्नर को बुलाया जाता है , या वह स्वयं खबर पाकर आ जाते है , उनसे हुआ। आशीर्वाद लिया जाना शुभ माना जाता है चाहे इसको रूढ़ि समझो या फिर कुरीति लेकिन सदियों से यह परंपरा आज भी बनी हुई है। मुख्यतः हिन्दू धर्म में किन्नरों का शुभ कार्य में आना अच्छा समझा जाता है। जब किसी बच्चे का जन्म होता है , शादी का कार्यक्रम होता है , किसी नए व्यवसाय का प्रारंभ होता है तो किन्नरों को शुभ मानकर उनके आगमन के बाद मुंह मांगी नेग या बधाई ही जाति है जिससे कोई भी किन्नर उनको आशीर्वाद देता है और जीवन में सुखी रहने का भी बोलता है। यदि वैसे बगैर किसी शुभ कार्य के उनको देखना भी बुरा समझता जाता है। यदि वह घर पर आ जाए तो उनको भगा दिया जाता है। समाज में तिरस्कार तो उनका सदियों से होता आया है। फिर भी वह जीवन के पथ पर चलते जा रहे हैं और अपने संघर्षमय जीवन को व्यतीत कर रहे है जैसा कि डॉ.

विष्णुकांत 'अशोक' की कविता में उनकी शारीरिक अक्षमता , समाज में इस समुदाय के लोगों का संबोधन , अपमान के हर पल को रेखांकित करते हुए शादी , गृह – प्रवेश आदि जैसे विभिन्न अवसरों पर स्वागत और फिर तिरस्कार एवं अपमान को दर्शाते है –

"यूँ तो वे हमारे समाज के अनचाहे अंग है
हर खुशी में शामिल वे हमारे संग – संग है ।
प्रकृति की अजीब विडंबना देखो
छोड़ दिया जिनको अपनों ने , समाज ने
हिजड़े नहीं हैं , स्वीकृत होकर भी , अस्वीकृत है
सभ्य समाज से आज भी बहिष्कृत है ,
लेकिन बिना उनके प्रदर्शन के सभी खुशी अधूरी है ।
शादी विवाह गृहप्रवेश पर जिनसे ही जमता रंग हैं
कोई और नहीं है वों दीखते तो हमी जैसे
किन्तु तृतीय लिंग है , फिर भी तृतीय लिंग हैं"[69]

किन्नर समुदाय का संघर्ष , जद्दोजहद , बाल्यावस्था से ही प्रारंभ हो जाता है । जब उनका नवजात के रूप में इस दुनिया में अवतरण होता है । पहले तो समाज से छुपाया जाता है । जिसमें माँ की ममता का मर्म प्राप्त होता है कि कोई भी माँ नहीं चाहती है कि उसका बच्चा कोई उठा ले या फिर किन्नर समाज ले जाए । लेकिन समाज में उनको तुच्छ दृष्टि से देखा जाता है । फिर

भी वह अपने बच्चे का ख्याल रखती है। परिवार से लड़ती है। पितृसत्तात्मक समाज से भी लड़ती है। इस प्रकार वह समाज में अपनी ममता और बच्चे को बचाने का प्रयत्न करती है। इस सन्दर्भ में कवयित्री पूनम प्रकाश ने अपनी कविता 'सांझा' में कहा है कि किन्नर के जीवन में दिन और रात का अंधेरा व्याप्त है। बचपन से लेकर अंतिम सांस तक की त्रासदियों को उकेरते हुए लिखती हैं –

"न दिन , न रात
बस दोनों के बीच
प्रकृति की असीम सुंदरता लिए
सबको खूब भाती , खूब मनमोहिनी... अनंत प्रश्नों से जूझता बचपन
माँ की ममता की जगह शर्मिंदगी .... जानते हो ?
अस्वीकृति से उपजी तड़प की अगन
अपनों से बिछड़ने की टीस
जौर वों सपनों की किरचों की चुभन ?
शरीर जब संपूर्णता से रिक्त
तो ह्रदय संवेदनाओं से क्यों रिक्त ?"[70]

बच्चों में एक निश्चित आयु के बाद शारीरिक बदलाव आना प्रारंभ हो जाते है। ठीक उसी प्रकार किन्नर बच्चों में भी आते हैं। दरअसल यह

बदलाव की अवस्था किशोरावस्था कहलाती है जिसमें शारीरिक भिन्न – भिन्न होना प्रारंभ हो जाती है। मादा बच्चे में स्त्रियों के गुण प्रागांण हो जाते है और उसका वक्ष उभरने लगता है तथा नर बच्चे में भी बदलाव देखने को मिलते हैं जिसमें उसके कंधे सौष्ठवशाली होने लगते हैं । शरीर में जबूती आना प्रारंभ हो जातीहै। फिर वह पुरुष बनने की ओर अग्रसर होता है। लेकिन किन्नर बच्चे में यह दोनों गुण समान प्रकार से होने लगते हैं और आवाज़ में भारी होने लगता है जिससे समाज उसकी चाल और आदतों से समझ जाता है कि उक्त व्यक्ति किन्नर है। इन्हीं परिप्रेक्ष्य सत्य शर्मा कीर्ति जी की कविता दृष्टव्य है जिसमें एक किन्नर की माँ और बच्चे के बीच संबंध को संवेदना के स्वर से प्रस्तुत करती है तो अर्धनारीश्वर कविता प्राचीन काल से लेकर आज तक एक ही इंसान में स्त्री और पुरुष की अवस्थिति तथा दोनों के मध्य एक स्वतंत्र व्यक्ति की तलाश करती हुई रूह की संवेदना प्रस्तुत करती है –

" कौन हूँ मैं
क्या अस्तित्व है मेरा
हूँ ईश्वर की भूल या
रहस्यमयी प्रकृति का प्रतिफल
है शब्दों , अर्थों रों परे एक वजूद मेरा

पूर्ण सा

सम्पूर्ण सा

क्योंकि अधूरे भावों का विस्तार नहीं है मुझमें"[71]

जैसा कि ज्ञातव्य है कि किन्नर – विमर्श लैंगिकता पर आधारित है। जिस विषय पर अनेक बुद्दिजीवी , साहित्यकार , पत्रकार , चित्रकार एवं कलाकार अपने – अपने माध्यम से किन्नरों के प्रश्नों को उठाने का कार्य भी लम्बे समय से कर रहे है। सभी बुद्धिजीवी वर्ग किन्नर समाज के प्रति नागरिकों की मानसिकता को बदलना चाहते है , जिससे इस वर्ग को समान अधिकार मिल सके। पूरे विश्व में अनेक संस्थाएँ लैंगिक विकलांगों के लिए कार्यरत है। जिससे इस बहिष्कृत समाज को बराबरी का अधिकार मिल सके तथा इनको भी अंततः इंसान समझा जाए और बुद्धिजीवियों के प्रयासों से बदलाव भी दृष्टिगत हो रहे है। भारत में ही उनको वोट का अधिकार मिल चुके है। सभी प्रकार के आवेदनों में भी उनके लिंग को मेंशन भी किया या रहा है जो इस समाज के लिए सुखद कदम साबित हो रहे है। भारत में किन्नरों की सबसे अधिक स्थिति केरल में ही है क्योंकि इस प्रदेश की शिक्षा का स्टार दूसरे राज्यों की तुलना में प्रथम है। यदि किन्नर समाज को बराबरी का स्थान देना है तो सबसे पहले समाज की मानसिकता बदलना अति अवश्यक है जो शिक्षा लेने के भी बाद आता है। क्योंकि शिक्षा प्राप्त

व्यक्ति भावुक और संवेदनशील होता है जो किसी भी व्यक्ति के ह्रदय के उदगार भली – भाँती समझता है जैसा कि किन्नर समाज के प्रति दो कवियों क्रमशः डॉ. शैलेश गुप्तवीर और चकुधर शुक्ल की लघु कविताएँ प्रस्तुत हैं –

" उन्हें भी है
समाज में
समानतापूर्वक
जीने का हक़ बेशक"72

कविताओं में किन्नर जीवन की अनेक कठिनाईयों , पीढ़ाओं , संघर्ष और अनेक आर्थिक जीवन को लेकर अनेक कवियों ने अपनी लेखनी के माध्यम से किन्नर समाज की बात करते है तो ऐसे रहस्योद्घाटन होते है l अनायास ही आँख से आँसू छलक जाते है और उनकी पीड़ा का एहसास होता है l जैसे प्रसिद्ध कवि जी.पी. वर्मा अपनी पुस्तक 'बंद गली से आगे' के प्रथम पेज में लिखते हैं –

" उनको
जो
फूलौँ से खिलते
घर उप वन में

बिखर जाते

पर

तंग गलियों के

सीलते कमरों में

आसमान छूने के

सतरंगी सपनों के

हौसले लिए.......”[73]

निष्कर्ष :

इस अध्याय के अंतर्गत वाग्मय की अनेक विधाओं में किन्नरों की स्थिति , उनका संघर्ष , उनकी जीवन लीला का काला सच है तथा भावुकता के सन्दर्भ में विस्तृत , तर्क संगत और रिफरेन्स के अनुसार इसका वर्णन किया गया है। जितने उपन्यास वर्तमान में हैं उनके सन्दर्भ , नाटक , आत्मकथा तथा कविताओं के माध्यम से भी किन्नर जीवन को व्याख्यायित किया गया है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना , डॉ. बलवंत साधू जाधव , अलका प्रकाशन , कानपुर , 1992 , पृ. 23

1. शिक्षाष्टक – चैतन्य महाप्रभु , आठवां शोल्क
2. घनानंद ग्रंथावली , आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र , नागरी प्रचारिणी सभा , सुजानहित ,कवित्त , पृ. 15
3. हिंदी उपन्यास साहित्य की विकास परंपरा , डॉ. पारुकांत देसाई , चिंतन प्रकाशन कानपुर , प्रथम संस्करण 2002
4. यमदीप , नीरजा माधव , सुनील साहित्य सदन , नई दिल्ली पृ.12
5. वही , पृ.22
6. वही, पृ.24
7. वही, पृ.246
8. मैं भी औरत हूँ , डॉ. अनुसूया त्यागी , परमेश्वरी प्रकाशन ,2008 पृ.16
9. तीसरी ताली , प्रदीप सौरभ , वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली , 2011 पृ.54
10. वही, पृ.80
11. वही, पृ.128
12. किन्नर कथा , महेंद्र भीष्म , सामयिक बुक्स , नई दिल्ली , पृ. 8
13. गुलाम मंडी , निर्मला भुराड़िया , सामायिक प्रकाशन , नई दिल्ली , पृ.7
14. मैं पायल , महेंद्र भीष्म , अमन प्रकाशन , कानपूर , पृ.59
15. वही, पृ.82
16. मैं पायल , महेंद्र भीष्म , अमन प्रकाशन , कानपूर , पृ.119

17. पोस्ट बॉक्स नंबर २०३ नाला सोपारा , चित्रा मुद्गल , सामयिक प्रकाशन , दिल्ली पृ. 11

18. वही, पृ.86

19. वही, पृ.112

20. वही,पृ.113

21. वही, पृ.113

22. वही, पृ.11

23. वही, पृ.11

24. वही, पृ.209

25. वही, पृ.85

26. वही, पृ.86

27. वही, पृ.193

28. ज़िन्दगी 50-50 , भगवंत अनमोल , राजपाल एंड संस , नई दिल्ली पृ.40-41

29. अस्तित्व , जिरिजा भारती , शब्दांगन प्रकाशन , बरेली पृ.8

30. वही पृ. 69

31. वही पृ.100

32. वही पृ.109

33. वही पृ.113

34. वही पृ.117

35. वही पृ.123

36. वही पृ.123

37. वही पृ.113

38. वही पृ.113

39. दरमियाना , सुभाष अखिल , अमन प्रकाशन , कानपूर पृ.14

40. वही पृ.13

41. वही , पृ.14

42. वही , पृ. 39

43. वही , पृ.52

44. वही , पृ.65

45. वही , पृ.92

46. वही , पृ.116

47. वही , पृ.116

48. वही , पृ.118

49. वही , पृ.121

50. अस्तित्व की तलाश में सिमरन , डॉ. मोनिका देवी , माया प्रकाशन कानपुर , पृ. 38

51. ध्रुवस्वामिनी , जयशंकर प्रसाद , राजकमल प्रकाशन 2008 , पृ.19-20

52. द वोइस ऑफ़ सबएलेम्स इन सेवन स्टेट्स अराउंड दि फायर – महेश दत्तानी : न्यू होरिज़ोन इन इंडियन इंग्लिश ड्रामा – बीना अग्रवाल , जयपुर बुक्स ,2008 , पृ.341

53. दृष्टव्य – दि हिन्दू – बंगलोर संस्करण , जनवरी -2004

54. हरारत , हरीश बी. शर्मा , पृ.7

55. वही , पृ. 8

56. हिंदी आत्मकथा , डॉ. सविता सिंह , वाणी प्रकाशन नई दिल्ली पृ.35

57. मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी , वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली , 2015 , पृ.26-27

58. वही , पृ.159

59. वही , पृ.30

60. वही , पृ.8

61. पुरुष मन में फँसा मेरा नारी मन , मनोबी बंध्योपाद्याय , राजपाल एंड संस , दिल्ली ,2018 , समर्पण से

62. वही , पृ.6

63. वही , पृ.78

64. वही , पृ.12

65. वही , पृ.15

66. वही , पृ.16

67. अस्तित्व और पहचान , सं. डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह अमन प्रकाशन कानपुर पृ.13

68. वही , पृ.15

69. वही , पृ.16,17

70. वही , पृ.20-24

71. वही , पृ. 31-32

72. बंद गली से आगे , जी.पी. वर्मा , विकास प्रकाशन कानपुर , पृ. 5

चतुर्थ अध्याय

इक्कीसवीं शती की कहानियों में किन्नर-विमर्श

चतुर्थ अध्याय

"इक्कीसवीं शती की कहानियों में किन्नर-विमर्श"

4.1. भारतीय समाज और भारत का नया समाजशास्त्र

भारत में समाजशास्त्र इस उत्सुकता और आशा के साथ क्रियान्वित किया गया था कि भारतीय समाज के बारे में वैज्ञानिक सामान्यीकरणों और निष्कर्षों के द्वारा राष्ट्र के नीति-नियोजन में महत्त्वपूर्ण दिशा-निर्देश प्रदान करेगा। इसका प्रारम्भिक लक्ष्य भारतीय दर्शन की मान्यताओं के आधार पर बौद्धिक परंपराओं का निर्माण करना था, विशेषकर इसके भौतिक पक्ष के संबंध में, इसके प्रारंभिक अध्येताओं जी. एस. घुर्ये, धुर्जटी प्रसाद मुखर्जी, राधाकमल मुखर्जी और आर. एन. सक्सेना. आदि ने भारतीय समाजशास्त्र के दर्शनशास्त्रीय सैद्धान्तिक अभिमुखीकरण की दिशा में गंभीर और सफल प्रयास किए। उन्होंने शास्त्रीय मान्यताओं के हित में पाश्चात्य समाजशास्त्र के अनुभावाश्रित स्वरूप को नकार दिया। उनकी मान्यता थी कि सामाजिक उदविकास का पाश्चात्य सिद्धांत भारतीय समाज के संदर्भ में अप्रासंगिक है। व्यापक रूप में उन्होंने कर्म, धर्म, पाप, पुण्य, माया, संसार, अर्थ और मोक्ष के सिद्धांतों के अस्तित्ववादी तत्त्वों को

स्वीकार किया। उनके अनुसार हिन्दू-दर्शन के यह आवश्यक तत्व जाति की संरचना जीवन के चार चरणों (आश्रम व्यवस्था), संयुक्त परिवार व्यवस्था और विवाह जैसी संस्थाओं से जुड़े हुए हैं और आपस में मिलकर यह भारतीय समाज की सांस्कृतिक सत्ता की वानिकी का निर्माण करते हैं। इन्होंने अनेक बार भारत में पाश्चात्य मानव विज्ञानिकों और समाजशस्त्रियों के शोध-अनुसंधानों की आलोचना की और उनके द्वारा भारतीय वास्तविकताओं को अपने अकादमिक लक्ष्यों की पूर्ति हेतु तोड़-मरोड़कर गलत विश्लेषण के रूप में प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति पर भी प्रश्न-चिन्ह लगाए, उन्होंने यह दावा किया कि पाश्चात्य शोधकर्मियों द्वारा भारत का ऐसा वैचारिक विश्लेषण यहां की सांस्कृतिक-हीनता और निर्भरता से जुड़ा हुआ था, डी. पी. मुखर्जी ने इस विचार को स्थापित किया कि चूँकि भारतीय सामाजिक व्यवस्था का मौलिक अधिकार संघ तथा समुदायवाद है, इसलिए भारतीय सामाजिक संरचना को व्यक्ति की पाश्चात्य अवधारणा के सहारे रूकने का कोई तुक और तात्पर्य ही नहीं है, धुर्ये ने जहां पाश्चात्य सामाजिक मानवशास्त्र द्वारा जनजाति और जाति में प्रस्तुत किए गए अंतर को नकारा तो नहीं, वही राधाकमल मुखर्जी ने प्रजातंत्र के परिप्रेक्ष्य में पाश्चात्य अवधारणाओं की आलोचना की। इन

प्रयासों के माध्यम से उनका उद्देश्य भारतीय समाजशास्त्र की एक सुदृढ़ स्वदेशी दार्शनिक परंपरा का निर्माण करना था तथा उनके स्वयं के शोधकार्य इसी दिशा में थे।

इस अवधि के दौरान, पचास के दशक में भारतीय शोध-सहायकों और शोधकर्ताओं के सहयोग से भारत में अनेक विदेशी मानवशास्त्री और समाजशास्त्री शोध के क्षेत्र में कार्यरत थे। उक्त समाजशस्त्रियों ने समय – समय पर "कन्ट्रीब्यूशन टू इंडियन सोशियोलॉजी " नामक पत्रिका और अन्य पत्रिकाओं में अपने पत्रों एवं लेखों के माध्यम से भारतीय शोधकर्ताओं की पद्धति और मंशा पर अपत्तियां दर्ज की, भारतीय समाजशास्त्रियों का वैचारिक और व्यवहारिक समर्थन प्राप्त था। एक अलोचनात्मक आलेख के द्वारा बैली ने स्पष्ट करने का प्रयास किया था कि भारतीय समाजशास्त्र के पितामहों की मंशा भारतीय समाजशास्त्र को हिन्दू-मूल व्यवस्था से जोड़ने की है न कि इसका व्यापक स्वदेशी आधार बनाने की । उन्होंने लिखा है कि - "भारतीय उपमहाद्वीप में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए भारतीय समाज से तात्पर्य विचारों और मूल्यों (व्यवहार को यदि छोड़ दिया जाए) से है, इसमें मुझे कोई संदेह नहीं है कि संपादकगण हिन्दूवाद, बुद्धवाद, इस्लाम, ईसाइयत, उपयोगितावा मार्क्सवाद, समाजवाद और अन्य सारे

विचारों और मूल्यों में कुछ सामान्य आधार ढूँढ सकने में सक्षम है जो भारत में सामाजिक-व्यवहार के संदर्भ में प्रासंगिक है और इसके लिए गुत्थियों में एक क्रम ढूँढने के लिए कम प्रयास नहीं किए गए हैं। लेकिन वास्तव में वे सभी मूलतः मूल्यों की सिर्फ एक ही व्यवस्था से सम्बद्ध हैं और वह है हिन्दूवाद" ।[1] इसी प्रकार पाश्चात्य सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से हिन्दूवाद के मौलिक बिन्दुओं का ड्यूमा ने एक भिन्न विश्लेषण किया है। वे लिखते हैं कि वर्णों की श्रेणीगत संरचना भारतीय हिन्दू सामाजिक व्यवस्था में काफी महत्त्वपूर्ण और सुस्पष्ट हैं धर्म ब्राह्मण या पुजारियों से, अर्थ तथा शासकीय शक्ति क्षत्रियों से , काम अन्यों से संबद्ध है यही नहीं, इस संदर्भ में टालकट पार्संस के संरचनात्मक विश्लेषण के सहारे इस दिशा में और भी आगे जाया जा सकता है। उदाहरण के तौर पर प्रायः काम अन्य दो पुरूषार्थी का विरोधी प्रतीत होता है क्योंकि बौद्धिक और नैतिक-निर्धारण की प्रक्रिया में यह अपने विषयात्मक स्वरूप के कारण बाधा पहुँचाता है, साथ ही जहां धर्म नैतिक विश्ववाद का प्रतिनिधि है, वही अर्थ अहंवाद के रूप में जाना जाता है। कुछ-कुछ हमारे आर्थिक सिद्धांतों की तार्किक क्रियाओं की तरह-लेकिन कार्य का विस्तार राजनीति तक दिखता है, क्योंकि यहां सम्पत्ति शक्ति से थोड़ी श्रेष्ठ दिखाई देती है। जहां अर्थ काम

का विरोधी प्रतीत होता है क्योंकि दोनों ही अन्ततः परस्पर भिन्न प्रकार से संतुष्टि प्रदान करते हैं। वहीं विशेष लक्ष्य ये अंतिम लक्ष्य के संदर्भ में धर्म अपनी पवित्रता की संकल्पना के साथ दोनों का विरोधी दिखता है। पार्संस की भाषा में काम अभिव्यक्त किया है, अर्थ साधनात्मक क्रिया है और धर्म नैतिक क्रिया है। यह तिकड़ी क्रिया के प्रकारों का विशेष वर्गीकरण करती है जो परस्पर विरोधों की व्यवस्था पर आधारित है ।[2] इन पाश्चात्य समाजशास्त्रियों के मजबूत दृष्टिबिन्दु और तार्किकता पर आधारित विश्लेषण शैली ने आने वाली पीढ़ी के समाजशास्त्रियों को गहराई से प्रभावित किया विशेषकर बढ़ते अमेरिकी इम्पीरिकल शोध के संदर्भ में आग़ामी वर्षो में समाजशास्त्र का दर्शन भारतीय अभियुक्तीकरण अपने धरातल पर पहुँच गया और अन्ततः ए. के. सरन ही एक ऐसे समाजशास्त्री के रूप में बचे रहे जिन्होंने वेदांत आदि की मान्यताओं पर आधारित ज्ञान के समाजशास्त्र और सामान्यीकरण की प्रक्रिया को जारी रखा है।

एक महत्तवपूर्ण सामान्यीकरण के रूप में ड्यूमां द्वारा भारतीय सामाजिक व्यवस्था के किए गए विश्लेषण को नकारते है और दावा करते हैं कि ड्यूमां ने भारतीय सामाजिक व्यवस्था की मूल्य-व्यवस्थाओं पर आवश्यकताओं से अधिक गहरी दृष्टि डाली है। सामाजिक यथार्थ का कोई बाह्य पक्ष नहीं है और यदि कोई है तो वह एक पारस्परिक संस्कृति के रूप में इसका विश्लेषण है। फिर भी उनके लेख एकल अभिव्यक्ति का माध्यम

बने रहे। अगली पीढ़ी के समाजशास्त्रियों ने न सिर्फ 'पायबियर' समाजशास्त्रियों के दृष्टि-बिंदुओं की आलोचना की और उन्हें नकार दिया बल्कि उन्होंने पाश्चात्य-प्रारूप के साथ भारत में समाजशास्त्रीय शोध-अन्वेषण के क्षेत्र में आनुभाविक शोध की नींव डाली।

परिणामस्वरूप समाजशास्त्र का दर्शनशास्त्रीय अभिमुखीकरण उपेक्षित ही बना रहा जिसके लिए इसके पायनियर समाजशास्त्रियों ने गहन वैचारिक कार्य और प्रयास किए थे हालांकि इसमें भी कोई संदेह नहीं है कि स्वयं इन प्रारंभिक भारतीय समाजशास्त्रियों ने प्राचीन अभिलेखों के आधार पर भारतीय समाज का विश्लेषण करते हुए उन बिंदुओं की ईमानदारी से आलोचनाएं भी की जो विश्लेषण के क्रम में भारतीय सामाजिक यथार्थ और तार्किकता से मेल नहीं खाते थे। लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि वह प्रयास इस दिशा में प्रायः प्रथम और अंतिम प्रयास था। वे एक ऐसा समाजशास्त्रीय सिद्धांत निर्मित करना चाहते थे जिसकी जड़ें भारतीय सामाजिक विचारों पर आधारित हो। इस संदर्भ में यह कहना महत्तवपूर्ण होगा कि यह विद्वतजन पाश्चात्य वैज्ञानिक अन्वेषण के महत्त्व और उपयोग से अंजान नहीं थे जैसा कि बाटोमोर इंगित करते हैं - "कुमारास्वामी जैसे परंपरागत विचारकों में उनकी गहरी रूचि से तात्पर्य यह नहीं था कि वे रूढ़िवादी थे। वे भलि-भाँति पाश्चात्य समाजशास्त्र और

दर्शनशास्त्र, मार्क्सवाद, अस्तित्ववाद भाषिक दर्शनशास्त्र और विज्ञान के आधुनिक दर्शनों से परिचित हैं तथा वैचारिक दृष्टिकोण के इस ओर काफी सक्रिय भी हैं लेकिन उनकी समस्याओं पर आगामी पीढ़ी के समाजशास्त्रियों द्वारा और भी कार्य करने की आवश्यकता थी। परंतु ऐसा नहीं हुआ।"[3]

ऐसे अनेक बिन्दुओं पर भारतीय मनीषियों, समाजशास्त्रियों ने पाश्चात्य विद्वानों को उत्तर दिया जो तर्क संभव भी था। भारतीय विद्वानों ने भारतीय समाज उसके संस्कार, संस्कृति और बहुलतावादी देश होने का गौरव बचाए रखना, तथा विभिन्न विषयों पर अपनी दो टूक राय तर्कसंगत भी रखी जिसको अनेक समाजशास्त्रियों ने सराहा भी था कुछ विद्वानों ने अपने अलग मिलते-जुलते विचार भी प्रकट किए।

बदलते परिप्रेक्ष्य में दुनिया इलेक्ट्रानिक माध्यमों और सूचना-क्रांति के जरिए परस्पर गुंथ गई है। पश्च-पूँजीवाद ने आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को बाधित कर दिया था तथा साथ ही जब पश्चिम में महा-सिद्धांतों के बदले 'घटना विज्ञान' के माध्यम से एक उत्तर-आधुनिक परिप्रेक्ष्य उभर कर आया है। भारतीय समाज का प्रभाव भारतीय समाजशास्त्र पर भी पड़ा है। यह हमें नब्बे के दशक के बाद की अखिल भारतीय समाजशास्त्रीय

गोष्ठियों और बहसों में दृष्टिगत होता है। इनमें "घटना विज्ञान"के माध्यम से भारतीय यथार्थ को इसके इतिहास और संस्कृति के तत्वों और उसके पारस्परिक स्वरूप के सहारे नए दृष्टि से जानने-समझने का प्रयास किया जा रहा है। इसलिए फिर से दलित, लिंग, राष्ट्रवाद, संप्रदायवाद, धर्मनिरपेक्षवाद, पूँजीवाद, बाजारवाद सजातीयता, बहुलतावाद आदि जैसे सामाजिक-सांस्कृतिक, राजनैतिक , आर्थिक मुद्दे नए स्वरूप में उभरकर सामने आ रहे हैं। इन बहसों और गोष्ठियों के द्वारा, जो कि भारतीय साहित्य, मानव-विज्ञान तथा दर्शन आदि अनुशासनों के संयुक्त प्रभाव और तत्वाधान से उभर रहे हैं। वे अब पूर्व की भाँति पश्चिमी मान्यताओं पर प्रश्न-चिन्ह भी लगा रहे हैं। भारतीय समाजशास्त्रीय संदर्भ में जो बहस बेली, पीकाक आदि के साथ सरन ने चलाई थी। उसकी आवश्यकता एक बार पुनः इक्कीसवीं शताब्दी से नए यथार्थ के रूप में उभर कर आ रही है क्योंकि भारतीय परंपराओं को साहित्यबद्ध करना इतना सरल एवं सहज नहीं है। इसके परस्पर सहयोगी और पूरक भिन्नताएं इतनी जटिल है कि किसी एक अनुमानित, परिकल्पित और आयतित दृष्टि-प्रारूप से भारतीय समाज को समझना और इसकी परंपराओं को विश्लेषित करना इतना सरल एवं सहज नहीं है। भारतीय समाज की संस्कृति अनेक

परंपराओं और जीवन-विधियों का एक अद्भुत सम्मिश्रित सकुल है जिसमें नई सोच में यहाँ की भाषाओं, ग्रामीण-कृषक वातावरण, मिथकों की श्रृंखलाएं और प्राचीन परंपराओं तथा मौखिक वृतांतों को अनुभविक पद्धतिशास्त्र के स्थान पर अब लघु वृत्तांतों के माध्यम से व्याख्यात्मक समाजशास्त्र के द्वारा समझना ही अधिक उपयोगी और प्रासंगिक दृष्टिगत हो रहा है।

इस नए परिप्रेक्ष्य में भारतीय समाजशास्त्री भारतीय सभ्यता और संस्कृति की सत्यता और सुदृढ़ता के तत्वों को उभारने के प्रयास कर रहे हैं। ये तत्व आधुनिकता की प्रक्रिया के अंतर्गत परिचय की संदर्भ संस्कृति में प्रायः विलीन हो गए थे हालंकि आधुनिकता की प्रक्रिया खंडित हो गई है वहीं समेकित रूप से भारतीय व्यवस्था जो उत्पादन की विभिन्न पहेलियों के साथ हज़ारों वर्षों से चली आई है अब भी अपनी प्रासंगिकता को बनाए हुए हैं। टी. के. ओमन, दीपांकर गुप्ता, योगेन्द्र सिंह, श्यामचरण दूबे , आंद्रे बेतेर आदि के समाजशास्त्रीय चिंतन तथा ए. के. सरन आदि के निरंतर प्रयासों के द्वारा इक्कीसवीं शताब्दी में भारतीय समाजशास्त्र की हिन्दुस्तानी रूपरेखा को बनाने के सार्थक प्रयास किए गए हैं और भविष्य में किए जाएंगे। इस तरह से भारतीय समाजशास्त्र अपनी आयतित विषय-वस्तु को न सिर्फ त्याग रहा है बल्कि नई पद्धति के प्रयोग पर भी बल दे रहा है

जिसकी जड़ें दर्शन और साहित्य आदि में भी है और जिसकी उद्घोषणाएँ आख्यानों और मौलिक वृतांतों से भी जुड़ी है।

4.2. हिन्दी कहानी की विकास यात्रा, आंदोलन, रचनाकार एवं इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानी

कहानी का विकास तब ही हो गया था जब मानव की उत्पत्ति इस धरा पर हुई थी। बस उस समय उसके पास कहने, लिखने का माध्यम नहीं था। इस प्रकार न जाने कितनी कहानियां प्रकाश में ही नहीं आ पाई । मनुष्य की कहानी का विकास तब ही प्रारंभ हो जाता है जब उसके माता-पिता निषेचन की प्रक्रिया में होते हैं। गर्भ ठहर जाता है। परिवार के सदस्यों की इच्छाएं भी भिन्न-भिन्न होती हैं किसी को लड़का चाहिए है तो किसी को लड़की। इस क्रम में अनेक कहानियों का निर्माण होता है और लिंग को लेकर बहस प्रारंभ हो जाती है। कभी-कभी यह बहस अजीब रूप धारण कर लेती है। जब नवजात शिशु का लिंग निर्धारित न हो उसको समाज में 'थर्ड जेंडर', 'ट्रांसजेंडर', 'उभयलिंगी', 'तृतीय लिंगी', 'हिजड़ा' , 'किन्नर' जैसे अनेक नामों से पुकारा जाता है।

हिन्दी कहानी की विकास यात्रा में मानव सभ्यता के विकास की दुनिया ही बदल गयी थी।अग्नि व पहिए के अविष्कार के बाद भाषा का

अविष्कार निःसंदेह एक क्रांतिकारी घटना थी। इससे पूर्व मानव अपनी अनुभूतियों व विचारों को या तो संकेतों द्वारा व्यक्त करता होगा अथवा शिलापट पर चित्र उकेर कर। भाषा के रूप में उसे एक ऐसा सशक्त माध्यम उपलब्ध हो गया है जिससे न केवल वह अपने सुख-दुख, आशा-निराशा, आमोद-प्रमोद को एक-दूसरे से बाँटने में सक्षम हुई , अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करना भी अब अपेक्षाकृत सुगम हो गया। समाज की परिकल्पना भाषा के बिना अधूरी थी। इस प्रकार भाषा और बोली के द्वारा समाज अस्तित्व में आया।

प्रारंभ में मानव जब समूहों में निवास करता था तो वह एक-दूसरे के सामने बैठकर कहानियां सुनाता था और उसके मन में जो नए प्रश्न जन्म लेते थे जिसको वह उत्साहपूर्वक पूछता भी था। ऐसे ही नई-नई कहानियों का जन्म होता था तथा समाज के रूप को प्रदर्शित करके भविष्य के विषय में भी अपनी राय बताते थे जिनसे मानवता का विकास हो सके। यह माना जाता है कि साहित्य सृजन करने वाला लेखक अपने समय से दशकों भविष्य को देख लेता है और उसके आधार पर ही सृजन करता है और समय आने पर उस सृजित साहित्य की प्रासंगिकता भी दृष्टिगत होती है जिसको जागरूक पाठक, अध्येता और समीक्षक तुलना के माध्यम से मापते भी हैं।

भारत में ही सर्वप्रथम कहानी-लिखित परंपरा उत्पन्न हुई ऐसी मान्यता अधिकांश बुद्धिजीवियों की है। क्योंकि ऋग्वेद में कहानी के बीज मिलते हैं। जैसा कि विदित है कि ऋग्वेद को संसार का सबसे प्राचीनतम ग्रंथ होने का गौरव प्राप्त है। लिपिबद्ध कहानियों की यह परंपरा ऋग्वेद से प्रारंभ होकर वर्तमान तक चली आ रही है। इस प्रकार आधुनिक हिन्दी कहानी के श्री गणेश से पहले कहानी की एक विस्तृत परंपरा भारतवर्ष में विद्यमान है। यह परंपरा वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं के माध्यम से साहित्य से होती हुई हिन्दी कहानी के रूप में दृष्टिगत होती है। ऋग्वेद के संवाद सूक्त, उपनिषदों की रूपक कथाएं, रामायण की अन्तःकथाएं, महाभारत के उपाख्यान, जातक कथाएं, वृहत्कथा, वासवदत्ता दशकुमारचरित, कादम्बरी, वृहत्कथाश्लोक, कथासरितसागर, बैताल पंचविंशतिका, शुकसप्तति, सिंहासन द्वात्रिंशिका, पंचतंत्र, हितोपदेश, प्राकृत तथा अपभ्रंश में प्राप्त कथाकाव्य, हिन्दी के आदिकाल के चारण काव्य तथा मध्यकाल के प्रेमगाथा काव्यों, वैष्णव वात्र्ताओं और अंततः भारतेन्दुकालीन कथात्मक रचनाओं में हिन्दी कहानी के आविर्भाव से पूर्व कहानी का विकास क्रम देखा जा सकता है।

4.2.1 स्वतंत्रतापूर्व हिन्दी कहानी

आधुनिक हिन्दी कहानी का उद्भव बीसवीं शताब्दी के प्रथम वर्ष से ही माना जाता है। महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनके द्वारा संपादित पत्रिका 'सरस्वती' को इसका श्रेय जाता है। इससे पूर्व भारतेन्दु काल में जो कथात्मक गद्य साहित्य उपलब्ध होता है वह कलात्मक रूप से कहानी विधा में नहीं आता। हिन्दी कहानियों का प्रारंभ अधिकांश बुद्धिजीवियों और हिन्दी साहित्य इतिहास लेखकों ने एक स्वर से 'सरस्वती' के प्रकाशन से स्वीकार किया है। 'सरस्वती' के आरंभिक अंकों में प्रकाशित रचनाओं में हिन्दी कहानी स्वरूप रचना हो रही थी। 'सरस्वती' के माध्यम से अनेक प्रकार के प्रयोग हो रहे थे।

"इन प्रयोगों में शेक्सपीयर के नाटकों के इतिवृत्त के आधार पर वर्णनात्मक शैली में लिखी गई कहानियां, स्वप्न कल्पनाओं के रूप में रचित कहानियां, सुदूर देशों के कल्पनात्मक पात्रों को लेकर लिखी गई संवदेनात्मक कहानियाँ, कल्पनात्मक यात्रा की कहानियाँ, आत्मकथात्मक रूप में प्रस्तुत कहानियाँ, संस्कृत नाटकों की आख्यायिकाएं तथा घटना-प्रधान सामाजिक कहानियाँ प्रमुख हैं। [4] इस प्रकार हिन्दी कहानी को एक

नवीन विधा के रूप में स्थापित करने में 'सरस्वती' पत्रिका की भूमिका अहम रही है।

इस युग के प्रमुख कहानीकार मुंशी प्रेमचन्द, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, भुवनेश्वर, जयशंकर प्रसाद, भगवतीचरण वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, विष्णु प्रभाकर, द्विजेन्द्र तथा अमृतराय आदि ने कहानियों को उत्तरोतर नए-नए कलेवर में प्रस्तुत करके समाज का मनोरंजन करने के साथ-साथ पराधीनता के बारे में भी कहानियाँ सृजित की तथा अच्छे समाज के निर्माण में अहम् भूमिका का निर्वहन किया।

4.2.2 स्वतंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी

1947 में हिंदुस्तान स्वतंत्र हुआ। सदियों की पराधीनता के बाद भारतीय जनमानस एक नए उत्साह, उमंग और जोश से लबरेज था। और इस नए सवेरे को उल्लासपूर्ण दृष्टिकोण से देख रहा था। अब उसके सभी स्वप्न और अकांक्षाएं पूरी होने वाली है। इसके प्रति आश्वस्त भारतीय जनता नए जोश व नई स्फूर्ति से ओत-प्रोत थी। कमलेश्वर के शब्दों में -"देश का वैचारिक पुनर्जन्म हुआ। आज़ादी केवल राजनीतिक मूल्य के रूप में स्वीकृत नहीं हुई थी, बल्कि विचारों की एक नवक्रांति का सपना भी उससे जुड़ा

हुआ है”[5] इस प्रकार स्वतंत्र भारत में कहानीकारों की जो नई पीढ़ी तैयार हुई उसने हिन्दी कहानी के वस्तु, शिल्प और संचेतना में बेहद बदलाव किए। आज़ादी के बाद हिन्दी कहानी के क्षेत्र में जो उल्लेखनीय परिवर्तन हुए वे हिन्दी कहानियों के विविध आंदोलनों का प्रयास है। आज़ादी के बाद हिन्दी कहानी में कई आंदोलनों का सूत्रपात हुआ । 'नयी कहानी', 'सचेतन कहानी', 'अकहानी', 'सहज कहानी', सक्रिय कहानी', 'समानांतर कहानी' और 'जनवादी कहानी' के नाम से समय पर उठने वाले कहानी', 'समानांतर कहानी' और 'जनवादी कहानी' के नाम से समय पर उठने वाले लेखकों ने हिन्दी कहानी को नई समृद्धि, दृष्टि और कलात्मक ऊँचार्द भी दी है तथा संकीर्णताओं एवं स्वार्थों के कारण उसे हानि भी पहुँचाई है। विभिन्न कहानी आंदोलनों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है -.

4.2.2.1 नयी कहानी आंदोलन

आज़ादी से पहले हिन्दी कहानी में कोई कहानी-आंदोलन नहीं चला था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 'नयी कहानी' के रूप में एक ऐसा कहानी आंदोलन सामने में आया जिसने कहानी के पारम्परिक प्रतिमानों को दिया और अपने मूल्यांकन के लिए नई कसौटियां निर्धारित की। यह

स्वाभाविक भी था कि अब नए विचार, नए स्वप्न और नयी राहों का उदय हुआ था। परतंत्रता की पीड़ा से उभरी हिंदुस्तानी अवाम स्वतंत्रता के उल्लास में एक नए जोश व नए उत्साह से सराबोर थी। अब नई प्रकार की चुनौतियां थीं। स्वतंत्र भारत को प्रगाति के मार्ग पर अग्रसर करना व सदियों से गुलाम भारतीयों को हीन भावना से उबारकर एक नए आत्मविश्वास से ओत-प्रोत करना। परंतु इन सपनों और आकांक्षाओं की आयु बहुत कम थी। भारत-पाक विभाजन के कारण हिन्दु-मुस्लिम सांप्रदायिक उन्माद ने स्वतंत्रता की मिठास को कसैला बना दिया था। इंसानियत को सरेआम नग्न किया गया। मानवता का गला दबा दिया गया और नैतिक मूल्यों तथा आदर्शों को मृत्यु के घाट उतार दिया गया था। साम्प्रदायिकता का जो वह बहसीपन उन दिनों इन नवस्वतंत्र विभाजित देशों के मध्य सुलग रहा था उसने स्वतंत्रता के बाद की सारी प्रतीक्षा को नेस्तानाबूद कर दिया। ऐसे समय में रचनाकार जो स्वयं स्वतंत्रता की बाट जोह रहा था, गहरे तनाव व अवसाद से भर गया। डॉ. विष्णु का कथन है कि -"इसे अस्वीकार करना असंभव-सा है कि आज की कहानी की भूमिका में दो महायुद्ध एवं भारत विभाजन विभीषिका, विषमता तथा संत्रास है। एक सार्वत्रिक टूटन, निरूद्देश्यता, असंगति, मानवीय संबंधों की व्यर्थता, स्त्री-पुरूष -संबंधों की विद्रूपता आदि भी उसकी उपज है।"[6] इस आंदोलन

के मुख्य सृजनकर्ता राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश और कमलेश्वर थे। नयी कहानी आंदोलन का मुख्य आग्रह परिवेश की विश्वनीयता अनुमति की प्रामाणिकता और अभिव्यक्ति की ईमानदारी के प्रति था। यह आंदोलन कहानी को युग-सत्य से जोड़कर पाठक को समकालीन यथार्थ से सत्य रूप में परिचित कराने का ध्येय अवश्य बढा था। समय, काल और परिस्थितियाँ साहित्य को प्रभावित भी करती है और परिवर्तित भी। अब समय बदल चुका था। समयगत् परिवर्तन पर टिप्पणी करते हुए डॉ . कृष्ण कुमार का कथन है - "कहानियां नहीं बदली थीं, समय की मांग बदली थी और समय की मांग ने ही अपनी थाती में से नए चुनाव किए थे। कथा-साहित्य में इस बदलते हुए आग्रह को नज़रअंदाज नहीं किया जा सकता और यह बदलता हुआ आग्रह ही वह बिन्दु है जहाँ से हिन्दी कहानी एक नया मोड़ लेती है। यह एक नया मोड़ ही नयी कहानी के नाम से अभिहित किया गया।"[7] जाहिर है कि स्वतंत्रता मिल जाने पर भारतीय जनमानस में एक नयी चेतना, नया विश्वास और नयी आशा-अकांक्षा का संचार हुआ था जिसकी अभिव्यक्ति नयी कहानी आंदोलन की कहानियों में दृष्टिगोचर होती है। कहानी तथा कल्पना जैसी पत्रिकाओं ने नयी कहानी आंदोलन को विस्तार देने का कार्य किया।

इस आंदोलन के प्रमुख सृजनकर्ता भीष्म साहनी, अमरकांत, कमलेश्वर, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, शिवप्रसाद सिंह, रांगेय राघव, कृष्णा सोबती, मार्कण्डेय, फणीश्वरनाथ रेणु, धर्मवीर भारती, निर्मल वर्मा, मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा, रामकुमार और शेखर जोशी जैसे अनेक कहानीकारों ने अपनी कहानियां लिखीं ।

4.2.2.2 अकहानी आंदोलन

आज़ादी के बाद भारतीय जनमानस पर देश विभाजन का गहरा अघात पड़ा जिससे अनेक सपने, आकांक्षाएं दम तोड़ गयी थीं। सन् 1962 में एक ओर 'हिन्दी-चीनी, भाई-भाई' के नारे लगाए जा रहे थे तो दूसरी ओर भारत पर विश्वासघाती चीनी आक्रमण ने भारतीय अवाम में मोहभंग की स्थिति को अत्यंत भयावह बना दिया। अब तक भारत-पाक विभाजन के घाव व आंतरिक कलह के ज़ख्म भरे भी नहीं थे कि चीनी आक्रमण ने भारतीय जनता के मन-मस्तिष्क को झकझोर दिया। इस प्रकार अकहानी एक तरफ जहाँ तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक व आर्थिक विसंगतियों का परिणाम था तो दूसरी ओर नयी कहानी की जड़ता को तोड़ने का प्रयास था। ऐसे समय में हिन्दी कहानी जगत् में एक नवीन

कहानी आंदोलन 'अकहानी आंदोलन' सामने आया। यह आंदोलन तत्कालीन मूल्यों तथा कथाशिल्प दोनों को अस्वीकार का आंदोलन है। यह आंदोलन पेरिस के 'एंटी-स्टोरी' का अनुकरण है और इस आंदोलन पर अस्तित्ववादी चिंन्तक सार्त्र और कामू के विचारदर्शन का प्रभाव है।

अकहानी में संबंधों व मूल्यों के बिखराव को अभिव्यक्ति मिली है। अकहानी में संबंधों के टूटने का ऐसा पीड़ाबोध है जो इसे पूर्ववर्ती कहानी से अलग करता है। स्त्री-पुरूष संबंधों के परिवर्तित रूप को अभिव्यक्त करने के कौशल को डॉ. अशोक भाटिया इस आंदोलन की उपलब्धि भी मानते हैं और सीमा भी। उनका कथन द्रष्टव्य है - "इस आंदोलन की उपलब्धि यह रही है कि कामसंबंधों का इन्होंने वर्जनाहीन तथा सहज वर्णन करके हिन्दी कहानी में एक उपेक्षित पक्ष को समृद्ध किया। किन्तु उन्मुक्त काम संबंधों के नाम पर इन्होंने सभी मर्यादाओं और शालीनता की सीमाओं को तोड़ दिया। समलैंगिक संबंध, आप्राकृतिक मैथुन आदि का विस्तृत वर्णन इसका प्रमाण है।"[8] भारतीय जीवन-मूल्यों व परंपराओं का तिरस्कार अकहानी में मिलता है। अकहानी भारतीय पारिवारिक व सामाजिक व्यवस्था को भी अस्वीकार करती है। इस संदर्भ में जयेन्द्र त्रिवेदी का कथन है - "सभी प्रकार के मूल्यों को अस्वीकार करना अकहानी का प्रमुख उद्देश्य था। अकहानी का 'अ' मात्र उपसर्ग न रहकर एक जीवन मूल्य माना गया जिसका हेतु

पारिवारिक, सामाजिक, नैतिक और साहित्यिक मूल्यों का विघटन करना था।"[9] अकहानी में संवेदनाओं और भावुकता के लिए कोई स्थान नहीं है। 'अकहानी' स्त्री के सतीत्व में विश्वास नहीं करती तथा विवाह संस्था की पवित्रता के समक्ष भी प्रश्नचिन्ह लगाती है। दाम्पत्य जीवन में सतीत्व, पतिव्रता, धर्म तथा एकपत्नीत्व जैसे मूल्य यहाँ आकर बिखर गए हैं। प्रेम का परम्परागत अर्थ यहां शून्य हो गया है और स्त्री-पुरूष के बीच केवल शारीरिक संबंध मात्र रह गए हैं। अकहानी शिल्प, भाषा के स्तर पर भी सभी प्रकार के परंपरागत उपकरणों का निषेध करती है। शिल्प की दृष्टि से अकहानी फैंटेसी, डायरी आदि विधाओं के निकट प्रतीत होती है।

अकहानी आंदोलन के प्रमुख सृजनकार हैं - श्रीकांत वर्मा, रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, ज्ञानरंजन, विजयमोहन सिंह, दूधनाथ सिंह, प्रयाग शुक्ल, महेन्द्र भल्ला, सुधा अरोड़ा, काशीनाथ सिंह, रमेश बक्षी एवं गंगाप्रसाद विमल ।

इस आंदोलन का अनास्थावादी दृष्टिकोण व पाश्चात्य विचारकों (कामू, कापका, सार्त्र) के विचारों को आधार बनाकर सोची गई स्थितियों-परिस्थितियों पर आधारित कृत्रिम कथा-विधान सबसे बड़ी सीमा है।

अकहानी भारतीय समाज की उपज नहीं थी। इस प्रकार इस आंदोलन की सामाजिक स्वीकार्यता अधिक नहीं थी और यह अपने ही दायरों में सिमट कर रह गया।

4.2.2.3 सचेतन कहानी आंदोलन

सन् 1964 में डॉ. महीप सिंह ने 'आधार' पत्रिका का सचेतन कहानी विशेषांक निकालकर हिन्दी कहानी में एक नए आंदोलन का सूत्रपात किया जिसे 'सचेतन कहानी आंदोलन' का नाम दिया गया। इस आंदोलन की मुख्य विशेषता यह है कि इसने सचेत रूप से जीवन में सक्रियता, आशा, आस्था और संघर्ष का भाव संचारित करने पर बल दिया। नयी कहानी आंदोलन की प्रतिक्रिया में शुरू किया गया यह कहानी आंदोलन अनास्था, कुंठा, अवसाद और निराशा के वातावरण से निकलने की छटपटाहट और कुछ नयी आशाओं और उम्मीदों के साथ ज़िंदगी को अनुभूत करने पर बल देता है। डॉ. हेतु भारद्वाज इस संदर्भ में अपने विचार रखते हुए कहते हैं कि - "सचेतन कहानी उस स्वस्थ दृष्टि से सम्पन्न कहानी है, जो जीवन से नहीं जीवन की ओर भागती है। इसमें नैराश्य, आस्था और बौद्धिक तटस्थता का प्रत्याख्यान किया जाता है, और मृत्यु-भय, व्यर्थता एवं आत्मपराभूत चेतना का परिहार भी। सचेतन कहानी में आत्मढ़गता है और संघर्षेच्छा

भी। वह व्यक्ति और समाज को टूटती आस्थाओं के बीच नये मूल्यों के निर्माण का स्वर मुखरित करती है"।[10] उसके प्रर्वतकों ने नयी कहानी पर अनास्था, निष्क्रियता और जड़ता का आरोप लगाकर उसकी सामाजिक उपयोगिता पर सवाल उठाये। सचेतन कहानी न केवल नयी कहानी आंदोलन की व्यक्तिपरकता की विरोधी थी अपितु वह अकहानी आंदोलन की अनास्थावादी प्रवृत्तियों को भी नकारता है। सचेतन कहानी की वैचारिकता भारतीयता में थी। पश्चिम की भौंडी नकल से वह कोसो दूर है। डॉ. पुष्पपाल ने बखूबी इस संदर्भ में अपने विचार प्रकट करते हुए लिखा है - "इस कथा-आंदोलन ने कहानी को एक बौद्धिक दृष्टिकोण प्रदान कर यथार्थ की प्रस्तुति में प्रवृत्त किया अकहानीकारों के समान शिल्प को ही कहानी का सर्वस्व मानते हुए इन्होंने अस्तित्ववादी पाश्चात्य नारों के बल पर थोपी हुई दृष्टि को नकारकर जीवन की सच्चाईयों को पहचानने की ईमानदार कोशिश की।"[11] सचेतन कहानी में भी स्त्री-पुरूष संबंधों का चित्रण पर्याप्त मात्रा में हुआ। परंतु इधर के कहानीकारों का दृष्टिकोण अकहानी वाला नहीं था। यह कहानी न तो सेक्स की अंधी गलियों में भटकती है और न ही भय तथा कुंठा से ग्रस्त है। सचेतन कहानी आंदोलन मुख्यतः वैचारिक आंदोलन था। शिल्प के संदर्भ में किसी विशेष प्रकार का आग्रह-दुराग्रह इसमें नहीं है। सचेतन कहानी, नयी कहानी और अकहानी के समान शिल्प के बोझ तले न दबकर सहज अनुभवों को सहजता से

अभिव्यक्त करने पर बल देती है। सचेतन कहानीकारों का मानना है कि सफल कहानी वही है जिसका कथ्य और शिल्प दोनों ही स्तरों पर कहानी को कोई नवीनता प्रदान कर पाने में असमर्थ रहा और महीप सिंह व इनके कुछ साथी कहानीकारों के साथ ही सीमित रह गए, इस प्रकार यह आंदोलन समाप्त हो गया।

सचेतन कहानी आंदोलन को गति प्रदान करने वाले कहानीकारों में महीप सिंह के अतिरिक्त मनहर चैहान, कुलदीप बग्गा, नरेन्द्र कोहली, वेदराही, श्रवण कुमार, योगेश गुप्त, हेतु भारद्वाज, रामदरश मिश्र, जगदीश चतुर्वेदी, धर्मेन्द्र गुप्त, सुरेन्द्र अरोड़ा तथा हृदयेश आदि प्रमुख हैं।

4.2.2.4 सहज कहानी आंदोलन

1968 के आस-पास 'नयी कहानियां' पत्रिका का स्वामित्व अमृतराय ने खरीद लिया तथा उन्होंने अपने संपादन में इसे इलाहाबाद से निकालना शुरू किया। इस पत्रिका के संपादकीय 'सहज कहानी' शीर्षक के अंतर्गत छपते थे। इन संपादकियों के शीर्षक तथा अमृतराय के कहानी संबंधी विचारों से ही सहज कहानी आंदोलन का आरंभ माना जाता है। आडंबरों से मुक्त, बनावट से परे तथा ओढ़ी हुई ढोंगी वैचारिकता से स्वतंत्र कहानी ही सहज कहानी है। सहज कहानी के विषय में अमृतराय द्वारा

लिखे संपादकियों में सहज कहानी के लिए आवश्यक जिन गुणों का उल्लेख मिलता है उनमें अमृतराय कहानी में कथारस की अनिवार्यता पर बल देते हैं। सहज कथानक सहज शिल्प में अभिव्यक्त होना चाहिए और कहानी में सरसता, भावुकता व संवेदना का गुण होना चाहिए। अमृतराय स्पष्ट शब्दों में कहते हैं - ‘‘नयी कहानी की खोज में सहज कहानी खो गयी है।’’[12] वे कहानी में कहानीपन को महत्तवपूर्ण मानते हैं और नयी कहानी और अकहानी ने कथ्य और शिल्प के स्तर पर जो अतिरिक्त उत्तेजना व असंतोष दिखाया उसका वे विरोध भी करते हैं। सहज कहानी आंदोलन अमृतराय तथा उनके द्वारा ‘नयी कहानियां’ में लिखी गई टिप्पणियों तक ही सीमित रहा। उन्होंने सहज कहानी का शास्त्र तो प्रस्तुत किया पर उनके विचार केवल वैचारिक स्तर पर ही रह गए। अपनी कल्पना एवं दृष्टिकोण को धरातल देने में वे असमर्थ रहे। फलस्वरूप ‘नयी कहानियाँ’ पत्रिका के बंद होने के साथ-साथ यह आंदोलन का भी समाप्त हो गया। स्वयं अमृतराय के अलावा सुधा अरोड़ा ने भी इस आंदोलन का सर्मथन किया।

4.2.2.5 समानांतर कहानी आंदोलन

अक्टूबर 1974 के ‘सारिका’ पत्रिका के अंक से कमलेश्वर द्वारा सामानांतर कहानी विशेषांक की श्रृंखला के प्रकाशन से इस कहानी

आंदोलन का उदय माना जाता है। समानांतर कहानी का केन्द्रीय बिन्दु 'आम-आदमी' है। इस आंदोलन के प्रस्तोता कमलेश्वर का मानना है कि आम-आदमी के जीवन के अनेक पहलुओं को चाहे वह किसी भी रूप में हो हम अपनी कहानियों में निरूपित करते हैं और उसके साथ ही जीवन को इस प्रकार सड़ा देने वाली पूँजीवादी और साम्राज्यवादी ताकतों के खिलाफ निरंतर जूझते रहना कर्तव्य मानते हैं। इस प्रकार इस कहानी आंदोलन में आम आदमी के संघर्ष की अभिव्यक्ति है और हर स्थिति में वही नायक होता है। पूरी कहानी का प्लाट उसी के इर्द-गिर्द विचरण करता है तथा वह अपनी पूरी चेतना व ऊर्जा के साथ युगीन विसंगतियों के विरूद्ध डटकर मुकाबला करने को तत्पर दिखाई देता है। जिसको डॉ. भारद्वाज ने व्याख्यायित किया है - "समानांतर कहानी जीवन के स्पंदन के साथ चलने वाली रचनात्मक विधा है तथा वह अपनी पूरी रचनात्मक शक्ति के साथ आम आदमी के नायकत्व को स्थापित कर भ्रष्ट राजनीतिक और चतुर पूंजीवादी व्यवस्था से संघर्ष कर सामने आ गयी है।"[13] समानांतर कहानी सामंतवादी मूल्यों को अस्वीकार करते हुए नए मूल्यों की स्थापना के लिए संघर्षित रही। वह अपने केन्द्रीय पात्र 'आम-आदमी' को इतना सशक्त व सक्षम बना देती है कि वह दैत्याकार व्यवस्था से न केवल संघर्ष करने का साहस जुटा पाये अपितु निरंकुश व्यवस्था को अपने तीखे प्रहारों से छिन्न-

भिन्न भी कर पाये। "समानांतर कहानी तटस्थता और निरपेक्षता को पीछे छोड़ संबद्धता की बात करती है। वह मूल्यों को व्यवहार में लाये जाने के प्रति सजग है। उन्हें कार्यान्वित भी करना चाहती है। इस दृष्टि से आज का समय इतना भयावह है क्योंकि सामान्य व्यक्ति इतना असहाय है कि वह भ्रष्ट नैतिकता का खुलकर विरोध नहीं कर सकता। जब तक सामान्य जन में अनैतिकता को स्वीकार करने की शक्ति नहीं आती तब तक नए मूल्य स्थापित नहीं हो सकते। इस दिशा में समानांतर कहानी सक्रिय है।[14]

'सरिका पत्रिका के कमलेश्वर, दिनेश पालीवाल, आशीष सिन्हा, मधुकर सिंह, स्वदेश दीपक, अरूण मिश्र, जवाहर सिंह, सुरेश सेठ, बसंत कुमार आदि इस आंदोलन के महत्तवपूर्ण हस्ताक्षर हैं।

4.2.2.6 सक्रिय कहानी आंदोलन

पाश्चात्य शब्द 'एक्टिव स्टोरी' के अनुकरण पर राकेश वत्स द्वारा संपादित 'मंच' पत्रिका के मार्च 1978 अंक को 'सक्रिय कहानी विशेषांक' के रूप में निकाला गया है। इस विशेषांक के प्रकाशन से ही सक्रिय कहानी आंदोलन का जन्म माना जाता है। सक्रिय कहानी का सर्वाधिक बल सक्रियता पर है। यह सक्रियता पात्रों तथा विचारों दोनों स्तरों पर है। इस आंदोलन की कहानियां अपने पात्रों को शोषक-शोषितों के विरूद्ध खड़ा

होने का न केवल सामर्थ्य देती हैं अपितु उनके संघर्ष में सहयोग भी करती है। राकेश वत्स ने 'सक्रिय कहानी' की भूमिका में सक्रिय कहानी की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए लिखा है जिससे इस आंदोलन का सीधा-स्पष्ट ध्येय निरूपित होता है - "चेतनात्मक ऊर्जा और जीवंतता की कहानी, जो आदमी को बेबसी, निहत्थेपन और नपुंसकता से निजात दिलाकर स्वयं अपने अंदर की कमज़ोरियों के खिलाफ खड़ा होने के लिए तैयार करने की जिम्मेदारी अपने सिर लेती है।"[15]

इस आंदोलन के प्रमुख रचनाकार हैं - सुरेन्द्र सुकुमार, रमेश बत्तरा, विवक निझावन, कुमार संभव, राकेश वत्स, नवेन्द्र, धीरेन्द्र अस्थाना आदि।

4.2.2.7 जनवादी कहानी आंदोलन

सन् 1982 में दिल्ली में 'जनवादी लेखक संघ' की स्थापना के साथ ही हिन्दी कहानी में जनवादी कहानी आंदोलन का अविर्भाव हुआ। फरवरी 1982 को दिल्ली में जनवादी लेखक संघ का प्रथम राष्ट्रीय अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशन के पश्चात् (जनवादी कहानी पर कलम (कलकत्ता), कथन (दिल्ली), उत्तरगाथा (मथुरा-दिल्ली), उत्तरार्ध (मथुरा), कंक (रत्लाम) जैसी पत्रिकाओं में व्यापक रूप से चर्चा प्रारंभ हो गई। जनवादी कहानी

आंदोलन की वैचारिकता मार्क्सवादी विचारधारा पर आधारित है। इस कहानी आंदोलन में सामाजिक विसंगतियों के प्रति तीव्र आक्रोश है। श्रमजीवी वर्ग के प्रति सहानुभति, शोषक व पूंजीपति वर्ग के प्रति क्रोध व परंपरागत मूल्यों के प्रति अनास्था का भाव इस आंदोलन की प्रमुख प्रवृत्तियों में है। जनवादी कहानी खोखले आदर्शों में विश्वास नहीं रखती। वह जीवन के यथार्थ चित्रांकन पर बल देती है। सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया से सही प्रकार से जुड़ने व शोषण, अन्याय तथा उत्पीड़न के खिलाफ खड़ा होने के समक्ष प्रतिबद्ध यह कहानी आंदोलन समस्याओं को निचले स्तर से उठाकर उनके समाधान के लिए प्रयत्नशील है। श्रमिक और कृषक जनवादी कहानियों के केन्द्रीय पात्र हैं। जनवादी कहानी किसान, मजदूर के संघर्ष की कहानी है तथा वह इस संघर्ष को बहुत सूक्ष्मता के साथ उभारती है । जनवादी कहानी जीवन के यथार्थ के संदर्भ में सत्य की पराजय दिखाकर भी सत्य की ओर आकर्षित करने का कार्य करती है। इस प्रकार यह कहानी सामान्यजन के अधिकारों के प्रति आवाज़ उठाती है। जनवादी कहानी के पात्र दिशाहीन नहीं है और न ही परिस्थितियों से आहत ही दिखाई देते है। वे अपने मार्ग व लक्ष्य की ओर प्रशस्त प्रतीत होते हैं। अपने अधिकारों के प्रति सजग इस आंदोलन के पात्र अन्याय के विरूद्ध आक्रामकता व संघर्ष में विश्वास रखते हैं। जनवादी कहानी अपनी विचारधारा व सामाजिक दृष्टिकोण के स्तर पर प्रगतिशील आंदोलन व

प्रेमचन्द की परंपरा की वाहक प्रतीत होती है। जनवादी कहानी आंदोलन को गति प्रदान करने वाले कहानीकार हैं काशीनाथ सिंह, स्वयं प्रकाश, हेतु भारद्वाज, असग़र वजाहत, उदय प्रकाश, नमिता सिंह, शिवमूर्ति मार्कण्डेय, संजीव एवं रमेश उपाध्याय आदि।

4.2.3 इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानियां

बीसवीं सदी के प्रथम वर्ष में जन्मी हिन्दी कहानी एक पूरी सदी जिसमें भारतीय आज़ादी संग्राम, सदियों के संघर्ष के पश्चात् हिन्दुस्तान की खंडित स्वतंत्रता, भारत-पाक विभाजन की त्रासदी, स्वतंत्रता के बाद भारतीय जनमानस की आशाओं, आकांक्षाओं की बलि व पाकिस्तान-चीन के आक्रमणों की विभीषिका, पाश्चात्यीकरण के फलस्वरूप भारतीय पारिवारिक व सामाजिक ढांचे के विध्वंश आदि अनेक प्रकार के अनुभवों को स्वयं में समेटे इक्कीसवीं शती के प्रगतिशील वातावरण में प्रवेश करती है। यद्यपि इक्कीसवीं सदी की परिस्थितियाँ भी बीसवीं सदी की परिस्थितियों से अधिक भिन्न नहीं हैं। फिर भी सूचना, संसार व विज्ञान-तकनीक के विकास ने विचार और व्यवहार के स्तर पर अनेक परिवर्तन किए हैं। इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानी अत्याधुनिक तकनीकों से लैस कहानी है। कथ्य और शिल्प दोनों में ही आधुनिक शैलियों व विचारों का

प्रभाव इस कहानी पर दिखाई देता है। इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानी में अनेक वैचारिकताएं एक साथ चलती हैं जिनमें अंतर्विरोधों के होते हुए अंतर्सम्बध है। बीसवीं सदी के अंत में कुछ समय पूर्व हिन्दी कहानी जिन विषयों को लेकर गंभीर थी उनका सघन व विस्तृत स्वरूप इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानियों में दृष्टिगोचर होता है। बीसवीं शताब्दी में जो समस्याएं अपने भ्रूण रूप में भारतीय सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक परिवेश को विचलित किए हुए थीं उन्होंने इक्कीसवीं सदी में आधुनिक उपकरणों की मदद से अपनी योगदान में प्रगति कर अनेक नई चुनौतियों को जन्म दिया। इक्कीसवीं सदी के कहानीकार को भी उसी अनुपात में 'आउटपुट' होने की आवश्यकता थी और इन विसंगतियों की संघनता व स्वस्थ को हयान में रखते हुए अपने वैचारिक व शिल्पगत हथियारों को तैयार करना था।

इक्कीसवीं सदी के कहानीकार अपने समय व परिवेश से ज़मीनी स्तर से सम्बंधित हैं। वे किसी भी पूर्वाग्रह और दुराग्रह से मुक्त होकर समस्या के समाधान को ही अपना केंद्रीय लक्ष्य मानते हैं। जीवन के विविध वर्गीय -विषयों को ये कहानियाँ अपने विषय क्षेत्र में लेती हैं। कोई भी पक्ष उससे अछूता नहीं है। इस कहानी का पात्र किसान – मज़दूर – सर्वहारा से लेकर दलित -आदिवासी तक है अपितु शासक वर्ग, सामंतों ,

पूंजीपतियों , राजनेताओं व उद्योगपतियों की विवशताओं का भी उल्लेख करती है। यह कहानी किसी ढ़लावे में आने वाली कहानी नहीं है , यह किसी भी प्रकार के छद्म (झूठे) अथवा क्षेत्र से मुक्त है। इक्कीसवीं सदी की हिंदी कहानी पारिवारिक धरातल पर संयुक्त से एकल और फिर एकल है और सामाजिक स्तर पर जातिवादी , सम्प्रदायवादी और वर्णवादी संरचनाओं के विद्रूप को भी समझती है। राजनैतिक अपराधीकरण , प्रशासन की संवेदनहीनता , पुलिस का आतंक व सरकार की नपुंसकता को भी यह कहानी रेखांकित करती है तथा आर्थिक असंतुलन के फलस्वरूप उत्पन्न हुए मालिक – मज़दूर व आदती – विज्ञान आदि के संघर्षों को भी अभिव्यक्त करती है। सांस्कृतिक व नैतिक मूल्यों के पतन तथा धर्म के व्यवसायीकरण व राजनीतिकरण पर भी गहरे आघात इक्कीसवीं सदी की हिंदी कहानी में है।

इक्कीसवीं सदी की हिंदी कहानी में जो विमर्श मुख्यतः उभरकर आई है , तथा जिन्होंने कहानी को हथियार के रूप में इस्तेमाल किया है उनमें स्त्री – विमर्श , दलित – विमर्श तथा आदिवासी – विमर्श मुख्य है। दलित रचनाकार स्वानुभूति और सहानुभूति में अंतर करते हैं । वे सवर्ण लेखकों की दलित संदर्भों से जुड़ीं कहानियों को दलित लेखन में शामिल नहीं मानते

। यहाँ तक कि वह प्रेमचंद , निराला और नागार्जुन के साहित्य को भी दलित – विमर्श के अंतर्गत नहीं मानते। उनका मानना है कि उनके पास स्वानुभूति नहीं है क्योंकि वह नहीं जानते कि दलित का दर्द एवं उसका संघर्ष क्या होता है ? उसकी पीड़ाओं को समझने के लिए उस समय काल की स्वानुभूति अवश्य होनी चाहिए।

दलित – विमर्श पर इक्कीसवीं सदी में अनेक रचनाकार अनुभूति की प्रमाणिकता के साथ कहानी लेखन कर रहे है। जो न केवल अपनी पीड़ा का ही मार्मिक चित्रण करते हैं अपितु अपने समाज की कमजोरियों को रेखांकित कर उनमें उभरने के लिए भी प्रयत्नशील प्रतीत होते हैं । दलित रचनाकारों में ओमप्रकाश वाल्मीकि , मोहनदास नैमिशराय , श्यौराज सिंह बैचेन , सूरजपाल चौहान , विपिन बिहारी आदि के साथ – साथ सुशीला टाकभौरे व रजत रानी मीनू ' युद्धरत आम आदमी (रमणिका गुप्ता) , अपेक्षा (तेज – सिंह) , दलित – साहित्य (जयप्रकाश कर्दम) बयान (मोहनदास नैमिशराय) आदि पत्र – पत्रिकाएँ इस विमर्श को गति प्रदान कर रहे हैं।

यदि इक्कीसवीं सदी की कहानी के परिदृश्य की पृष्ठभूमि पर विचार करें तो बढता हुआ आतंकवाद , भूमंडलीकरण और बाज़ारवाद का

आक्रमण , उपभोक्ता संस्कृति का प्रसार , पाश्चात्य जीवन मूल्यों का आकर्षण , राजनीतिक दलों का भ्रष्टाचार , राजनीति का अपराधीकरण , साम्प्रदायिक दंगे , धार्मिक कट्टरता , मीडिया और जनसंचार माध्यमों का दुरुपयोग , दलित और नारियों पर अत्याचार , जातिवाद का आंतक , आर्थिक आवश्यकताओं की अनुपलब्धता आदि ऐसी स्थितियाँ हैं जो इक्कीसवीं सदी की हिंदी कहानी की प्लाट तैयार करती हैं । यह निसंकोच भाव से कहा जा सकता है कि इक्कीसवीं सदी की कहानी इन स्थितियों पर पूरे बल से प्रहार करने में सक्षम है ।

4.3. इक्कीसवीं सदी की कहानियों में किन्नर – विमर्श

साहित्य का ध्येय हमेशा वंचित एवं हाशिए के समाज की आवाज़ को मुखर रूप से उठाने का प्रयास है । क्योकिं साहित्य का दृष्टिकोण पूर्णतः मानवातावादी एवं मानव सभ्यता के विकास के लिए उत्तरोत्तर प्रतीत होता रहा है । इसी वंचित , पिछड़े , दबे – कुचले एवं हाशिए के उपेक्षाकृत समाज के लिए साहित्य ने एक विशिष्ट भूमिका का निर्वहन किया है ।

इक्कीसवीं सदी का नाम आते ही अनेक वैज्ञानिक आविष्कारों के नाम मस्तिष्क में कौधने लगते हैं उसी श्रेणी में साहित्य की भी पृथक पहचान प्रतीत होती है । विद्वानों का मत है 'इक्कीसवीं सदी' विमर्शों की

सदी है जिसमें लगभग बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में दलित – विमर्श , स्त्री – विमर्श या आदिवासी-विमर्श विषय में सारगर्भित चर्चा साहित्य जगत में हुई। इसके उपरान्त विमर्श का दायरा विस्तृत हुआ और इक्कीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में अनेक विमर्श साहित्य जगत में अपना स्थान बनाने में समर्थ रहें जिनमें दबे – कुचले , पीड़ितों का दर्द है जिनको मानव होते हुए भी इंसान नहीं समझा जाता है बल्कि हर प्रकार से उपेक्षित किया जाता है। जैसा कि धारणा है कि सभी मनुष्यों और इस ब्रह्माण्ड की रचना भगवान ने की है और सबका युग्म भी निर्धारित किया है जिसको हम लिंग कहते हैं। इस संसार में मुख्यतः दो लिंग का ही वर्णन होता है – स्त्री और पुरुष। आखिर क्या वजह है कि तृतीय लिंग जिसका वर्णन वेद - पुराणों में मिलता है उनको स्थान क्यों नहीं दिया गया है।

आस्तिक दृष्टि से धारणाएँ भिन्न – भिन्न हो सकती हैं। लेकिन वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाए तो इनके जनानांग अल्प विकसित होते हैं यह फिर होते ही नहीं है जिस कारण यह संभोग नहीं कर सकते है और जब संभोग नहीं कर सकते है तो संतानोत्पत्ति भी नहीं कर सकते हैं। इसलिए इनको समाज में उपेक्षित ही समझा जाता है और समाज भी इनको हेय समझकर छोड़ देता है। इस समाज का जीवन वास्तव में अनेक कठिनाईयों

से परिपूर्ण है। सामान्यतः मानव समाज को रोटी – कपड़े और मकान जैसे आधारभूत सुविधाओं की आवश्यकता होती है। लेकिन किन्नर समाज को मूलभूत समस्याओं के अतिरिक्त स्वयं के समाज से भी लड़ना पड़ता है जिसके कारण उनकी आधारभूत समस्याओं में बाधा उत्पन्न होती है।

वास्तव में साहित्य ने वंचित एवं हाशिए के समाज को स्वर दिया है। लेकिन बहिष्कृत किन्नर समाज पर साहित्य सृजन तो हुआ लेकिन अधिक चर्चा नहीं हुई जिसके कारण यह विमर्श अलग – थलग पड़ गया। स्त्री – विमर्श को स्त्रियों ने प्रमुखता से उठाया क्योंकिं वह आधी – आबादी के अधिकारों का विमर्श था यद्दपि इस विमर्श में पुरुष लेखकों ने भी सहानुभूति में साहित्य सृजन किया। यह लिंग आधारित विमर्श है। दलित – विमर्श जाति आधारित विमर्श है जो ऊँच – नीच पर ही स्थापित हुआ है और संविधान के अनुसार समानता के लिए प्रयत्नशील है। इस विमर्श में दलित – समाज के स्त्री – पुरुष सभी लेखकों ने अपनी सृजनशीलता का परिचय दिया है। इस विमर्श में भी सहानुभूति के आधार पर मानवता को सर्वोपरि समझते हुए लिखा है। किन्नर – विमर्श पर अधिक संख्या में उन्हीं रचनाकारों ने सृजन किया है जो जाति , धर्म,

नस्ल और लिंग से मुक्त थे और खाटी रूप से मानवता के प्रहरी थे जिसमें कलाकार , रंगकर्मी , पत्रकार तथा लेखक ही सम्मिलित हैं यद्दपि इन्होंने भी सहानुभूति में साहित्य का सृजन किया है लेकिन निष्पक्ष होकर इस किन्नर समाज के अनेक बिंदुओं को उद्घाटित करने का कार्य किया है। किन्नर – विमर्श को तब मान्यता अधिक मिली जब अनेक धर्मों , जातियों और वर्गों से आने वाले किन्नर समाज ने स्वयं अपनी पीड़ा , संत्रास और भावुकता का वर्णन साहित्य की अनेक विधओं के माध्यम से किया है । इक्कीसवीं सदी में अनेक रचनाकारों ने किन्नर – विमर्श को अपनी लेखनी का विषय बनाया और समाज में किन्नरों के प्रति जागरूकता फ़ैलाने का कार्य किया है और इंसानों जैसा व्यवहार करने के लिए समाज को उत्साहित भी किया है।

किन्नर विमर्श पर कहानी लेखन का कार्य एक लम्बे समय से चल रहा था। लेकिन उसकी चर्चा साहित्य जगत में गंभीरता से नहीं हुई बल्कि बहिष्कृत समाज की कहानी को भी उपेक्षित कर दिया गया। इसके पीछे एक धारणा प्रारंभ से बनी हुई है कि किन्नर अच्छे इंसान नहीं होते हैं और समाज में उनेक खिलाफ अनेक अप्रमाणित धारणाएँ रहती हैं जैसे बच्चे उठाकर वह बच्चों को किन्नर बनाते हैं , जबकि सत्य तो यह है कि कोई भी किन्नर बच्चा किशोरावस्था में अपना घर छोड़ देता है। क्योंकि उसको

समाज अपने जैसा नहीं समझता और न ही उस परिवार के सदस्य अपना समझते हैं।

किन्नर कोई अलग गृह से आए प्राणी नहीं है। बल्कि वह भी इसी समाज का भाग भाग है। और इसी समाज में रहते है , तथा उनका जीवन – जीने का संघर्ष स्त्री पुरुष से अधिक है।

हिंदी साहित्यकरों ने किन्नर – विमर्श की कहानियों को सृजित किया जैसे शिवप्रसाद सिंह की कहानी 'बिंदा महाराज' तथा राही मासूम रज़ा की कहानी 'खालिक अहमद बुआ' बहुत पहले ही लिखी गयी थी साहित्य में इन लैंगिक कहानियों की चर्चा नगण्य रही। वर्त्तमान समय में किन्नर – विमर्श पर अनेक कहानियों का सृजन हो रहा है जिसमें सुभाष अखिल , मेराज अहमद , महेंद्र भीष्म , सूरज बड़त्या , लवलेश दत्त , विजेंद्र प्रताप सिंह , एस . आर . हरनोट , कुसुम अंसल , किरण सिंह , कादंबरी मेहरा , डॉ. पद्मा शर्मा , अंजना वर्मा तथा गरिमा दुबे जैसे अनेक कहानीकारों ने बहिष्कृत वर्ग को साहित्य में स्थान दिलाने के लिए संघर्ष किया है। वर्तमान समय में किन्नर विमर्श पर कई आत्मकथाएँ एवं उपन्यास भी आ रहे हैं जिससे यह विमर्श अपनी सूझ – बूझ और रचनाकारों के अथक परिश्रम से फल फूल रहा है। इस विमर्श पर लेखन जब प्रारंभ हुआ उसके बाद कई

पुस्तकों में किन्नर कहानियों को संकलित किया गया तथा कई प्रतिष्ठित पत्र – पत्रिकाओं ने अपने विशेषांक भी प्रकाशित किए जैसे डॉ. एम. फ़िरोज़ खान की 'वांग्मय पत्रिका' , शगुफ्ता नियाज़ की 'अनुसंधान ' पत्रिका । इनको देश में ही नहीं विदेश में भी इस विमर्श का समर्थन मिला । साहित्यकारों ने भी इस बहिष्कृत एवं उपेक्षित वर्ग की तरफ देखा और साहित्य की रचना की ।

वर्त्तमान में किन्नर – विमर्श पर पांच कहानी संग्रह मिलते हैं जिसमें डॉ. फ़िरोज़ एम. खान का 'थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ' , 'हम भी इंसान हैं' तथा 'थर्ड जेंडर की कहानियाँ' सम्पादक विजेंद्र प्रताप सिंह , पुरोबी ए . भंडारी की किन्नर कहानी संकलित पुस्तक 'दास्तान – ए – किन्नर' अंत में मौलिक पुस्तक राकेश शंकर भारती का 'इस ज़िन्दगी के उस पार' नाम से साहित्य जगत में पाठकों एवं आलोचकों के बीच है ।

4.4. किन्नर समाज और हिंदी कहानियाँ

किन्नर एक ऐसा शब्द है जिस पर ही बुद्धिजीवियों , आलोचकों एवं साहित्यकारों में विवाद है । इस शब्द की सबकी अपनी – अपनी मान्यता है और भिन्न – भिन्न अर्थ जिसको वे समझाते भी हैं । यद्दपि समाज में यह

वर्ग प्राचीन काल से है तो देश – दुनिया में जितनी भाषाएँ होंगी उतने ही नाम से पृथक – पृथक क्षेत्र में पुकारा जाता होगा। इस विषय में विद्वानों में तर्क – वितर्क चल रहा है जिसका परिणाम अभी तक साहित्य जगत में नहीं आया है।

किसी शादी , पार्टी में बधाई लेने आने वाली टोली को 'किन्नर' कहा जाता है। किन्नर नाम सुनते या लिखते ही मस्तिष्क में उनकी बनावट , आकृति , चाल – चलन , आवाज़ , कपड़े , श्रृंगार तथा उनकी सामजिक स्थिति मस्तिष्क में अनवरत् ढंग से कौंधने लगती है जिसको एक कहानीकार , कथाकार या रचनाकार अलग प्रकार से कल्पना शक्ति के माध्यम से व्याख्यायित करता है। जिसको अकरम हुसैन और मनीष गुप्ता की संपादित पुस्तक 'थर्ड जेंडर कथा की हकीकत' की भूमिका में लिखा गया है - " एक आवाज़ जो पुरुष और स्त्री के बीच की हो , जिसकी आवाज़ से ही प्रतीत होने लगता है कि प्रस्तुत व्यक्ति कौन हो सकता है , उसके बाद जब वह साक्षात् सामने होता है तो मर्दों की पहचान छुपाने के लिए उसने शेव की होती है और औरत की पहचान बनाने के लिए उसके चेहरे पर क्रीम , पाउडर के साथ – साथ आई ब्रो सेट होते हैं। आँखों में काजल होता है तथा मसखारे से आखों को आकर्षित करने के लिए उसका प्रयोग

होता है। मोटे होठों को लाली से पीतकर वह सामने आ जाता है। जबकि इसके वस्त्रों का निर्धारण करें तो हम देखते हैं कि अपने वक्ष को कपड़े या दूसरी सामग्री से उभार लेता है। और ब्रा का प्रयोग करके कुर्ता सलवार पहन लेता है और ऊँची सैंडिल पहनकर बधाई लेने का कार्य करते है"[16]। किन्नर समाज का चित्रण जो उपर्युक्त पक्तियों में किया गया है वह एकदम सत्य प्रतीत होता है। किन्नर समाज परिवार और समाज से परित्यक्त अपने अधिकार और मनुष्य होने के लिए लड़ रहा है। वह न किसी धर्म की लड़ाई लड़ रहा है , न ही जाति की। वह तो केवल स्वयं को इंसान समझने के लिए संघर्षरत है। समाज का यह वर्ग जो स्त्री एवं पुरुष के मध्यबिंदु पर खड़ा है अपनी अपूर्णता के कारण समाज में हीन दृष्टि से देखा जाता है। अपनी अपूर्णता की पीड़ा को तिल – तिल सहते ये किन्नर कभी समाज में अपने हक़ के लिए तो कभी अपने वजूद की पूर्णता के लिए कभी निज से तो कभी समाज से लड़ते हुए पाए जाते हैं।

किन्नरों की दुनिया एक विशेष संसार है जो मनुष्य के रूप में जन्मते ही अभिशप्त जीवन जीने को शापित है। माता – पिता के संयोग से गर्भावस्था की अस्वस्थता के कारण किन्नरों के साथ होने वाला सामजिक

भेदभाव उनमें हीन – भावना व मानसिक शिकार का आभास करवाता है जिससे वह उग्र व्यवहार करने लगता है। किन्नर समाज की झोली में जन्म से ही असीम पीड़ा है जिसकी संवेदना से हमारा समाज कोसों दूर है , पर वास्तविकता यह है कि समाज के हाशिए पर जीवन – व्यतीत कर रहा किन्नर वर्ग समाज से अछूता नहीं है। 'वसुधैव – कुटुम्बकम्' का छल – छदम् करने वाले व अव्यवहारिकता के कारण बीमार सभ्य समाज की नींव ही विषमता रुपी विचार पर आश्रित है। जिस समाज में स्त्री – पुरुष रहते हैं उसी समाज में एक किन्नर वर्ग भी है, जो शुभ अवसर पर पारिवारिक अनुष्ठानों में आशीर्वादात्मक वचनों से सभ्य समाज को रसाप्लावित करता है।

किन्नर समाज की पीड़ा माता – पिता के संभोग के नौ महीने के बाद जब वह नवजात इस घर पर कदम रखता है तब से प्रारंभ हो जाती है जिसको प्रारंभ में अपने लिंग को लेकर तथाकथित सभ्य समाज की उलाहना तथा उस नवजात बच्चे की माँ को भी अनेक तंज़ों को सहना पड़ता है। फिर भी वह माँ उस बच्चे का पालन – पोषण करना चाहती है। उसको नया जीवन देने का प्रयास करती है। कभी – कभी प्रारंभ से लिंग की पहचान को लेकर परिवार शांत रहता है और किशोरावस्था में जब उसकी

शारीरिक संरचना बदलती है उसकी आवाज़ में ही अजीब परिवर्तन देखने को मिलता है तो वह तथाकथित समाज की उलाहना के कारण अपने परिवार को छोड़ने के लिए विवश हो जाता है। इस स्थिति में उसको लैंगिक वेदना तो थी ही भावनात्मक पीड़ा भी प्रारंभ हो जाती है। चौदह वर्ष तक परिवार में रहने के बाद जब वह किसी टोली में संयोगवश मिलता भी है तब भी अपने जैविक परिवार के सदस्यों में सबसे अधिक माँ का ही स्मरण करता है। उस किशोर किन्नर का दूसरा जीवन शुरू हो जाता है। उनके साथ समय व्यतीत करता है। धीरे – धीरे उस परिवार से स्वयं को भावनात्मक तौर पर जोड़ लेता है। जो उसकी मज़बूरी भी होती है क्योंकि जैविक परिवार और तथाकथित सभ्य समाज के कारण परिवार तो पहले ही छोड़ चुका है। किन्नर समाज के नियम – क़ानून को उस परिवार का मुखिया अर्थात् 'गुरु माँ' उसको समझाती है और बधाई लाने के लिए भी कहती है जिसमें उसे डांस , ताली बजाना , एक अलग भाषा में बात करना तथा बधाई न मिलने पर हंगामा खड़ा करना आदि कायदे – क़ानून सिखाये जाते हैं। कहीं – कहीं यह भी पढ़ने को यह है कि यदि कोई किन्नर बधाई न लेने की बात करें और वह पढ़ना चाहे तो उसको पढ़ाया – लिखाया भी

जाता है I कुछ किन्नरों ने स्वयं की आप बीती भी सुनाई है जिसका वर्णन हमें किन्नर की आलोचनात्मक पुस्तकों में मिलता है I

किन्नर समुदाय के संघर्ष में मुख्य भूमिका निभाने वाली किन्नर लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी ने आई.ए.एम.एस. को बताया - "दोष आखों का नहीं , नज़रिए का है I लोगों का नज़रिया बदलने की ज़रुरत है I जिस दिन यह बदला सभी परेशानियाँ ख़त्म हो जाएगी I"[17] लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी तथाकथित सभ्य समाज को बताने का प्रयत्न करती है कि जिस प्रकार आपको माता – पिता ने संभोग द्वारा पैदा किया है ठीक उसी प्रकार हमको भी किया है I बस हमारी निषेचन किया में हार्मोनल डिसऑर्डर हो गया है हमारे जननांग पूर्णतया विकसित नहीं है I बाकी शरीर , आत्मा , सोच – समझ एक स्त्री – पुरुष के ही समान है इसलिए दृष्टिकोण बदलो हम सब समान है और यह धरती भी हमें भी आपके बराबर हवा , पानी , सूरज , सर्दी एवं गर्मी देती है I 'किन्नर लोक का सच में अनु कहती है कि " किसी को स्वास्थ्यगत समस्या होने पर डॉक्टर के पास जाते हैं , तो डॉक्टर हमें छूता भी नहीं है I हमारे देश में बाल रोग , स्त्री रोग , नाक , कान , गला

रोग विशेषज्ञ हैं। लेकिन हमारे देश में किन्नरों के रोगों को देखने के लिए विशेषज्ञ तैयार नहीं हैं"[18]।

किन्नर समुदाय को अनेक पीड़ाओं का सामना करना पड़ता है यह तो विदित हो चुका है। समाज में डॉक्टर को धरती का भगवान कहा जाता है। उसका इस प्रकार का व्यवहार समझ से परे है। हर व्यक्ति डॉक्टर का बहुत मान – सम्मान करता है क्योंकि वह किसी भी बीमार व्यक्ति को नया जीवन प्रदान करता है।

किन्नर समाज हर प्रकार से पिछड़ा हुआ है कि , वह शादी , पार्टी, जन्मदिन एवं तीज – त्योहार में बधाई लेकर अपना जीवन यापन करता है। बड़ी मुश्किल से उसको दो जून की रोटी मिलती है। जिसके लिए उसको दर – दर ठोकरे खानी पड़ती है। किन्नर प्रेमलता ने कहा है – " किन्नर आर्थिक और सामाजिक रूप से पिछड़े हैं। इसलिए इन्हें समाज में हर स्तर पर आरक्षण देना चाहिए। केरल जैसे देशों में किन्नरों को ओ.बी.सी. के अंतर्गत रखने के लिए सिफारिश की है। स्कूलों , कालेजों में किन्नरों की शिक्षा – दीक्षा से लेकर नौकरियों तक में आरक्षण की ज़रुरत है

।"[19] किन्नर समुदाय को इस आरक्षण की आवश्यकता है। तथा इसके साथ-साथ अपने नज़रिये को भी बदलना होगा। किन्नर समाज को शिक्षा की ओर प्रोत्साहित करना होगा। इससे ही उनका विकास संभव है।

भारतवर्ष में लगभग पचास लाख की इस आबादी के नारकीय जीवन को व्यवस्थित करने के लिए विशेष प्रयास नहीं किए गये हैं । यह समस्या मुख्य रूप से दक्षिण एशिया में प्रचलित है। यूरोप व अन्य देशों में इस प्रकार के दिव्यांग व्यक्ति सामान्य जीवन व्यतीत करत है और किसी बच्चे को गोद लेकर अपनी वंशावली भी चलात है। यह एक प्रकार की दिव्यांगता है जो शारीरिक के साथ – साथ मानसिक भी है। कुछ पुरुषों की मानसिक स्थिति स्त्रियों जैसी होती है। वे मनोवैज्ञानिक तौर पर स्वयं को आतंरिक रूप से महिला मानते हैं। " पाश्चात्य देशों में ऐसे पुरुष शल्य क्रिया , स्टेरायड व हॉर्मोन के द्वारा विकृत नर (शीमेल) बनते है"[20] । भारतीय समाज पितृसत्तामक है और यहाँ पर भी कानूनी तौर पर सबको समान अधिकार है लेकिन व्यावहारिता में बिलकुल समान प्रतीत नहीं होते हैं । भारत में स्त्रियों को ही समानता का अधिकार नहीं है । उनको पितृसत्तामक समाज होने के कारण अनेक प्रकार की कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। इसी कारण भारत में स्त्री – विमर्श का उदय हुआ था ,

देश की आधी आबादी आज भी समान अधिकारों को लेकर संघर्षरत है। जब लैंगिक तौर पर महिलओं को अधिकार नहीं है तो किन्नर को अधिकार कैसे प्राप्त हो सकते है। क्योंकि किन्नर का तो कोई लिंग भी नहीं है। उनको समाज में अपमानित किया जाता है। हेय दृष्टि से देखा जाता है। किन्नर बच्चे को उसका परिवार ही सपोर्ट नहीं करता है तो समाज क्या करेगा। यह बहिष्कृत , उपेक्षित समाज केवल स्वयं को मानव , मनुष्य और इंसान मानने के लिए संघर्षरत है। इनके बारे में समाज में अनेक भ्रम फैलाए जाते हैं और मारा – पीटा भी जाता है। बेईज्जती की जाती है। यह घटनाएं सबसे अधिक मध्यवर्गीय समाज में होती है। जबकि अभिजात वर्ग और निर्धनों में किसी को किसी से कोई मतलब नहीं है। अभिजात वर्ग किन्नर को इंसान समझकर अपने साथ रखता है उसको समानता का अधिकार देता है। संपत्ति से हिस्सा देकर जीवन – यापन कराता है जबकि अति निर्धन में दो जून की रोटी के लिए संघर्ष है। आपसी बातें एवं खुराफाते करने का समय ही नहीं है। इन दो वर्गों में केवल इंसान को इंसान ही समझा जाता है। किन्नर को सबसे अधिक कठिनाई मध्यम वर्ग में होती है क्योंकि यह समाज पितृसत्तात्मकता की बेडियों में जकड़ा हुआ है। किसी

भी निर्णय में पुरुषों की बात को उच्च समझा जाता है तथा उनका ही आदेश चलता है । किन्नर – विमर्श के ऐसे अनेक मुद्दों को दृष्टिगत रखते हुए साहित्य जगत् के जागरूक लेखक साहित्य सृजन कर रहे हैं वहां पर किन्नर समाज की अनेक कठिनाईयों तथा संघर्ष को आधार बनाकर लिखा गया है । किन्नर – विमर्श पर लगभग पांच कहानी संग्रह संकलित एवं मौलिक आ चुके हैं जिनमें किन्नरों की भावुकता , संवेदना और उनके बाल्यावस्था से चलता असीम संघर्ष दृष्टिगत होता है । किन्नरों पर सबसे पहले हिंदी साहित्य के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर शिवप्रसाद सिंह , राही मासूम रज़ा जैसे शिल्पियों ने अपनी लेखनी का प्रदर्शन किया है तथा किन्नरों के साथ होने वाले अन्याय , हिंसा , संघर्ष , बाल्यावस्था , किशोरावस्था तथा युवावस्था को विश्लेषित करके समाज को मानवता का आईना दिखाने का प्रयत्न किया है । किन्नर समाज पर आधारित अब तक पाँच संग्रह मिलते हैं । प्रथम संकलित , सम्पादित कहानी संग्रह डॉ.एम. फ़िरोज़ खान का “थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियां” नामक संग्रह अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स कानपूर से 2018 में छपा है । इस कहानी संग्रह में केवल उन्नीस कहानियां जिसमें शिवप्रसाद सिंह की (बिंदा महाराज) , रही मासूम रज़ा (खालिक अहमद बुआ) , सलाम बिन रजाक (बीच के लोग) , एस.आर. हरनोट (किन्नर) , कुसुम अंसल (ई मुर्दन का गांव) , किरण सिंह (संझा) , कादंबरी मेहरा (हिजड़ा) , डॉ. पद्मा शर्मा (इज्जत के रहबर) , अंजना

वर्मा (कौन तार से बीनी चदरिया) , महेंद्र भीष्म (त्रासदी) , ललित शर्मा (रतियावन की चेली), डॉ. लवलेश दत्त (नेग) , गरिमा दुबे (पन्ना बा) , श्रीकृष्ण सैनी (हिजड़ा) , विजेंद्र प्रताप सिंह (संकल्प) , चांद दीपिका (खुश रहो क्लिनिक) , पूनम पाठक (किन्नर) , और पारस दासोत (ग़लती जो माफ़ी नहीं) ।

किन्नर कथा पर आधारित दूसरा कहानी संग्रह है “हम भी इंसान है” इसमें भी किन्नरों पर केन्द्रित कहानियां हैं । इसके सम्पादक डॉ. एम. फ़िरोज़ खान है । इस संग्रह का प्रकाशन “वांग्मय बुक्स अलीगढ से 2018 में प्रकाशित हुआ है । इस कहानी संग्रह में इक्कीस कहानियां हैं जिसमें पांच कहानियां अनुवादित है , सोलह मौलिक कहानियां हैं , - जो इस प्रकार है कि – कमल कुमार (कुकुज नैस्ट) , डॉ. सूरज बडत्या (कबीरन), सोमा भारती (गली आगे मुड़ती है) , उर्मिला शुक्ला (मैं फूलमती और हिजड़े) , डॉ.लवलेश दत्त (नवाब) , डॉ.विमलेश शर्मा (मन मरीचिका) , डॉ.मेराज अहमद (मैमूना , मोमिना और मैनू) , जवाहरलाल कौल ‘व्यग्र’ (ज्योति सूना नयन) , कैस जौनपुरी (एक किन्नर की लव स्टोरी) , बबिता भंडारी (समर से सुरमई) , लव कुमार ‘लव’ (अधेरे की परतें) , डॉ.रश्मि दीक्षित (नियति) , सफिया सिद्दीकी (अपना दर्द) , मीना पाठक (भूमिजा) , विनोद कुमार दवे (पद्मश्री ट्रांसजेंडर) एवं डॉ.ललित सिंह राजपुरोहित

(ट्रांसजेंडर) । किन्नर कहानियों पर केन्द्रित तीसरा कहानी संग्रह है पुरोबी ए.भंडारी का 'दास्तान – ए- किन्नर' जो 2018 में विकास प्रकाशन कानपुर से छपा है । इस कहानी संग्रह में भी कहानियां संकलित एवं सम्पादित की गयी है तथा दो भागों में विभाजित किया है । प्रथम भाग में कहानियाँ तथा दूसरे भाग में लघु कहानियाँ हैं जो इस प्रकार है – सुभाष अखिल (दरमियाना) , महेंद्र भीष्म (माई) , डॉ. सुमा टी.रोडनवर (ओ मेरी प्रिय सजनी चंपावती) , राकेश शंकर भारती (मेरी बेटी) , डॉ. लवलेश दत्त (तराज़ू) , डॉ. दिलीप मेहरा (दापा) , डॉ. ललित सिंह राजपुरोहित (निलोफर) , सत्य प्रकाश दुबे (वो किन्नर लड़की (कहानी 1,2,3) , अश्वनी कुमार आलोक (मोहब्बत वाले गाने) , डॉ. मृणालिका ओझा (एक मोड़ ये भी) , पार्वती कुमारी (रोहिणी) , दीपंकर पाठक (विकास का गर्भपात) , तपस्या चौहान (लूट) , माधव राठौड (रेड सर्किल) , वंदना पुणतांबेकर (जीवनार्थ साहस की आँधी) , डॉ, लता अग्रवाल (बुलबुल) , डॉ. नीलम रावत (अधिकार) , नीतू सिंह भदौरिया (इंसानी ज़मीन) , नमिता (होने न होने के बीच) , पूजा भगत (जन्मदिन) एवं डॉ. संगीता गाँधी (दुनिया जीत ली) ।

किन्नर कहानियों पर संपादित चौथा कहानी संग्रह 'थर्ड जेंडर की कहानियाँ' डॉ, विजेंद्र प्रताप सिंह एवं डॉ. रवि कुमार गौड द्वारा संकलित एवं संपादित है। यह संग्रह ए.बी.एस. पब्लिकेशन वाराणासी से 2020 में प्रकाशित हुआ इसमें तेईस कहानियाँ हैं। जो निम्नलिखित है एस.जी.एस. सिसोदिया (हिजड़ा गली) , रेखा लोढ़ा स्मित (सुगंध) , डॉ.विजेंद्र प्रताप सिंह (कर्तव्य) , डॉ. महेंद्र प्रताप सिंह (किन्नर का सम्मान) , रचना सिंह रश्मि (किन्नरों की प्रतिभा) , डॉ. रीता सिंह 'सर्जना' (क्या मेरा कुसूर है) , डॉ. भूपेन्द्र कुमार (मौन सिसकियाँ) , डॉ.अखिलेश निगम 'अखिल' (मेरा हक) , लता अग्रवाल (शकुन – अपशकुन के बीच) , डॉ.अरविंद कुमार (सोनम के चर्चे)डॉ. अरविंद कुमार (नया होटल) , डॉ. अरविंद कुमार (सुरेखा की ईमानदारी) , अंजलि गुप्ता (ताली की गूँज) , डॉ.मोहन तिवारी 'आनंद' (तीसरा वर्ग) , डॉ. रवि कुमार गोंड (आदर्श) , डॉ. अनीता पंडा (हिजड़ा कहीं का) , डॉ. अर्चना दुबे (किन्नर का आशीर्वाद) , शांति कुमार स्याल (किन्नरों की दुआ – बद्दुआ) , मुकेश कुमार ऋषि वर्मा (प्रेरणा) , लता अग्रवाल (बुलबुल) , मुकेश कुमार ऋषि वर्मा (भूल स्वीकार) , अजीत पाठक 'निकुंज' (विलास रानी) , नीतू सुदीप्ति नित्या (सुपात्र – कुपात्र) ।

किन्नर कहानियों पर केन्द्रित प्रथम मौलिक संग्रह है "इस ज़िन्दगी के उस पार" इसके रचनाकार है 'राकेश शंकर भारती' । यह कहानी संग्रह अमन प्रकाशन कानपुर से 2021 में द्धितीय संस्करण के रूप में प्रकाशित हुआ । इस संग्रह में किन्नर कहानियों के साथ – साथ समलैंगिक कहानियां भी हैं , जो प्रारंभ में किन्नर कहानियों जैसी ही लगती है लेकिन अंत में समलैंगिकता दृष्टिगोचर होती है । इस संग्रह की कहानियां निम्नलिखित हैं – मेरे बलम चले गए , मेरी बेटी , दया बाई , रक्तदान , रामवृक्ष दादा की याद में , सौतन , फ्रेंड रिक्वेस्ट , ट्रांसजेंडर , बधिया , तीन रंडियाँ एवं इस ज़िन्दगी के उस पार ।

ये किन्नर कहानियां इस समाज के विभिन्न पहलुओं को रेखांकित करती हैं जिससे पाठक एवं अध्येता को समाज में इनके स्थान का पता चलता है ।

4.5. किन्नर केन्द्रित कहानियों की समस्या एवं उनका विश्लेषण : -

किन्नर कहानियों पर केन्द्रित वर्तमान में पाँच कहानी संग्रह साहित्य जगत में है । जिनमें चार कहानी संग्रह संपादित एवं संकलित है तथा एक कहानी संग्रह मौलिक है । किन्नर समुदाय पर केंदित कहानियों के

सामान्य परिचय के अंतर्गत प्रत्येक कहानी संग्रह की हर एक कहानी का आलोचनात्मक विश्लेषण करेंगे।

4.5.1. किन्नर का असफल प्रेम

प्रेम वह भाव है जिसके अनुसार किसी चीज़ या व्यक्ति को उसके सौन्दर्य, गुण, शील, सामीप्य आदि के कारण देखने, पाने, भोगने या सुरक्षित करने की इच्छा है। प्रेम करनेवाला व्यक्ति यह चाहता है कि अपना प्रेमी हमेशा अपने पास रहे या साथ रहे। जब प्रेमी भौतिक रूप से साथ होने पर भी मानसिक रूप से पास नहीं होता है तब उस प्रेम को असफल प्रेम की संज्ञा दिया जा सकता है। प्रेम तब सफल होता है जब दोनों प्रेमी अपने मन से एक दूसरे को चाहता है और एक प्रेमी दूसरे प्रेमी की हर अनुभूति को अपनी अनुभूति समझने लगता है। सफल प्रेमी या प्रेमिका एक दूसरे का परवाह या ध्यान करता या करती है। प्रेम दिल से ही होता है। दिल में प्रेम की भावना जब समाप्त होती है तब प्रेम असफल होता है। प्रेम असफल होने का सबसे गहरा असर व्यक्ति की मानसिकता पर पड़ता है। असफलता व्यक्ति को मनोवैज्ञानिक तौर पर अपंग करती है। प्रेम में असफल व्यक्ति अपने आप से हारने लगता है। वह खुद को दूसरों से कमतर

आंकने लगता है। उनके गहरे सदमे,अकेलेपन का एहसास और किसी को खोने का एहसास आदि से उसके दिल की सेहत पर बुरा असर पड़ता है। आम तौर पर असफल प्रेम एकनिष्ठ होता है। अर्थात निस्वार्थ प्रेम जब एक ही व्यक्ति में रह जाता है तब वह प्रेम असफल होता है। कभी कभी प्रेमी-प्रेमिका में से एक के मन में केवल काम आसक्ति की भावना ही प्रमुख होती है। ऐसी अवस्था में प्रेमी-प्रेमिका की आसक्ति पूरी हो जाने से वहाँ कामसक्ति वाले के मन में प्रेम समाप्त होने लगता है। तब वह दूसरे पर किसी-न-किसी दोष ढूँढ़ने लगता है। बाद में एक दूसरे से मानसिक तौर पर दूर चला जाता है। इस तरह का असफल प्रेम पुरुष और स्त्री के बीच में ही नहीं बल्कि किन्नर और स्त्री-पुरुष या किन्नर–किन्नर के बीच में भी होता है।

डॉ. सतीश चन्द्र भारती ने अपनी पुस्तक ‘ किन्नर का यथार्थ’ में कहा है कि - “किन्नरों का प्रेम आम तौर पर असफल ही होता है चाहे वह किन्नर-किन्नर के बीच का प्रेम हो या किन्नर और मुख्य समाज के स्त्री-पुरुष के बीच का ही क्यों न हो।”[21] किन्नरों का प्रेम असफल होने का प्रमुख कारण सामाजिक अस्वीकार्यता ही है। किन्नर को समाज स्वीकारने के लिए तैयार

नहीं है। ऐसी स्थिति में किन्नर के प्रेम को भी सामाज स्वीकार्यता नहीं देता है। उसी प्रकार किन्नर और मुख्य समाज के स्त्री-पुरुष के बीच के प्रेम में किन्नर का प्रेम आम तौर पर निस्वार्थ होता है और स्त्री या पुरुष के मन में किन्नर के प्रति आसक्ति होती है। जब एक बार काम-वासना की पूर्ति हो जाती है तब दोनों के बीच मन-मुड़ाव शुरू हो जाता है। किन्नर के प्रत्येक कार्य में किसी-न-किसी दोषारोप करने में वह हमेशा तुले रहते है और उनसे रिश्ता तोड़ने का फैसला भी करता है।

इस तरह के किन्नरों के असफल दास्तान को अभिव्यक्त करने वाली कहानियों की रचना हिंदी में हुई है। शिव प्रसाद सिंह द्वारा रचित '**बिंदा महाराज'** किन्नरों की असफल प्रेम की अभिव्यक्ति करने वाली कहानी है।

यह दीपू मिसिर और बिंदा महाराज नामक किन्नर की प्रेम कहानी है। बिंदा महाराज भी दीपू मिसिर से अत्यधिक प्रेम करता है। दीपू मिसिर एक पत्नी से भी अधिक उनका ख्याल रखता है और उनकी छोटी – छोटी आवश्यकताओं का भी ध्यान रखता है। दीपू मिसिर जाति से ब्राह्मण है और बिंदा महाराज एक किन्नर है। बिंदा महाराज के बारे में कहानीकार कहता है :-" बिंदा महाराज का दुनिया में कोई रिश्ता नहीं , हो भी कैसे ,

न तो वह मर्द है और न औरत।"[22] बिंदा महाराज स्त्री होने की लालसा की पूर्ति करना चाहती है। इसलिए वह दीपू से बहुत प्यार करता है। उसके परिवार का ध्यान रखता है। उसके बच्चे की सेवा खुले ह्रदय से अपना बेटा समझकर करता है। लेकिन बिंदा महाराज का प्रेम,लगाव और आकर्षण कोई नहीं समझता है। इस लोभियों के समाज में बिंदा महाराज वास्तव में दीपू से निर्लोभ एवं बिना लालच के प्रेम करता है। उनका प्रेम सच्चा है. क्योंकि प्रेम में लोभ नहीं होता है बल्कि पूरे मन से समर्पण होता है। इसके विपरीत दीपू केवल उसको अपनी रखैल समझता है और उसके लिए केवल बिंदा एक मनोरंजन का साधन मात्र है। अपनी आसक्ति के कारण ही दीपू उससे आकर्षित होता है। इस संबंध में कहानीकार ने कहानी में यूँ बताया है :-" जरा – से आकर्षण से चित्त चंचल हो जाता। मनोरंजन को प्रेम समझा तो नशा छा गया। हाथ फैलकर बटोरना चाहा तो हथेलियां टकरा गयी। प्रेम शब्द उसके लिए केवल शब्द था निर्जीव शब्द , रूढ़ अर्थ"[23] इन पंक्तियों के माध्यम से यह अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि किन्नर के प्रति किन्नेतर व्यक्ति का प्रेम किस तरह का होता है। किन्नरेतर व्यक्ति से किन्नर अपने सब कुछ न्योछावर करके प्रेम करता है।

जब एक बार दीपू की आसक्ति पूरी हो जाती है तब बिंदा महाराज के हर कार्य उसके लिए बुरा लगने लगता है। इसका उल्लेख कहानी में यूँ मिलता है :- “बिंदा महाराज ने लड़के को छाती से चिपका लिया,मिसिर को यह सब अच्छा नहीं मालूम हुआ,पर कुछ बोले नहीं। अभी हाल में उनकी बहन मायके आयी थी। मुन्ना को हँसाने – बहलाने के लिए वह भी ऐसे ही मुंह बनाती , हाथ हिलाती , न जाने क्या साम्य मिला मुन्ना को , कि वह बिंदा महाराज को बुआ कह बैठा। इस विचित्र संबोधन से बिंदा महाराज का रेतीला मन अंकुरित होने लगा। वह बाहर जाता तो लड़के के लिए बतासे , रेवाड़ीयाँ , मिठाई , कुछ न कुछ ज़रूर लाता। मिसिर भुनभुनाते , लड़के को घूर – घूर कर कुछ न लेने का इशारा करते , किन्तु लड़का नहीं मानता और बिंदा महाराज का ममत्व इतना वेगवान होता कि मिसिर के इशारों का लंगर उखड जाता”[24]। मिसिर के बिंदा महाराज पर इस तरह के व्यवहार ने उसके मन को चोट पहुंचायी। फिर भी उस बच्चे का ध्यान रखने लगे। ज्ञातव्य है कि मिसिर समझते थे , जानते थे बिंदा महाराज को , कि वह किन्नर है। लेकिन नासमझ बच्चा जिसका मन सभी प्रकार की घृणा , द्वेष , ऊँच – नीच , लिंगभेद से पवित्र था वह नहीं जानता

था। वह तो केवल बिंदा महाराज की आत्मा से लगाव रखता था जिसको वाल्सल्य को बिंदा महाराज भी समझता था। उसके लिए अक्सर बाज़ार जाते तो कुछ मिठाईयां खरीद लाता उस बच्चे को खिलाता । वह लड़खड़ाते पैरों से बिंदा महाराज की तरफ कदम बढाता। लेकिन मिसिर उसको मना करते और बिंदा महाराज से दूर रखने के लिए नए – नए षडयंत्र करता। लेकिन बच्चा मन कभी – भी भेद नहीं करता और दूसरे के ममत्व के भाव को चंचल मन से जीता।

जब दीपू मिसिर के सारे षडयंत्र कारगर न हुए तो उसने बिंदा महाराज से संबंध समाप्त कर लिया। एक दिन अचानक उस बच्चे की तबीयत ख़राब हुई। बिंदा महाराज देखने पहुंचा तो उसने सुना :- “हिजड़ो के साथ का असर है भाई .... सीने जैसा लड़का सो गया”।[25] समाज में व्याप्त किन्नरों के प्रति हेय दृष्टि शकुन – अपशकुन का परिणाम था कि बच्चे की मौत का जिम्मेदार पल भर में बिंदा महाराज को बना दिया गया। इस प्रकार समाज का एक भद्दा चेहरा सामने आता है।

दूसरी तरफ बिंदा महाराज को एक दलित समाज का लड़का भी प्रेम करता था लेकिन बिंदा महाराज ने नीची जाति का होने की वजह से उसको

जाति के ही व्यक्ति ने उसके प्रेम ममत्व को मौत का जिम्मेदार बना दिया जैसा कि कहानी में विदित है। घुरविनया और बिंदा महाराज के संबंध का उल्लेख कहानी में यूँ मिलता है :-"घुरविनया का हाथ पकड़कर झोकते हुए चिल्लाया भाग बे हरामजादा। इसका दीदा न देखो। दुनिया – भर का रोंघट पोतकर देह में सटा आता है ; चमार सियार की जात हूँ, कैसा ज़माना आ गया"[26] बिंदा महाराज ने सवर्ण देखकर दीपू मिसिर से प्रेम भाव रखा था तो उसने षड्यंत्र करके अपने बच्चे की मौत का जिम्मेदार बना दिया। यदि एक दलित से प्रेम किया होता तो उम्मीद होती कि वह उसको समानता का भाव देता। इस प्रकार बिंदा महाराज का प्रेम सचमुच असफल ही रहा ।

'मोहब्बत वाले गाने' अश्विनी कुमार आलोक द्वारा लिखी गई कहानी छकउरी नाम के मर्द की है जो स्त्रियों की तरह गाता और न्रत्य करता था, तथा यह कहानी मीना नाम के किन्नर की भी है कहानी में छकउरी जो है वह अधिकारियों के घर उनकी पत्नियों की अनुपस्थिति में खाना बनाता है, तथा मीना एक किन्नर है जो छकउरी से बिना शर्त प्यार करता है। उसके ही बारे में सोचता है। छकउरी अच्छा डांसर भी है। जिसकी चर्च

कई स्थानों पर है – "मेरा नाच देख कर किसी को विश्वास नहीं होता था की मैं स्त्री नहीं मर्द हूं"[27]

राही मासूम रज़ा की '**खलीक अहमद बुआ**' एक और कहानी है। इसमें भी किन्नरों की असफल प्रेम की अभिव्यक्ति हुई है।

खलीक अहमद बुआ रूस्तम खां से प्यार करता है। उनकी सेवा करता है तथा उनसे अत्याधिक हमदर्दी रखता है। क्योंकि खलीक अहमद बुआ भावनात्मक एवं संवेदनात्मकता के साथ रूस्तम से जुड़े हुए हैं ,इसलिए वह रूस्तम खां को अपना पति मानता है। इसका उल्लेख यूँ मिलता है :- "वही एक कोठरी मिल गई और वह अपने 'पति' रूस्तम खां के साथ आराम से रहने लगे। पर्दानशील औरतें भी उन्हें खूब खींचती और लच्छेदार बातों पर हँसते –हँसते लोट – पोट हो जाती"[28]। खलीक अहमद बुआ की पहुंच हाजी बदरूल हक़ साहब के घर के अंदर तक हो गयी थी। खलीक अहमद बुआ वहीं पर रहकर जायकेदार खाना बनाते और अपने पति रूस्तम खां को भी खिलाते। हाजी जी ने उन दोनों को कोठरी दे दी है वही दोनों अपना गुज़ारा करते हैं ।

खलीक अहमद बुआ हाजी जी के घर के अंदर वाले भाग में बेरोक – टोक आते – जाते हैं । उनके घर की औरतों से खूब गप्पे भी लगाता है। उनसे सुख-दुख की खूब बातचीत भी करता है। खलीक अहमद बुआ जिसको वह अपना पति समझता है वह अब पुखराज के कोठे पर जाने लगा जिसके कारण खलीक अहमद बुआ क्रोधित हो गया। उसने कहा :-"ई का है भई ?" "ई खाना है कि कुत्ते का शतिब" इस पर खलीक अहमद बुआ बरस पड़ा । - "हम येके मारे दूनों बखत छी न चटाते कि साड़ी तेरी पुखर – जिया पर खरीच हो जाए। अरे बेवफा , ई भी नहीं सोचा कि रंडी आज तक के की भई है ...."[29] खलीक अहमद बुआ ने रूस्तम खां को खाना नहीं दिया और बहुत गुस्सा हो गया जिसके कारण रूस्तम ने उनका घर छोड़ दिया। लेकिन खलीक अहमद बुआ ने रूस्तम खां का पीछा नहीं छोड़ा और वह मरने – मारने पर उतारू हो गया और उस रात पुखराज के कोठे पर यह साबित हो गया कि सुहाग , सुहाग होता है – चाहे वह किसी किन्नर का ही क्यों न हो ! खलीक अहमद बुआ ने रूस्तम पर चाकू चलाया । चाकू वाला हाथ ऊपर – नीचे चलने लगा और उसने कहा :- "हम का अपनी जवानी तोरे पीछे व्येह मारे गंवाया है कि तू हमार कमाई का पईसा ई किराए की बच्चेदानी के गुल्लक में फेंको।"[30] इस घटना से यह साबित होता

है कि औरत या किन्नर जब किसी से प्रेम करता है तो अत्यधिक करता है जब घृणा करता है तो जान लेकर ही मारता है। कुछ ऐसा ही खलीक अहमद बुआ ने रूस्तम खां के साथ किया। रूस्तम खां अच्छे से खलीक अहमद बुआ के साथ रह रहे थे लेकिन उन्होंने जो कुकृत्य किया वह कोई भी सहन नहीं कर सकता। उन्होंने रूस्तम खां की जान ले ली और सरकारी तंत्र ने उनको फांसी की सज़ा दे दी । इस प्रकार दोनों प्रेम करने वालों का अंत हो गया और घटना आज भी समाज में चलती है। बच्चे कहते हैं कि खलीक अहमद बुआ मर गया। राकेश शंकर भारती की कहानी **'फ्रेंड रिक्वेस्ट'** कहानी में फेसबुक पर फ्रेंड रिक्वेस्ट से प्रेम का प्रारंभ होता है। कहानी का कथ्य एक ऐसी किन्नर पर आधारित है जिसका शरीर, हाव-भाव, आदतें, मानसिक स्थिति सब कुछ एक संपूर्ण औरत का है लेकिन अंदरूनी तौर पर उसके शरीर में बच्चेदानी नहीं है इसलिए वह किन्नर है। जिसका नाम जसप्रीत है। जसप्रीत को एक गबरू जवान पंजाबी हरविंदर से प्यार हो जाता है। कुछ समय बाद उनकी शादी हो जाती है। दोनों पति-पत्नी बच्चे की लालसा लिए लगभग आठ-नौ वर्ष साथ में ही जीवन व्यतीत करते हैं। एक बार हरविंदर जसप्रीत की डॉक्टरी कराता है जहां उसको सोनोग्राफी कराने के बाद पता चलता है कि जसप्रीत के अंदर बच्चेदानी नहीं है और वह कभी मां नहीं बन सकती है। हरविंदर की दिली इच्छा है

कि वह बच्चे का पिता बने लेकिन उसकी इच्छा की पूर्ति जसप्रीत नहीं कर सकती इसलिए वह घर छोड़कर भाग जाता है । अब जसप्रीत तन्हा हो गयी उसने बच्चों को पढ़ाने का कार्य प्रारंभ कर दिया। दिल्ली पब्लिक स्कूल में अध्यापक की नौकरी कर ली। जसप्रीत तन्हाई, एकांकी जीवन को व्यतीत करने के लिए सोशल मीडिया का सहारा लेने लगी। जहां उसने फेसबूक पर फर्जी एकाउंट बनाया और सजेशन में हरविंदर भी दिखा वहां दोबारा जसप्रीत और हरविंदर फेक (फर्जी) नाम से बात करने लगे। जब हरविंदर जसप्रीत से मिलने आया तो वह उसको पहचान नहीं पाया कि यह जसप्रीत ही है। जसप्रीत ने हरविंदर की असली आई. डी. मांगी तो जसप्रीत ने पहचान लिया। हरविंदर दो बच्चों के साथ था। जिस हरसिमरत कौर से हरविंदर ने शादी रचाई थी वह उसको छोड़कर कनाडा भाग गयी। अंततः एक वक्त के लिए बिछड़े और हरविंदर के बच्चों की लालसा पूर्ण हो गयी और वह पुनः जसप्रीत के साथ बच्चों संग रहने लगा। अब दोनों का साथ बच्चों के जीवन में आने से शानदार हो गया। इसका उल्लेख कहानी में यूँ मिलता है :- "अब जसप्रीत से नहीं रहा गया। उसने हरविंदर की आंखें पोंछकर उसे गले से लगा लिया। उसके बाद दोनों बच्चों के कोमल कपोल चूम लिए। अब चलो मेरे साथ। आज से तुम सभी मेरे साथ रहोगे। चलो हरविंदर, अब देर किस बात की? कुलविंदर और जसविंदर तुम्हारे बेटे हैं। अब वे दोनों मेरे बेटे भी हैं। मुझे खोये हुए बेटे मिल गये।"[31]

यहाँ हरविंदर ने जसप्रीत से सिर्फ अपनी इच्छा की पूर्ति के लिए प्रेम किया था। जब उनको मालूम हो गया कि जसप्रीत को बच्चादानी नहीं है तब वह उसको छोडकर चला जाता है। इसलिए जसप्रीत का प्रेम असफल हो जाता है। उसका प्रेम तो निस्वार्थ था। बाद में जब उन दोनों का पुन:मिलन हो जाता है तब वह फिर से उसको अपनाता है। लेकिन तब भी उसकी इच्छा है उपने बच्चों का देखभाल करने वालले किसी को प्राप्त करना।

विमलेश शर्मा द्वारा रचित '**मन-मरीचिका'** में सुलोचना मानव से बचपन से प्रेम करती है और उसके लिए कुछ भी करने को तत्पर है। लेकिन मानव स्वयं को पुरूष नहीं समझता और सुलोचना से दूर भागता है। जब मानव को पता चलता है कि वह किसी भी लिंग में नहीं है और पुरूष किन्नर के रूप में जीवन व्यतीत कर रहा है। अनेक कठिनाइयों को सहकर भी मानव ने आई. पी. एस. की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली थी। लेकिन वह लड़कियों की तरह श्रृंगार करता था। उनके ही तरह रहता था। अर्थात् उसकी जितनी भी आदतें और चाल-चलन थे वह लड़कियों जैसे ही थे। सुलोचना जब लखनऊ उससे मिलने आयी और उसने मानव की डायरी देखी तो वह हतप्रभ रह गयी। उसको पता चला कि मानव स्वयं को पुरूष किन्नर समझता है। सुलोचना एक वफादार और अच्छी दोस्त होने के नाते

अपना आकर्षण स्वार्थ समाप्त करके अब मानवता के लिए मानव की मदद करना चाहती थी। अंततः उसको मानव का भी समर्थन चाहिए था। इसका उल्लेख कहानी में यूँ मिलता है :- "उसने मानव का हाथ पकड़ा और उसे अपने पास बैठाकर कहा, "मैं तुम्हारी दोस्त हूँ ना, हम दोनों मिलकर सब ठीक कर देंगे। इस डायरी ने तुम्हारे सब दर्द मुझे सौंप दिए हैं, तुम अकेले कितना सहते रहे हो मानव। मानव यू नों नाउ ए डेज , एवरीथिंग इस पॉसिबल। सुनो ! बस , तुम्हें मेरी मदद करनी होगी, वादा करो।"[32] कहानीकार ने पात्र सुलोचना के माध्यम से मानव की पीड़ा को रेखांकित किया है कि किस प्रकार जीवन में सफल व्यक्ति लैंगिक तौर पर असफल नज़र आता है। लेकिन मित्र सुलोचना ने अपना स्वार्थ त्यागकर मानव के इलाज में लग गयी उसको दिल्ली के कई अनुभवी एक्सपर्ट को दिखाया। सोनोग्राफी हुई जिस कारण पता चल पाया कि मानव का अंदरूनी शरीर स्त्री का है और सर्जरी के माध्यम से प्लास्टिक की योनि बना दी जायेगी। जिससे मानव अपना जीवन स्त्री के रूप में व्यतीत कर सकेगा। अंततः कहा जा सकता है कि सुलोचना ने अपना स्वार्थ त्यागकर मानव को नया जीवन दिया , लिंग की पहचान दी और इंसान का दर्जा दिलाया। वास्तव में यही

सच्चा प्यार है जो सुलोचना ने एक इंसान से करके अपना दायित्व निभाया है।

यहाँ भी एक असफल प्रेम की अभिव्यक्ति हुई है। सुलोचना का प्रेम निस्वार्थ है। लेकिन मानव किन्नर है। इसलिए वह सुलोचना से दूर होना चाहता है। यहाँ तो प्रेम एक तरफा है। किन्नर मानव सुलोचना से प्यार करना नहीं चाहती। इस तरह एक असफल प्रेम की कथा इस कहानी में मिलती है।

राकेश शंकर भारती की **'मेरे बलम चले गए'** नामक कहानी में मध्यम वर्गीय परिवार में जन्म लेने वाली सुशीला किन्नर की प्रेम कहानी का वर्णन मिलता है। सुशीला से सभी प्रेम रचाना तो चाहते हैं –" वे उसका बदन नोचकर अपनी इच्छाओं को तृप्त करना चाहते हैं, लेकिन विवाह उससे कोई नहीं करना चाहता है"[33] । उसकी खूबसूरती से फिदा होकर सब उसके पास आकर चिपक जाते हैं । जब उन्हें पता चलता है कि सुशीला एक किन्नर है तब वे उसे किनारे कर लेते हैं । मज़ा तो उसके साथ सभी करना चाहते हैं और रिश्ते की बात जब आती है तब सभी मर्द एक एक करके उससे दूर चले जाते हैं। अर्थात जिंदगी में आनेवाले हरेक से वह प्रेम करना चाहती है । लेकिन किन्नर होने की वजह से उसका प्रेम

अधूरा और असफल हो जाता है । इसी असफलता और अधूरापन किन्नरों को देह व्यापार की ओर ले जाता है ।

4.5.2. शैक्षिक क्षेत्रों में किन्नरों का प्रयास

लैंगिक अपंगतावाले, सामाज से तिरस्कृत एवं बहिष्कृत किन्नरों के लिए शिक्षा ही एक मात्र साधन है जो उनको सम्मान से जीने का अधिकार दिला सकता है। उनको मानव होने का एहसास करा सकता है। शैक्षिक क्षेत्र में किन्नर बहुत तेज़ी से बढ़ रहे हैं। सरकार भी उनको रियायत दे रही है। किसी भी फॉर्म में अब तीनों जेंडर आते हैं । पहले केवल दो ही आते थे। समाज में भी उनको स्वीकार्यता मिल रही है। केवल वहीं किन्नर चमक रहे हैं जो पढ़े – लिखे हैं और अपने मानवीय अधिकारों को जानते हैं । वर्तमान में आये दिन किन्नरों को पढ़ने का अवसर मिल रहा है। इन वर्गों में प्रतिभा की कमी नहीं है , जज्बा भी बहुत है परंतु इन्हें अवसर नहीं मिलता है जिसके कारण ये लोग परेशान हैं। शैक्षिक संस्थानों पर पर भी उनका उपहास उड़ाया जाता है। इन्हें अपनी वासना का शिकार बनाने वाले वास्तव में उनके खिलाफ षड्यंत्र रचते हैं और विद्यालय में तो

प्रवेश तक करने ही नहीं दिया जाता है। यही कारण है कि 98% किन्नर निरक्षर हैं । अपनी पहचान छुपाकर कुछ किन्नर कभी कभार पढ़ाई कर भी लेते हैं पर उन्हें नौकरी नहीं मिलता है ।

2001 की जनगणना के अनुसार पूरे भारत में लगभग 4.9 लाख किन्नर है जिनमें से एक लाख सैतीस हज़ार तो केवल उत्तर प्रदेश में ही है। इसी जनगणना के मुताबिक सामान्य जनसंख्या में शिक्षित लोगों की संख्या 74 फीसदी है। यही संख्या किन्नरों में 46 % है। किसी भी स्कूल में उनके लिए दाखिला का कोई प्रावधान नहीं है। भारत का पहला किन्नर स्कूल कोचीन में खुला और एक स्कूल केरल के एरनाकुलम जिले में है इनका नाम सहज इंटरनेशनल है। इसका उद्घाटन किन्नर कार्यकर्ता , लेखक कल्कि सुब्रह्मण्यम ने किया।

किन्नर कहानियों में देखा जाए तो पता चलता है कि ये लोग पढ़ना चाहते हैं परंतु अक्सर अवसर और माहौल न मिलने के कारण ये पढ़ नहीं पाते हैं। हिंदी कहानियों में भी अनेक ऐसी कहानियाँ लिखी गयी हैं जो इस दृष्टि से प्रेरणादायक हैं और किन्नर पीढ़ियाँ भी उन कहानियों से सीखकर आगे बढ़ रही हैं।

सफिया सिद्दीकी की कहानी ' **अपना दर्द'** में एक किन्नर का बधाई का काम छोड़कर अपने हुनर से जीवन चलाने का वर्णन मिलता है। इस कहानी के माध्यम से उन्होंने किन्नर समाज के व्यक्ति को रोजगार से जोड़ने का प्रयत्न किया है। इससे उसका जीवन बदल जाता है और वह अपने समाज के लोगों का जीवन बदलना भी चाहता है। इसमें राजू पुरुष किन्नर है जो अनेक कारणवश किन्नरों की टोली में शामिल हो गया था । वह गुरु माँ से जिद्द करके श्रृंगार का कार्य सीखकर रोजगार से जुड़ जाता है। राजू की मेहनत,लगन,कार्य के प्रति निष्ठा के कारण उसको प्रसिद्धि मिल जाती है । इसलिए वह अपने समाज और अपने गुरु माँ पारो का धन्यवाद हमेशा ज्ञापित करता रहता है।

"राजू मौसी का मुँह देखने लगा तब कुछ समझ नहीं पाई मौसी ने अचानक उससे पूछा था उसे मौसी की उस दिन उसकी डांट याद आ गयी वह डर गयी। अगर मौसी ने उसे यहाँ से निकाल दिया तो वह कहा जायेगी तभी पारो बोली राजू तू मेकअप बहुत अच्छा करती है। सब का वनाब सिधार करके तेरा इज्जत का पैसा होगा"[34]

'क्या मेरा `कुसूर है ?' कहानी के रचनाकार रीता सिंह सर्जना हैं। इस कहानी में कथाकार ने एक अच्छी आदर्श शिक्षिका द्वारा कैसे बच्चों का

जीवन बदल जाता है उनका वर्णन किया है। क्योंकि इस कहानी का मुख्य पात्र श्यामली है जो किन्नर है जिसका जीवन एक शिक्षिका जीवन बदल देती है और समाज को संदेश देती है कि एक अच्छी शिक्षिका किसी भेदभाव के किसी के भी जीवन को बदल सकती है। एक दिन श्यामली ने अपनी पढ़ने की इच्छा के बारे में लेखिका को बताया कि – " मैं भी पढ़ना चाहती हूँ ।"[35] लेखिका ने यह सुनकर श्यामली से कहा कि तुम अब भी पढ़ सकती हो । पढ़ने की कोई उम्र नहीं होती , क्या तुम पढ़ना चाहोगी तो मैं तुम्हारी मदद करुँगी ।

'रामवृक्ष की दादा की याद में' नामक कहानी में मुरली का जन्म पुरुष शरीर में हुआ था । परंतु आत्मा और ह्लदय से पूर्णत: औरत है । वह पढ़ाई में रूचि रखनेवाला है । अपने पापा की इच्छा को पूरा करने के खातिर आई आई टी में दाखिला लिया । वहाँ मन लगाकर पढ़ाई की –" मुरली बचपन से ही विज्ञान और गणित में अच्छा था"[36] तो उसने अपने पिताजी का सपना पूरा करने के लिए आई दिल्ली में .टी.आई. में दाखिला लिया और वहाँ उनको नौकरी भी प्राप्त हुई ।

'सौतन' कहानी में जैकी की प्रतिभा किन्नर समाज का आईना है जो कि पहले यू.पी.एस.सी. परीक्षा की तैयारी करती है । जब यू.पी.एस.सी. में नौकरी नहीं मिलती तब वह असाम में लेक्चरर बन जाती है। जैकी अपने भविष्य को लेकर परेशान था। वह यही सोच रहा था कि यू.एस.पी.सी. के चक्कर में नहीं पड़ना चाहिए था। यह तो एक जुआ ही है। एक साल बीतने के बाद जैकी की लेक्चरर शिफ्ट की नौकरी असम की किसी यूनिवर्सिटी में लग गई।

'रक्तदान' कहानी में विमला स्कूल जाना चाहती है परंतु उसे स्कूल नहीं जाने दिया जाता है। गीताबाई नामक किन्नर ने उसे अपने बच्चे के समान पालती है उसे पढ़ाती है। विमला बी.ए. पास करने के बाद नौकरी करने लगती है। नौकरी के साथ – साथ एन.जी.ओ. में बाकी किन्नर बच्चों के उत्थान के लिए काम करती है। लेकिन समाज के प्रति बेरूखी देखकर विमला निराश हो जाती है। वह यह सोच कर दुखी हो जाती है कि अंग्रेजों ने उन्हें क्रिमिनल ट्राइब्स श्रेणी में डाला था और उनके सारे अधिकारों से इसलिए छीन ले गए थे क्योंकि वहाँ कोई उनके खिलाफ बगावत ना कर सके।

श्रीकृष्ण सैनी द्वारा रचित **'हिजड़ा'** में किन्नर द्वारा अनाथ बच्चे को शिक्षा दिलाने की कहानी कही गई है । किन्नर रज़िया ने सुनील की परवरिश का बीड़ा उठाया जिसका माँ- बाप की एक्सीडेंट में मृत्यु हो गई थी । बड़े होने के बाद उसका एडमिशन एक स्कूल में कराया गया । बाद में उसको एक हॉस्टल में रखवा दिया जिससे उसको यह पता न चले उसका कोई परिवार नहीं है और उसकी मानसिक स्थिति भी ठीक रहे। उसकी शिक्षा के बारे में कहानी में यूँ उल्लेख मिलता है -: हेडमास्टर साहिब का प्यारारत की मेहनत रंग लाने लगी थी और दुलार व सुनील की दिन में साड़ी परीक्षा में अच्छे अंक लेकर पास होता हुआ सुनील आज एक यूनिवर्सिटी में प्रथम आया था"।[37] रज़िया को जब खबर मिली कि सुनील विश्वविद्यालय में प्रथम आया है तो उसकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा वह हमेशा उसको एक कामयाब इंसान के रूप में देखना चाहती थी। सुनील की कड़ी मेहनत, लगन से वह जंगलात का ऑफिसर बन गया । इसका वर्णन यूँ मिलता है -:"जैसा कि सब को उम्मीद थी सुनील उस परीक्षा में आठवें स्थान पर आया। आज वह जंगलात महकमें में एक बड़े ओहदे पर लगा था।"[38] सुनील की इस सफलता के पीछे रज़िया किन्नर था। सुनील अपनी सहायता करने वाली रजिया के बारे में नहीं जानता था । सुनील हैडमास्टर साहब से अक्सर उसके बारे में पूछता और मास्टर साहब

टालमटोल करके बात को टाल देते क्योंकि अगर सुनील को अपने बीते हुए वक्त के बारे में पता चलेगा तो हो सकता है उसको ग्लानि महसूस हो और उसको अच्छा न लगे। सुनील बेहतर ईमानदार अफसर था जिसकी वजह से उसकी दुश्मनी शहर के अधिकतर माफियाओं से हो चुकी थी। सुनील के मातहत काम करने वाले चतुर्थ श्रेणी का कर्मचारी सदाराम के यहां वह विवाह निमंत्रण पर गया जहां हिजड़ो के आतंक और नेग की बात सुनकर उसको बड़ी तकलीफ हुई वह क्रोधित हो उठा। फिर कुछ नहीं बोला, दूसरी तरफ हैडमास्टर साहब के बेटे के विवाह में सुनील ने जमकर डांस किया। खूब जश्न मनाया गया। हेडमास्टर साहब ने सुनील को सबसे अपने बड़े बेटे के रूप में मिलवाया था। और सुनील उसी अंदाज़ में घर पर रहता था। हेडमास्टर साहब के घर पर जब विवाह का जश्न मनाया जा रहा था तो अचानक किन्नर आ धमके और डांस करना प्रारंभ कर दिया।

हेडमास्टर साहब भी खुशी में खूब न्यौछावर हो रहे थे। जब किन्नरों ने बधाई मांगना शुरू की तो गर्मागर्मी हो गयी। सुनील उन किन्नरों पर नाराज़ हो गया और उसने जोर से उसके गाल पर तमाचा जड़ दिया और तब सुनील को उसकी सच्चाई बताई गई-: "तुम हमेशा पूछा करते थे कि तुम्हारी फीस, वगैरह पर कौन खर्च कर रहा है....। अरे जान जाओगे तो यह अकड़ी हुई गर्दन ज़िन्दगी में फिर कभी नहीं उठेगी।

तुम्हें पालने वाली रज़िया थी जो खुद एक हिजड़ा थी"[39] जब सुनील को अपनी सच्चाई का पता चला तो वह खामोश हो गया और अपने किए कृत्य पर पछतावा करने लगा। फिर उसकी आंखें रज़िया को तलाशने लगीं । लेकिन रज़िया ऑफिसर बेटे के सामने जाना नहीं चाहती थी। अचानक जब सुनील की नज़र रज़िया पर पड़ी तो वह उसके कदमों से लिपट गया और पश्चाताप करने लगा। रज़िया से चिपटकर रोते इतने बड़े अफसर को पहली बार देखा था क्योंकि किसी को पता ही नहीं था कि सुनील रज़िया का बेटा है जिसने अनेक कठिनाईयों का सामना करके सुनील को एक अच्छा नागरिक बनाया तथा उसको जब माफियाओं ने मारा तो खून भी देकर उसकी ज़िंदगी बचायी। यह सत्य है सुनील को जन्म देने वाले दूसरे मातापिता थे। लेकिन सफल व्यक्ति- बनाने वाली रज़िया थी जो हिजड़ा थी।

यहाँ किन्नर शिक्षा का महत्व खूब जानता है । इसलिए इसमें एक अनाथ बालक को शिक्षा देकर उसने बड़ा ऑफिसर बनाया । बदले में वह कुछ नहीं चाहती है ।

चाँददीपिका- की कहानी **'खुश रहो क्लीनिक'** में किन्नर का किन्नर बच्चे को पढ़ाकर डॉक्टर बनाने की कथा कही गई है । रजा बानू किन्नर अमीर घराने में जन्म किन्नर है । किन्नर ऋषि को गुरू मां से पढ़ने के लिए

संघर्ष किया। बड़ी मुश्किल से उसको प्रवेश दिलाया। गुरु माँ ने हेडमास्टर से कहा-: " हैडमास्टर साहब मेरा तो बच्चा नहीं फिर भी यह मेरा बच्चा है आप मेरे ऋषि को पढ़ा दीजिए।"[40] हिजड़ों ने अनेक कठिनाइयों का सामना करके ऋषि ने पढ़ाने के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। इधर ऋषि के स्कूल में प्रवेश लेने पर डेरे में खर्च बढ़ गया था। उसका भी प्रबंध गुरू मां कर रही थी। ऋषि तो जानता था ही कि उन्नति का रास्ता पुस्तकों से होकर गुजरता है। इसलिए वह पढ़ने के लिए लालायित था तथा अपने भविष्य के बारे में भी जानता था कि आने वाले समय में अनेक कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ेगा। गुरू मां ने उसे पढाने के लिए कोई कसर नहीं छोड़ी। दुगुनी मेहनत से काम में लग गए, बधाई भी खूब गाना शुरू कर दिया, ऋषि भी मेहनत करके डाक्टरी की पढ़ाई के लिए चयनित हो गया। उसके बारे में कहानी में उल्लेख यूँ मिलता है -:"योग्यता को सीढ़ी बना ऋषि डॉक्टर बना था।"[41] डाक्टर बनने के बाद वह समाज की सेवा में जुट गया। गरीबों, मजदूरों, निर्धनों तथा असहायों के लिए दवा देने लगा। सबका सम्मान करता था , किसी से भी कोई फीस नहीं लेता था बल्कि जो कुछ दे देता था वह बॉक्स में ही डालता था। एक बार अपनी जैविक पिता अपनी जैविक माँ को लेकर दवा लेने केलिए आ जाते हैं। जाँच करने और दवाई लेने के बाद ऋषि के धनी पिता ने उनको पैसे

की गड्डी देना चाहा,लेकिन ऋषि ने मना कर दिया -:“जेब से नोटों की मोटीसी गड्डी निकाला टेबल पर धर बोला था-, “डाक्टर साहिब यह आपकी फीस और दवाओं के पैसे। हम आपके कृतज्ञ है कि आपने हमें अपना अमूल्य समय प्रदान किया। यह मेरी धर्म पत्नी जैसे ही ठीक हुई हम आपके दर्शन करने पुनः यहां आयेंगे।” डॉक्टर ने कहा था, इतने नोट न हमारी फीस है न औषधि की कीमत। वो सामने बॉक्स पड़ा है। यथायोग्य अल्पराशि डाल दीजिए”[42] इस पूरी घटना में ऋषि के जैविक माता पिता ने इसको नहीं पहचाना लेकिन ऋषि ने उसको पहचान लिया और कुछ दिन बाद अपनी माँ को पत्र भी लिखा – “ माँ चरण वंदना। तुमने तो मुझे लगभग पहचान ही लिया होगा। पहचान तो मैं गया था माँ मैं ही तुम्हारा राजाबाबू हूँ। हम एक दूसरे को भूले नहीं यही हमारे लिए पर्याप्त है। इस जन्म में हमारा मिलना असंभव हैं , हम अवश्य मिलेंगे इस जन्म में नहीं अगले जन्म में मिलेंगे फिर भी कभी अलग न होने के लिए । आपका बेटा”[43]।

कमल कुमार द्वारा रचित **‘कुकुज नैस्ट’** कहानी में किन्नर बच्चों को शिक्षा के प्रति जागरूक करने का प्रयास किया गया है । लेखन ने इसमें उनको शिक्षा प्रदान करने की पुरजोर वकालत की है - “बेटी – बेटा पढ़-

लिखकर पैरों पर खड़ी हो भगवान तेरी रक्षा करेंगे"[44] रचनाकार ने किन्नरों को पढ़ा लिखकर प्रगति के-रास्ता चुनने का आह्वान किया है जो एक पढ़े लिखे सभ्य व्यक्ति की पहचान है और शिक्षा ही किसी की पहचान बदल सकती है। खासकर बहिष्कृत, उपेक्षित किन्नर समाज को शिक्षा आत्मनिर्भर बनाती है।

लवलेश दत्त द्वारा रचित '**नवाब** 'में नवाब नाम का एक किन्नर है जो मंदिर की सीढ़ियों से एक बच्ची को उठाकर लाता है। उस बच्ची का पालन पोषण करके उसकी शिक्षा का भी बंदोबस्त करता है- ।किन्नर नबाब ने जया को शिक्षा दिलाई । कुछ समय व्यतीत होने पर नवाब ने जया को शिक्षानिकेतन में पढ़ने के लिए भेज दिया जिससे उसका साया भी जया को परेशान न कर सके और उसका पालनपोषण अच्छा हो-, उत्कृष्ट शिक्षा मिले वह समाज के लिए एक सभ्य जिम्मेदार नागरिक बने।

प्रोफेसर मेराज अहमद की कहानी '**मैमूना , मोमिना और मैनू**' में एक बच्चे का सब मिलकर पालन-पोषण करते हैं और उसकी शिक्षा – दीक्षा के लिए सरकारी स्कूल से लेकर यूनिवर्सिटी तक भेजते हैं उसके रहने की व्यवस्था करते हैं । जब अशरफ अच्छी शिक्षा प्राप्त करके इंजीनियरिंग पूर्ण करके भारत सरकार के अच्छे उपक्रम में नौकरी पा लेता है तो वह अपने

परिवार को इसलिए छोड़ देता है कि वे सब किन्नर हैं और उससे समाज में उसकी प्रतिष्ठा कम होगी। वास्तव में वह अपना बचपन और लालन – पालन की कृतज्ञता को भूल जाता है। अब वह एक अच्छा ऑफिसर बन गया है तो उसको सब कुछ अपनी स्वयं की सफलता दिख रही है जबकि अशरफ की यह सफलता में सबसे अधिक योगदान उसकी खाला मौसी मैमूना ,मोमिना और मैनू का ही है – "इसकी खुशी के लिए हम लोग कुछ भी करने के लिए तैयार हैं"[45]।

4.5.3. आर्थिक संकटों से जूझता किन्नर समुदाय

जब व्यक्ति के पास अपनी जीविका चलाने के लिए पैसे या अर्थ या धन नहीं होता है तब वह संकट में पड़ जाता है । किन्नरों की स्थिति भी इस तरह की है । उनकी सबसे बड़ी कठिनाई पैसों को लेकर होती है। क्योंकि उनके पास कोई आय या इनकम का साधन मुख्य रूप से होता नहीं है। माता-पिता से भी वसीयत के रूप में कोई संपत्ति नहीं मिलती है।

किन्नरों की आर्थिक स्थिति एवं संकट पर चर्चा करते हुए मिलन बिश्नोई लिखती है -" परिवार का सहारा उन्हें बचपन से ही छूट जाता है तो उनको जीने के लिए पैसों की ज़रूरत तो रहती है क्योंकि उनका जीवन संघर्षों से भरा हुआ है उसके पास शरीर बेचने के अलावा कोई अन्य साधन नहीं रहता है। वे सेक्स वर्क करते हैं । उससे तनाव ग्रसित होते हैं और

अनेक प्रकार की बीमारियों के शिकार बन जाते हैं। लोग उन पर अत्याचार और क्रूर व्यवहार करते हैं , इसलिए किन्नर लोगों की आर्थिक स्थिति बेहद खराब है। वे अपनी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए नाचना , गाना और बार में डांस करना या फिर घरों में बधाई देने का कार्य करते हैं। लेकिन आज के समय बधाई का काम बहुत कम हो गया और कुछ लोग तो अपनी मर्जी से अच्छी खासी नेग इनको दे देते हैं। परंतु हरेक समाज में लोग ऐसे नहीं होते हैं तो किन्नर लोगों को इतनी नेग नहीं देते। फिर इनका गुज़ारा करना मुश्किल है।"[46]

यदि कुछ वसीयत के रूप में मिलता है तो वह गुरू माँ से मिलने वाला थोड़ा बहुत गहना, सोना या नकद के रूप में कुछ धन जिससे उनकी जीवन लीला तो चल नहीं सकती,इसलिए किन्नर समुदाय के लोग बहुत तेजी से ज़िस्मफरोशी, चोरी, डकैती के कार्यो में संलग्न हो जाते हैं जिसे किन्नरों की साख पर भी बट्टा लगता है। इसका चित्रण करने वाली कहानी है माधव राठोड द्वारा लिखित'**रेड सर्किल**'। इस कहानी में किन्नरों को पैसों के कारण जिस्मफरोशी में धकेला जाता है। उसका वर्णन कहानी में इस प्रकार मिलता है - "यह जीवन भी अजीब है साहब। हम रोज़ सुबह उम्मीदों के साथ उठते हैं दिन भर सुरक्षाएं कमाते हैं और उन सुरक्षाओं की

एफ. डी. धरी की धरी रह जाती है और शेष रहता हैहमारा बनाया हुआ रेड सर्किल, रूप गया, देह गयी, जवानी गई, पैसा गया, पद गया सब किनारे हो जाते हैं मगर साहब आत्मा तो कभी बूढ़ी नहीं होती है, न मरती है।''[47]

इस प्रकार किन्नर समुदाय वृद्धावस्था में भी अनेक परेशानियों से जूझता रहता है। क्योंकि जीवन के इस पड़ाव में कोई भी किन्नर अब न ही घुंघरू बांध नाच सकता है न ही उसका रंग-रूप इस काबिल बचता है। कोई उसको बधाई या नेग स्वरूप कुछ दे तो, किन्नर समुदाय इस अवस्था में भींख मांगकर या फिर रेलवे स्टेशन पर माँग -मांगकर अपना शेष जीवन व्यतीत करता है। जैसा कि महेन्द्र भीष्म की कहानी '**माई**' में वर्णित है - ''मैं उसे सहारा देते अपनी बेंच की ओर ले आया। पानी पिलाती मैंने पूछा ''भूखी हो माई?'' ऊंगली से उसने दो दिन का इशारा किया। 'ओह!' मुझे रहा नहीं गया मैंने वृद्धा का सिर अपने सीने से पल भर को लगाया और अपना टिफिन खोलकर उसके सामने रख दिया। भूखी माई ने आलू की सूखी सब्जी और पूड़ियां मन से खायी।''[48] यह वह किन्नर स्त्री है जो बूढ़ी हो चुकी है और कई दिनों से भूखी है जिसको लेखक खाना-खिलाने का प्रयत्न करता है। इस कहानी के माध्यम से उन्होंने कुरूप समाज का वर्णन किया है कि किस प्रकार यह समाज एक बुजुर्ग महिला या किन्नर के साथ

अत्याचार करता है। सरकार उनको खाना नहीं दे पाती है जिसके कारण वे चारी करने को मजबूर हो जाते हैं । घटना स्वयं कहानीकार के साथ होती है। कहानीकार चारबाग रेलवे स्टेशन से किसी दूसरे शहर की यात्रा अपनी पत्नी पुष्पा और बेटी पूजा के साथ करता है। कई दिनों का भूखा वयोवृद्ध किन्नर अपने पेट की आग बुझाने के लिए रचनाकार के बैग की चोरी कर लेता है। जब लेखक उससे सच्चाई जानने का प्रयत्न करते हैं तो वह अपनी दीन हीन दशा इस प्रकार व्यक्त करता है –" मुझे गेरों से ज्यादा अपनों ने ही अपनी ही बिरादरी वालों ने ठगा और इस हाल में ला दिया। आज जब भूख सहन ना हुई तो जीवन में पहली बार चोरी की और पकड़ी गई"49 ।

लेखक वृद्धा माई के दोनों भाइयों को मजबूती से अपने हाथ में धामते हुए बोले –" माई कहां जाना है तुम्हें तुम्हारा ?कहां रहती हो ? इससे मुझे कोई सरोकार नहीं ?अतीत क्या है, आप चाहो तो अब अपना शेष जीवन हमारे साथ हमारी परिवार की वरिष्ठ सदस्य की हैसियत से व्यतीत कर सकती हो,"50

इस प्रकार रेलवे स्टेशन पर घटित इस घटना के चित्रण का लेखक अंत करते हैं । लेखक बताते हैं कि किन्नर माई उनके परिवार के साथ बुजुर्ग की हैसियत से पिछले पांच वर्षों से रह रही है। लेखक के घर मुहल्ला और

परिचित लोग उन्हें 'माई' कह कर संबोधित करते हैं और उनसे आशीष ग्रहण करते हैं।

'किन्नरों की दुआ बद्दुआ' कहानी में शान्ति कुमार स्याल सचिन नामक पात्र किन्नरों की कमाई पर गंभीरता से सोचता है। वहाँ पाया जाता है कि किन्नर सभी मौके पर पैसा माँगते हैं। शादी होने पर, बच्चे के जन्म पर तथा ट्रेन में परंतु इनके पीछे उनकी जीविका का सवाल रहता है। इसका चित्रण कहानी में यूँ मिलता है – " अभी दो तीन घंटे ही बीते थे कि पान से रंगे होंठ और किनारों से सवारे हुए अपनी टोली के चार – पांच किन्नर भारी आवाज़ में ताली बजा – बजा कर नवयुवकों की गालों पर हाथ मारते हुए पैसे बटोर रहे थे" [51] .... वह पाता है कि किन्नर समाज अपनी दुआ से दूसरों का जीवन खुशियों से भर देता है, लेकिन अपने जीवन में मुसीबतों से छुटकारा नहीं कर पाता है।

डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह की **'कर्तव्य'** किन्नरों के आर्थिक संकट को उजागर करनेवाली कहानी है।यह पारिवारिक पृष्ठभूमि पर रचित कहानी है।शिवानी जन्मजात किन्नर है।पिता का देहांत शिवानी की बाल्यावस्था में ही हो जाता है। गरीबी एवं असहायपन शिवानी को और अधिक आर्थिक संकट में डाल देती है । इस कहानी में आर्थिक दुर्बलता तीव्र रूप से

अभिव्यक्त हुई है। गांव के कुछ मनचले ने शिवानी की माँ के साथ बलात्कार किया क्योंकि वे जानते थे कि उनका कोई सहारा नहीं है ना ही वह कोई कुछ कहेगा ना ही किसी किसी प्रकार का विरोध उनके सम्मुख होगा । कहानी में शिवानी ने जो निर्णय लिया, उसका वर्णन इस प्रकार मिलता है :- "शिवानी ने उस दिन निर्णय लिया कि वह काम करेगी । माँ से कहा आज के बाद तुम्हारा बेटा काम करेगा मेरा शरीर लड़की जैसा है। पर मैं लड़की तो नहीं हूँ । ना मैं बच्चा पैदा कर सकती नीम बसा शक्ति और लड़कियों की तरह कोमल भी तो नहीं हूं। मेरी दाढ़ी मूँछ नहीं आती लेकिन मन से मैं लड़का हूँ माँ तू चिंता मत कर आज के बाद तुझे काम करने की ज़रूरत नहीं तेरे साथ ईश्वर ने नाइंसाफी की है अब तेरा साथ नाइंसाफी नहीं होने दूंगी।"[52]

अंजली गुप्ता की **ताली की गूँज** कहानी में प्रेमा एक मेले में नाचने का काम करती है। लेकिन एक दिन   उसकी सहेली उससे कहती है - "बगल में ट्रैक वाले आए हैं अगर पैसा कमाना चाहती है तो उसे तू खुश कर सकती है।"[53] लेकिन प्रेमा कहती है - "यह पीड़ा का सौदा मुझसे नहीं हो पाएगा।"[54] यह कहानी बताती है जीवन जीने के लिए अपमानित कार्य से लेकर शारीरिक यातना तक का सफ़र उन्हें झेलना पड़ता है।

विमलेश दत्त की **'ट्रांसजेंडर'** कहानी में डॉक्टर देवराज पैसे के लालच में किन्नर से मिलकर दूसरे बच्चों को किन्नर बनाने का काम करता है। परंतु बुरे काम का बुरा नतीजा होता है । डॉक्टर देवराज की करतूत का हिसाब उसके बेटे राधेश्याम को चुकाना पड़ा। जब किसी की ज़िन्दगी जबरदस्ती ख़राब की जाती है तब उसकी बद्दुआ परिवार के लोगों पर पड़ती है पैसा कमाना ठीक है लेकिन पैसे कमाने के लिए बुरा काम नहीं करना चाहिए। यह किन्नर के माध्यम से कहानीकार ने प्रस्तुत किया है।

इन कहानियों में कहानीकारों ने यह चित्रित करने का प्रयत्न किया है कि भारत में किन्नरों की स्थिति शोचनीय हैं। उनके सामाजिक बहिष्कार और उनके साथ होने वाले भेदभाव के कारण वे शिक्षा हासिल नहीं कर पाते और बेरोजगार रह जाते हैं। इसलिए भीख माँगने के सिवा उनके पास कोई विकल्प नहीं रहता।

4.5.4. धार्मिक एवं सांस्कृतिक ढकोसलों में उलझता किन्नर समुदाय

भारत देश में अनेक धर्म हैं । बौद्ध धर्म का प्रारंभ ही भारत में हुआ है। लेकिन बहुधर्मी इस देश में धर्मांधता अपनी चरम सीमा पार कर चुकी है। हर मुद्दे को लोग धर्म के चश्मे से देखते हैं और सब धर्म वाले अपने धर्म को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से श्रेष्ठ बताने से भी नहीं चूकते हैं। लेकिन धार्मिक

होना और उसके साथ षडयंत्र करना दो भिन्न-भिन्न स्थिति है। वर्तमान स्थिति में धार्मिक लोग कम है ।लेकिन ढकोसलेबाज अधिक है। धर्म के नाम से कई राजनैतिक पार्टियों की विचारधारा चल रही है। नफरत के बीज बोए जाते हैं। हिन्दू-मुस्लिम की बाइनरी में फंसाया जाता है, वोट लिया जाता है और देश के मुद्दे ज्यों के त्यों ही रह जाते हैं। क्योंकि धर्म के नशे में अगले चुनाव आ जाता है और फिर वही घिसी-पिटी परिपाटी पर वोट मांगने नेता निकल जाते हैं और सरकार बना लेते है।

इसी धार्मिक ढकोसलों में किन्नरों को भी फंसाया गया है । इलाहाबाद कुंभ में किन्नर अखाड़ा लगाया जिससे किन्नरों को भी धार्मिक राजनीति से जोड़ा जा सके। किन्नर देश में बधाई मांगते हैं साथ ही पार्टी का प्रचार-प्रसार भी वे गुप्त रूप से करते हैं और वोट बैंक की पॉलिटिक्स के शिकार भी वे बन जाते हैं।

साधारणतया किन्नर समुदाय अरावन देवता को ही अपना अराध्य मानते हैं और किन्नरों का विवाह भी अरावन से ही होता है जिसके दो दिन बाद किन्नर विधवा होकर सफेद वस्त्र धारण कर लेते हैं। अरावन देवता का चित्रण विजेंद्र प्रताप सिंह की कहानी **'संकल्प'** में इस प्रकार मिलता है:- ''माधुरी भी वस्तुतः बुचरा किन्नर थी। वह पारूल के साथ गुरुमाई से मिलने गयी। उसने सूचना दी कि पूरी टोली मद्रास के कुवागम गाँव जा

रही हैं वहाँ अरावन की पूजा होती है और अभी तक माधुरी का संस्कार नहीं हुआ हैं।"[55]

किन्नरों की दुआ वद्दुआ' कहानी शान्ति कुमार स्याल द्वारा रचित है। इस कहानी में समाज में व्याप्त दुआ बद्दुआ जैसे शगुन अपशगुन और समाज में जड़ तक फैली भ्रांतियों के संबंध में है। सार्वजनिक मान्यता है कि किन्नर की दुआ बद्दुआ का असर होता है। यह समस्या केवल आस्तिक देशों में निवास कर रहे नागरिकों की है। नास्तिक देशों में यह सब कुछ नहीं माना और समझा जाता है क्योंकि वही श्रद्धा और आस्था जैसा कुछ नहीं है और ना ही किसी प्रकार का रीति रिवाज- है । वहां पर मानवताप्रिय नागरिक अधिक है जिस प्रकार वहाँ की जेल तक बंद कर दी गयी है।

इस कहानी में एक आस्तिक छात्र सचिन का वर्णन है जो किन्नरों को पैसा देता है तो नौकरी मिल जाती है तथा कुछ समय बाद वह परिणय सूत्र में बांधा जाता है और जल्दी ही पुत्र रत्न की प्राप्ति होती है। वह आस्तिक व्यक्ति इसमें किन्नरों की दुआ और आशीर्वाद ही समझता है।

एस.आर. हरनोट की कहानी "**किन्नर**" प्रथम दृष्टि में नाम के वास्ते ट्रांसजेंडर की लगती है लेकिन यह पौराणिक आधार पर नामित आधुनिक किन्नौर क्षेत्र की आचार – विचारों , रीति – रिवाजों को एक युवती की

प्रेम कथा को आधार बनाकर लिखी गयी है। किन्नर संस्कृति का चित्रण कहानी में इस प्रकार है – " पुराणों में वर्णित गन्धर्व , किन्नर इत्यादि देव संस्कृतियों में से किन्नर जाति को हिजड़ों का पर्याय के रूप में मानते हुए देखकर अपनी अस्मिता की चिंता से बेलिराम किन्नर व्यथित होता है"।[56]

इनके मुख्य आराध्य देव अरावन माने जाते हैं , जिनसे प्रत्येक किन्नर हर वर्ष एक दिन के लिए शादी रचाता है। इसके पीछे ऐतिहासिक मान्यता है कि अर्जुन और नागकन्या चित्रंगना का पुत्र अरावन कुरुक्षेत्र की लड़ाई में माँ काली के सामने आपको नर बलि के रूप में प्रस्तुत करता है। इस के लिए श्री कृष्ण मोहिनी रूप धारण कर उससे विवाह करते हैं और उसकी मृत्यु के पश्चात मोहिनी एक विधवा की तरह विलाप करती है। तभी से ये किन्नर इन्हें अपनी बिरादरी का मानते हैं और इनकी याद में हरेक वर्ष अरावन के मंदिर में एक दिन के लिए शादी रचाते हैं और फिर विधवा होकर विलाप करते हैं। इसका जिक्र डॉ. महेंद्र प्रताप सिंह की कहानी '**अथ किन्नर कथा**' में इस प्रकार किया गया है – " अरावन के बलिदान के बाद उनकी पत्नी रूप में श्रीकृष्ण ने बहुत विलाप किया। तभी से इस उत्सव की परंपरा चली आ रही है"[57] । कुवागम मेले में ये किन्नर अपने परंपरागत धार्मिक अनुष्ठानों को विधिपूर्वक करते हैं। इस मेले के बारे में भी कहानी

में यूं कहा है - "महावीर ने बताया कि तमिलनाडु के विल्लुपुरम जिले के कुवकम गाँव में भगवान अरावन काप्रसिद्ध मंदिर है। भगवान प्रत्येक नववर्ष की पहली पूर्णिमा से वहां 18 दिन का प्रसिद्ध मेला लगता है। यहाँ पूरे देश से किन्नर तो आते ही हैं , समाज के अन्य लोग तथा भारी संख्या में स्थानीय लोग भी इसमें सम्मिलित होते हैं"। [58]

किन्नर समाज एक रहस्यमयी दुनिया है , जिसे जानना आम लोग की वश से दूर की बात है। इन रहस्यों में इनके जीवन की शैली और तौर – तरीकों के साथ मृत्यु संस्कार को भी देखा जा सकता है। सत्य प्रकाश दुबे द्वारा रचित '**वो किन्नर लड़की**' में किन्नर का जन्म और अंतिम संस्कार के बारे में बताया गया है ।यह किन्नर लड़की रोशनी की कहानी है। इस कहानी में एक किन्नर के जन्म लेने से अंतिम संस्कार तक का संपूर्ण तथ्यात्मक ब्यौरा प्रस्तुत करने का लेखक द्वारा प्रयास किया गया है । इस कहानी में मुख्यत: पिता की मजबूरी, समाज का प्रभाव, तथा उसकी प्रतिष्ठा, माँ की भावुक कथा एवं किन्नर समाज का रूप का वर्णन मिलता है । जब कोई सदस्य उनकी डोली से मुड़ता है तब भी उत्सव का माहौल होता है और जब मरता है तब भी हर्ष एवं उत्सव का माहौल होता है। रचनाकार ने इसमें यह दर्शाने का प्रयत्न किया है कि जो समाज सब की हंसी खुशी में शामिल होकर, चेहरे पर मुस्कान बिखेर देता है,वह समाज

कितना निष्ठुर और संवेदनात्मक हो जो अपने ही परिवार में मृत्यु होने पर खुशी मनाता है। किन्नर समाज में मान्यता है कि शव को जूतों चप्पलों से पीटकर उसे दफनाना चाहिए जिससे अगले किसी भी जन्म में वो किन्नर न बने- "कब्र खोदने के बाद किन्नर रीति के अनुसार रोशनी के शव को दफना कर वापस खुशियां मनाते हुए वापस लौट रहे थे" 59।

कहानी तीन भागों में है। पहले भाग में दुबे जी ने रोशनी के जन्म के विषय में बताया है। दूसरे भाग में रोशनी के किन्नर समाज में पहुंचने की घटना को बताया गया है तथा तीसरे भाग में रोशनी के मरने की घटना के विषय में बताया गया है। वास्तव में किन्नर लड़की अपने द्विअर्थी शरीर को त्याग कर इस स्वार्थी समाज से हमेशा के लिए दूर चली गई थी और आकाश में टिमटिमाते किसी तारे की तरह अटल हो गई थी।

किन्नरों के परंपरागत रहन – सहन और शादियों में नेग माँगना एक संस्कार है I डॉ. लवलेश दत्त कृत **'नेग'** भी इसी संस्कार पर आधारित कहानी है I किन्नरों का किसी की शादियों में या किसी के घर बेटा होने पर नाचना – गाना और नेग मांगना आदि का यथार्थ इस कहानी में चित्रित हुआ है I इसका विषय एक तरफ बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ को लेकर भी है और दूसरी तरफ किन्नरों के बेटी होने पर स्वयं नेग देने का भी है।

समाज में कुछ ऐसे लोग भी होते हैं जो किसी शिशु कन्या के जन्म लेने पर शोक मनाने लगते हैं और इसके लिए भी बहु को जिम्मेदार मानते हैं। इसी विषय को केन्द्र में रखकर इस कहानी की रचना की गयी है।

'किन्नर का आशीर्वाद' कहानी के रचनाकार डॉ अर्चना अर्चनश . दुबे है। सामाजिक पृष्ठभूमि पर लिखी गई यह कहानी बच्चा किन्नर पैदा होने पर बहू की प्रताड़ित करने की व्यथा है कि वर्तमान समय में आज भी गांव देहांत में लड़की पैदा होने पर भीबहू को जो भी ठहराया जाता है। क्या दशा होगी जब किन्नर पैदा हो जाएगा। इस भयावह स्थिति को समझने के लिए अधिक कुछ नहीं मानसिक स्थिति को समझकर बदलने का प्रयास करना होगा। बच्चा पैदा होना स्त्री पुरुष के टेबल निषेचन क्रिया का परिणाम होता है। उसमें क्रोमोसोम डिसऑर्डर होना किसी के बस की बात नहीं है। यह सब प्राकृतिक क्रिया होती है। शगुन अपशगुन के गिरफ्त में फंस चुका है। सामाज आज भी यही मानता है कि किन्नरों के आशीर्वाद से बच्चे पैदा होता है और उनकी ही बद्दुआ से बच्चे नहीं होते है। यह सब भ्रांतियां समाज में आज भी विद्यमान है। जिनको मानसिक दृष्टिकोण बदलने से बदला जा सकता है वरना यह समस्या ज्यों की त्यों समाज मैं बनी रहेगी।

लवलेश दत्त की कहानी **'नेग'** सूक्ष्म बिंदुओ पर ही आधारित होती है जो समाज में बड़ा संदेश देकर जाती है। सुधीर ने सुमन से प्रेम-विवाह किया था दोनों बहुत खुशहाल रहते हैं। दो लड़कियाँ जन्म ले चुकी थी। तीसरी बार जब सुमन गर्भवती हुई तो सबको लड़का होने की उम्मीद थी । लेकिन किस्मत से तीसरी बार भी लड़की ही पैदा हुई जिससे परिवार के अन्य सदस्य भी नाराज़ हो गये जबकि इसमें किसी की भी कोई गलती नहीं है। यह तो एक प्राकृतिक क्रिया है। इसी क्रम में जब हिजड़े नेग लेने आए तो सास और पति ने सुधीर का चेहरा देखा तो उनको अजीब सा लगा। बड़ी मुश्किल से उन्होंने मूड सही किया। जब बधाई देने का समय आया तो उन्होंने मुंह फेर लिया । इसमें किन्नर टोली टमटमा गयी और सोचने लगी कि कम से कम इस नवजात बच्ची को एक लिंग तो मिला है,फिर भी यह खुश नहीं है जबकि हमें किसी भी योनि में पैदा नहीं किया। अंततः हम खुश हैं और अपना जीवन यापन कर रहे हैं। सुधीर ने तैश में आकर हिजड़े को थप्पड़ मार दिया जिसका वर्णन कहानी में मिलता है - "आय.....हाय हम हिजड़ों के मुंह मत लग.....हमारी बदुआ मत ले....सीधे से हमारा नेग दे और हमें विदा कर.....ज्यादा बातें न करनी है.....न सुननी है.....सीधे-सीधे हमारा नेग दे नही तो....." "नही तो क्या करेगा बे....अब सुधीर भी तैश में आ गया, "क्या कर लो गे बताओ?"[60] इस गर्मागरम बहस में बात काफी आगे बढ़ गयी। हिजड़ों ने साड़िया उठाना शुरू किया तो पता चला कि परिवार, लड़की के जन्म होने पर खुश नहीं है। फिर माई

ने अचानक पाँच सौ रूपये निकालकर लड़की की माँ को दिए और चल पड़ी। इस प्रकार इसमें हिजड़ों की धार्मिक और सांस्कृतिक क्रियाकलापों का वर्णन संजीदगी के साथ किया गया है ।

किन्नर समाज में गुरु माँ को अधिक महत्व है । एक किन्नर के लिए अपने जैविक रिश्ते से ज़ादा अपने समुदाय के लोगों से अधिक प्यार होता है । एक किन्नर को अपनी गुरु माँ सर्वस्व है । इसका प्रमाण देने वाली एक कहानी है ललित शर्मा की **'रतियावन की चेली'** । किन्नर समाज में एक 'गुरू माँ' होती है जो पूरी टोली का ध्यान रखती है अर्थात् गुरू माँ की पदवी उसे ही मिलती है जो सबसे अधिक वरिष्ट हो, अनुभवी हो और सामाजिक पहलुओं की परख हो तथा बधाई के संबंध में भी अच्छी जानकारी रखती हो।   इस कहानी में पार्वती का किन्नर होते हुए भी सामाजिक प्रतिष्ठा है क्योंकि वह सबसे प्रेम, भाईचारे और आत्मीयता के साथ ही बात करती है। इसलिए अपने क्षेत्र में बुढ़ापे पर भी उसको बधाई मिल रही है - "दो तीन बोरा धान तो एक गांव में मिल जाता था। रूपया-पैसा किसी के पास नहीं होता था सब अनाज ही देते थे। अब भगवान की कृपा से भंडार भरपूर है। भगवान जिस परिस्थिति में रखे उस परिस्थिति में खुश रहना चाहिए। मैंने कभी किसी को बदुआ नहीं दी हमेशा आशीर्वाद ही दिया है। जो दे उसका भी भला, न दे उसका भी भला। कोई बधाई गाने

पर ग्यारह हज़ार देता है तो उसके लिए भी गाती हूँ कोई सीधा देता है तो उसके लिए भी बधाई गाती हूँ।''[61] यह सब रतियावन की चेली होने का परिणाम था। क्योंकि पार्वती भी सबसे अच्छे से व्यवहार करती है। गांव के सभी लोग उसका सम्मान करते थे। वह भी किसी के आदर में कोई कमी नहीं छोड़ती थी। इसलिए उम्र ढल जाने के बाद भी पार्वती को आज भी वही समाज दो जून की रोटी इज्जत के साथ दे रहा है। जबकि अमूमन देखने में यह मिलता है कि किन्नर कहीं भी जाते हैं तो वे मुंह मांगी बधाई न देने पर बदुआ देते हैं । नंगा नाच करते हैं और समाज में उस परिवार की बेइज्जती करते हैं। जबकि पार्वती ने सबका सेवा सत्कार किया। कोई कुछ भी खुशी से देकर लेकर आशीर्वाद देकर चली आती थी जिसके कारण आज भी सभी लोग समाज में उसकी इज्जत करते हैं।

गरिमा संजय दूबे की कहानी **'पन्ना बा'** में किन्नर की मृत्यु का वर्णन और सामाजिक उलाहना का चित्रण मिलता है। इस कहानी के कथ्य में एक किन्नर की मृत्यु का वर्णन किया गया है कि किस प्रकार समाज में अफवाहें विराजमान हैं। उनकी क्या-क्या सत्यता है उसका विश्लेषण मिलता है। उनका पहनावा क्या है। गांव में जब बच्चे किन्नर को छेड़ते हैं तब उनकी प्रतिष्ठा क्या होती है इसका भी वर्णन मिलता है- ''पन्ना बा तब अपने घर के आंगन में बने बाथरूम में लघुशंका के लिए जा रहा था कि एक पत्थर उसकी पकौड़ी जैसी नाक में जा लगा, दर्द से बिलबिलाता अपनी

भयानक आवाज़ में वह हम बच्चों की तरफ दौड़ा। सारे बच्चे सर पर पैर रखकर भागे। हम आगे-आगे और पन्ना बा अपनी अस्सी कलि का घाघरा संभाले तालियां बजाते गालियां सुनाते हमारे पीछे।"[62]

पन्ना बा लैंगिक तौर पर भी हास्य का विषय बन चुका था। अजीब रूपरेखा, एकदम अलग सा पहनावा, शारीरिक संरचना भी भिन्न होने के कारण वह हंसी का पात्र बन चुका था। गांव के बच्चे अक्सर उसको परेशान करते थे तथा उसके संबंध में कभी भी कुछ भी कहते थे। समाज उनको हमेशा हेय दृष्टि से ही देखता था चाहे वह कितने भी अरबपति और लखपति हो जाए, क्योंकि समाज का जो दृष्टिकोण बना हुआ है उसको बदलना मुश्किल है। यदि समाज सबको मानव समझना प्रारंभ कर दे तो फिर किसी भी प्रकार की कोई आवश्यकता नहीं है। जैसे कि अफवाह फैली हुई है कि किन्नरों की मृत्यु में जूते-चप्पल मारे जाते हैं उसका भी वर्णन किया गया है। जबकि भारत देश में हर किसी व्यक्ति को सम्मान देने की पुरानी परंपरा है "वह मर गया मेरा मन दुःख और क्रोध से जल रहा था। मृत्यु स्वाभाविक दुःख देती है और क्रोध इसलिए कि मैं चाहती थी कि उसकी लाश पर जूते बरसाकर मैं उसे इस किन्नर के जन्म पर धिक्कारूं, और शायद वह मेरे जूतों की बौछार से डरकर अगले जनम में किन्नर के रूप में पैदा होने की हिमाकत न करे।"[63] जबकि किस योनि में जन्म लेना है यह

किसी के वश की बात नहीं। क्योंकि स्त्री-पुरूष के संबंधों के बाद प्रजनन प्रक्रिया में तय होता है। कभी-कभी कोमोसोम्स डिसबेलेंस हो जाता है जिसके कारण बच्चा हिजड़ा पैदा होता है।

इस प्रकार किन्नर समुदाय में अपनी कुछ परंपरागत रूढ़ियाँ हैं। उनके देवी – देवता , पर्व-त्योहार , आदि में भिन्नता पायी जाती है। ये कहानियाँ किन्नरों की धार्मिक और सांस्कृतिक रीति-रिवाजों को बखूबी ढ़ंग से चित्रित करती है।

4.5.5. पुलिस से पीड़ित किन्नर समाज

पुलिस तंत्र धरातल स्तर पर कार्य करता है। वे ही सुरक्षा की मुख्य बागडोर संभालते हैं। मगर अधिकतर पुलिस वाले किन्नरों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं करते हैं। एक व्यंग्यकार उर्दू लेखक का पुलिस के बारे में , " – यह कथन कि99 प्रतिशत पुलिसवालों की वजह से बाकी के एक प्रतिशत पुलिसवाले भी बदनाम है"[64] । उनको प्रताडित करने के फोटो , वीडियो अक्सर वायरल होते रहते हैं।इसका प्रमाण देने वाली कहानी है डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह की **'सकल्प'** । इसमें माधुरी नामक किन्नर का पुलिस वाले बलात्कार करते हैं। इसका चित्रण कहानी में यूँ मिलता है -:" माधुरी को एक बार उसकी गुरू माँ ने बुलाया, मिलकर माधुरी जब रास्ते

में लौट रही थी तो एक पुलिस वाले ने उसको घसीटकर एक मकान में ले गया जहां पर रात भर उसके साथ संभोग किया गया। पुलिस वाले व्यक्ति ने उससे प्यार से बातें की और उसके साथ संभोग की इच्छा जाहिर की। माधुरी ने मना किया तो पुलिसिया रौब दिखाते हुए उसने माधुरी के साथ बलात्कार कर डाला"[65] इस बलात्कार ने माधुरी के अंदर तक तोड़ दिया और मानसिक वेदना तो थी ही उससे अधिक इस समय शारीरिक वेदना का भी अहसास उसको हो रहा था। रातभर इतनी बुरी तरह उसने रौंदा था कि माधुरी चल भी नहीं पा रही थी। वह धीरे धीरे चलकर-गुरूमाई के पास गई और अपने साथ हुई घटना को बताया। इस पूरे प्रकरण में माधुरी को एक बात पता चल गयी कि उसके जैसे किन्नर के साथ भी संभोग किया जा सकता है। रचनाकार ने यह नयी जानकारी दी है। माधुरी को एक झोला छाप डॉक्टर के पास गुरूमाई लेकर गयी और उसने सारी बातें उनसे बतायी तो उसने प्राथमिक उपचार देने का प्रयास किया। क्योंकि अच्छे डॉक्टर उनका इलाज ही नहीं करते हैं। मजबूरी में उसे झोलाछाप डॉक्टर को ही दिखा दिया। उसने अपने गुरू डॉक्टर के बारे में बताया जहाँ उसने डॉक्टरी सीखी थी।

पुलिस वालों को प्रशिक्षण देते समय बताना चाहिए कि किन्नरों के साथ अच्छा व्यवहार करें व आम नागारिक की तरह ही उनको समझा करें

। श्रीगणेश वास्तव की कहानी '**किन्नर लोग** 'में शालिनी नामक एक किन्नर पुलिस बन जाता है तथा पुलिस वालों को चेतावनी भी देते हैं कि किन्नर" – "भी इंसान हैं उनको इंसान की तरह समझना उचित है। जो पुलिस वाला किन्नरों से भ्रष्टाचार व दलाली का कार्य करे उसे कठोर से कठोर सजा का प्रावधान होना चाहिए जिससे किन्नरों का विश्वास समाज के सभी अंगों से हो सके"66 ।

समाज में निरंतर कुछ न कुछ कुप्रथाएँ अपना घर बना लेती हैं। उन कुप्रथाओं को ध्वस्त करने की आवश्यकता है जैसे किन्नरों पर अत्याचार , शारीरिक दुर्बलता के कारण उनकी पिटाई जैसे कुकृत्यों से,उनका शोषण आज़ादी के लिए नियमबनाना चाहिए। उनकी कलाओं को प्रोत्साहित कर उन्हें सम्मानित करना है जिससे वह सम्मान महसूस कर सके। ऐसे ही सम्मानपूर्वक जीवन पाने के लिए वह निरंतर संघर्षशील रहे। लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी अपनी आत्मकथा मैं" लक्ष्मी मैं हिजड़ा "में बताती है कि - " अच्छा स्कूल व टीचर मिलने से उसमें आत्मसम्मान जागा। इन पर दवाब डालना, हँसी उड़ाना, दोषारोपण करना, अपमान करना, निंदा करना बंद कर दिए गए और इनको अपनी बात को लोगों के सामने रखने का साहस मिला।67"

सलाम बिन रज़ाक की **'बीच के लोग'** कहानी में पुलिस के प्रति किन्नरों का विरोध भी बताया गया है। इस कहानी में किन्नर सरकार से अपनी माँगे मनवाने के लिए जुलूस निकालते हैं तथा सरकार के सम्मुख अपनी मांगे – मगवाने के लिए आतुर रहते हैं । पुलिस प्रशासन ने किन्नरों के इस जुलूस को रोकने के लिए पुलिस बल को बुलाया एस बैन से .पी. बोले जा रहे थेकि जुलूस के लोग स्वयं को पुलिस के हवाले कर दे । जब यह आवाज़ किन्नरों के कानों पर गयी तो उन्होंने ज़ोर – ज़ोर से नारा लगाना शुरू कर दिया और कहने लगे –"हम जैसा हो जाएगा ..... हम से जो टकरायेगा...."[68] वहाँ मौजूद सभी लोग हँस रहे थे । इन किन्नरों को पकड़ने की सामर्थ्य न ही पुरुष बल में थी और न ही महिला पुलिस बल में । सब इनसे टकराने से घबरा रहे थे । घरों की बालकनी में खड़े लोग उनपर पैसे न्योछावर कर रहे थे और उनकी हरकतों पर हंस भी रहे थे । दरअसल हमारे देश में भी ऐसे ही जुलूस निपट जाते है ।पिटकर सब भाग जाते हैं । यही किन्नरों के साथ हुआ वे भी पुलिस को देखकर भाग निकले ।

इस प्रकार देखा जा सकता है कि उपर्युक्त सभी कहानियों में पुलिस वाले किन्नरों के साथ किस तरह का अत्याचार करते जा रहे हैं इसका सच्चा चित्रण मिलता है।

4.5.6. पारिवारिक रिश्ते एवं किन्नर समाज

परिवार कमोवेश एक सार्वभौमिक स्थायी व सर्वकालिक संस्था , है। यह समाज की निरंतरता को बनाए रखने वाली एक आधारभूत इकाई है। डी - मजूमदार के अनुसार .एन. -"परिवार ऐसे व्यक्तियों का समूह है जो एक ही छत के नीचे रहते हैं , रक्त से सम्बंधित होते है और स्थान , – स्वार्थ और पारस्परिक आदान प्रदान के आधार पर एक किस्म की चेतनता अनुभव करते हैं "।[69] किन्नरों का भी एक परिवार होता है। इस परिवार से विस्थापित होकर वे किन्नरों की मंडलियों में आकर बीएस जाते हैं।

किन्नर सिमरन के शब्दों में " –एक एक सामान्य बच्चे लड़का या लड़की की तरह मेरा जीवन नहीं था शुरुआत में घर परिवार से बहुत ही प्यार मिला घर की पहली संतान थी इसलिए शायद वो प्यार मुझे अधिक मिला किंतु जैसे जैसे मैं बड़ी होती गई और घर वालों को लगने लगा कि- , मैं अलग हूं उनकी सोच के विपरीत मैं लड़का नहीं हूं   लड़की नहीं , मेरे व्यवहार लड़कों से बिल्कुल विपरीत है और फिर धीरे धीरे उनका मेरे

माता पिता का व्यवहार मेरे प्रति रुष्ट हो गया मानसिक रूप से प्रताड़ित करना या फिर शारीरिक रूप से कष्ट देना यह एक दिनचर्या हो गई घर में तो कष्ट से ही लेकिन बाहर की भी समाज में हमें रुखा ही व्यवहार मिलता था [70] "। अक्सर किन्नरों के साथ ऐसा होता है कि उनको परिवार से बाहर निकाल देते हैं । डॉ. पद्मा शर्मा की कहानी **'इज्ज़द के रहबर'** में सोफिया नामक किन्नर का सामाजिक संबंध एक एक ऐसे परिवार से है जो बहुत ही धनवान और संपन्न है। वहाँ पर वह अक्सर बधाई लेने जाती है जिससे ऐसे संबंध बन गए है कि उसे घर के सभी सदस्य सोफिया से रिश्ता लगाकर ही बोलते है -- "उसकी तालियों की आवाज़ फट – फट कर गूंजी"[71] जब सोफिया को श्रीलाल जी शादी में निमंत्रण नहीं भेजते हैं या भूल जाते हैं तो वह उनसे शिकायत करती है और अपना विरोध दर्ज कराती है क्योंकि वह संबंधों को भावुकता के द्वारा समझती है और हमेशा उनका साथ देने के लिए भी तत्पर रहती है।

किन्नर हमेशा अपनी जैविक परिवार के साथ जीना चाहता है। लेकिन वह संभव की बात नहीं है। इसकी प्रमाण देने वाली एक कहानी है अंजना वर्मा द्वारा रचित **कौन तार से बीनी चदरिया"**। यह कहानी भावानात्मक पहलू से ओतप्रोत विशिष्ट कहानी है। इस कहानी में एक

किन्नर सुंदरी जब अपने जैविक परिवार से मिलने परिवार में आता है उस समय का खाका कहानीकार ने खींचने का प्रयत्न किया I किस प्रकार समाज के डर से सुंदरी किन्नर अपनी माँ से मंदिर में मिलती है जबकि वह समाज की नज़र में केवल बधाई लेने आयी थी I यह बड़ी ही विचित्र स्थिति है कि अपने ही जैविक परिवार में अल्प विकसित जननांग के कारण परिवार से अलग होने के बाद मिलना कितना दुर्लभ हो जाता है I क्योंकि संवेदनाएँ तो हर व्यक्ति में होती है और संवेदनाओं के कारण ही एक दूसरे के साथ संबंध होते है I सुंदरी किन्नर जब अपने मूल गाँव पहूँचती है तो उसकी बहन और माँ उसको पहचान लेती है I माँ का ममत्व तो उसे पहचान लेता है I आखिर उसने दूसरी संतानों की ही तरह उसको नौ महीने अपने गर्भ में रखा है I कुछ वर्ष दूध भी पिलाया है "-वृद्ध ने पूछा ? कैसी है तू माया" ! मेरी बेटीतू आंगन में आयी पर मैं किसी से कह न सकी कि मेरा बच्चा , आया हैI तुझे आंगन में अजनबी की तरह खड़ा रहने दिया I बैठा न सकी I पानी तक के लिए पूछ न सकी तुझे I यही तो मेरा भाग्य है"[72] I माँ की ममता किसी भी लिंग जाति और कुल की मोहताज़ नहीं होती है ,I वह तो केवल ममत्व की प्रतिमूर्ति होती है I सुंदरी से मिलने के लिए (माया) उसकी माँगाँव के मंदिर में आ गयी और मिलकर आंसू बहाकर रोने लगी

। क्योंकि वह सुंदरी से बहुत प्यार करती है। सुंदरी के मूल घर में ही उसको पानी पीने के लिए भी नहीं पूछा गया जबकि भारतीय संस्कार में किसी भी मेहमान के घर आने पर उसको देवता तुल्य समझा जाता है। जननांग अल्पविकसित होने के कारण पहले सुंदरी का परिवार टूटा और आज जब वह माँ से मिलने आयीं तो वह उसको एक गिलास पानी के लिए भी नहीं पूछ रही है। यह अजीब विडंबना का विषय है। सुंदरी की माँ उससे चिपटकर रोने लगती है और इस योनि में उसके जन्म लेने को स्वयं को जिम्मेदार मानती है जबकि सुंदरी अपनी माँ को समझाती है कि माँ इसमें आपका कोई दोष नहीं है। यह तो भाग्य का फैसला है , सुंदरी ने कहा" - 'माई ! भूल जाउ सब बात ! जो हमारे किस्मत में था सोई हुआ ,। किस्मत का लिखा न मिटत है माई ,। तू कहे रोती अउर छाती पीटती है एमें ? तो हार दोष ना है।[73]" एक किन्नर का अपने परिवार से मिलने तथा अपनी माँ की ममता का अनुभव करने की अभिव्यक्ति इस कहानी में हुई है ।

परिवार में जब कोई बच्चा पैदा होता है तो सबसे पहले उसका रिश्ता जुड़ता है। समाज में कुछ ऐसे लोग भी होते हैं जो किसी शिशु कन्या के जन्म लेने पर शोक मनाने लगते हैं और इसके लिए भी बहु को जिम्मेदार

मानते हैं। इसी विषय को केन्द्र में रखकर इस कहानी की रचना की गयी है।

लवलेश दत्त की कहानियाँ सूक्ष्म बिंदओं पर आधारित होती हैं जो समाज में बड़ा संदेश देकर जाती हैं ।‘ **नेग’**कहानी में सुधीर ने सुमन से प्रेम-विवाह किया था I दोनों बहुत खुशहाल रहते हैं। दो लड़कियाँ जन्म ले चुकी थी। तीसरी बार जब सुमन गर्भवती हुई तो लड़का होने की उम्मीद सबकी थी I लेकिन किस्मत से तीसरी बार भी लड़की ही पैदा हुई जिससे परिवार के अन्य सदस्यों का भी मुँह फूल गया I सब नाराज़ हो गये जबकि इसमें किसी की भी कोई गलती नहीं है। यह तो एक प्राकृतिक क्रिया है। इसी क्रम में जब हिजड़े नेग लेने आए तो सास और पति सुधीर का चेहरा देखा तो उनको अजीब सा लगा। बड़ी मुश्किल से उन्होंने मूड सही किया। जब बधाई देने का समय आया तो उन्होंने मुँह फेरा I इससे किन्नर टोली टमटमा गयी और सोचने लगी कि कम से कम इस नवजात बच्ची को एक लिंग तो मिला है फिर भी यह खुश नहीं है जबकि हमें किसी भी योनि में पैदा नहीं किया। अंततः हम खुश है और अपना जीवन यापन कर रहे हैं। सुधीर ने तैश में आकर हिजड़े को थप्पड़ मार दिया जिसका वर्णन कहानी में मिलता है -“ आय हाय हम हिजड़ों के मुँह मत लगाह्मारी बदुआ मत न ....ज़्यादा बातें न करनी है .... सीधे से हमारा नेग दे और हमें विदा कर..ले

... नही तो क्या करेगा बेअब सुधीर भी तैश में आ गया...., “क्या कर लोगे बताओ?”[74] इस गर्मागरम बहस में बात काफी आगे बढ़ गयी। हिजड़ों ने साड़िया उठाना शुरू किया तो पता चला कि परिवार के सदस्य लड़की के जन्म होने पर खुश नहीं है। फिर माई ने अचानक पाँच सौ रूपये निकालकर लड़की की मां को दिए और चल पड़ी।

किन्नरों को अधिकतर अपने ही परिवार से विस्थापित होना पड़ता है। कई किन्नर अपने परिवार के बीच में वापिस जाना चाहते हैं लेकिन परिवार वालों उनको अपनाने से माना करते हैं लेकिन कुछ मामलों में किन्नर परिवार के भीतर रहकर अपने परिवार का देखभाल करता है। इसकी प्रमाण देने वाली एक कहानी है किन्नर विमर्श का आरंभ करने वालों में अग्रणीय विजेंद्र प्रताप सिंह की कहानी **सकल्प”** । इस कहानी की पृष्ठभूमि सामाजिकता से लेकर यथार्थ धरातल पर है और वैज्ञानिकता का पुट इस कहानी को दूसरी कहानियों से भिन्न करता है। बचपन में मधुर नाम से पुकारे जाने वाला नाम अब माधुरी नाम से प्रख्यात हो चुका है और वह डांस करके अपने परिवार की जीविका का साधन बन चुका है।किन्नरों का जीवन बचपन से ही संघर्षों से भरा होता है। इसी कड़ी में निर्धन परिवार में जन्म लेने के कारण मधुर से माधुरी बनने का दृष्टांत है क्योंकि छोटी बचपन के जन्म होने के बाद मां का देहांत हो गया है पिता की आयु

अधिक हो चुकी थी रोज़ी रोटी का संकट जीवन में था ही इसी कारण-नन्हें मधुर में मां की खुद्दारी ही रंग लाई और उसने बहन"- माधुरी ने पिता, बहन और अपना पेट पालना शुरू किया। ज्यादातर जीने लायक ही नसीब हुआ परंतु उसने जीवन संघर्ष को नया आयाम देने की ठानी हुई थी। मां का वात्सल्य, भाई का स्नेह और बड़ी दीदी का कर्तव्य तथा पिता के लिए एक बेटे फर्ज निभाते निभाते मधुर-चौदह वर्ष का हो गया और छोटी सात वर्ष की। बचपन क्या होता है पता नहीं चला। उसे तो ईश्वर ने प्रौढ़ रूप में ही पैदा किया"[75] -किन कठिनाईयों से घर के बड़े बच्चे लालन-पालन करते हैं तथा उनका बचपन छिन जाता है और जीवन में वह पेट की आग बूझाने के लिए लाख कोशिशें भी करता है चौदह वर्ष की आयु में किसी भी बच्चे में शारीरिक परिवर्तन होते हैं। उसकी आवाज़ बदलती है, चेहरे में भी परिवर्तन होते हैं, शरीर के अनेक अंग विकसित होते मूंछे आना प्रारंभ हो जाती है, लेकिन मधुर का आकर्षण लड़कों की तरफ अधिक होने लगा था लेकिन कोई भी लड़का उसको कुछ भी नहीं समझता था -धीरे" धीरे मधुर को अपने शरीर में अजीब से एहसास होने लगे थे, दुनिया के सामने लड़कों के कपड़े पहनकर घूमने के कारण वह सबकी नज़र में लड़का था परंतु उसे लड़कों के साथ उठने बैठने की इच्छा कम होती और लड़कियों-

के साथ रहने में अच्छा लगता। लड़कियाँ उससे दूर भागती और लड़के उसे सा खिंच-छेड़ते इसलिए वह उनसे दूर भागता। उसकी छाती में अजीबओं महसूस होता। महीने में कुछ दिन वह भी औरतों की तरह मासिक धर्म जैसी स्थिति को महसूस करता परंतु ये सब क्या है उसकी समझ से परे था और उसे कोई बताने वाला भी नहीं था। धीरे धीरे उसकी छातियों में- लड़कियों जैसा उभार आने लगा और अंदर ही अंदर औरत का जन्म होने लगा। न औरत न मर्द के शरीर में प्रधानता से विद्यमान औरत ने ही उसे अपने पिता से अपार स्नेह तथा बहन के प्रति कर्तव्यवान होने की ओर प्रवृत्त किया अन्यथा बहन मर गयी होती और पिता भी किसी पागल खाने में होता।"[76] एक किशोरावस्था के बच्चे के शरीर में आने वाले परिवर्तनों से कहानीकार ने ध्यान आकर्षित कराया कि निर्धनों को अनेक कठिनाईयों का सामना तो करना ही पड़ता । लेकिन जब लैंगिक अपंगता दृष्टिगत होती है तो इन कठिनाईयों में दुगुनी बढ़ोत्तरी हो जाती है। कहानीकार ने एक बच्चे के शारीरिक बनावट का जो रेखांकन किया है वह विशिष्ट है और ऐसी हालत को स्वतः ही देखा भी जा सकता है। मधुर ने अपने छोटे-भाइयों- बहनों को मां औरबड़ी दीदी के प्यार का कोम्बो दिया है। इसलिए वह अपने परिवार से अत्यंत स्नेह भी रखता है, यद्यपि लैंगिक अपंगता होने के कारण किसी भी किसी भी बच्चे को बहिष्कृत कर दिया जाता है लेकिन मधुर के पिता ने कभी भी ऐसा व्यवहार नहीं किया और उसको समान दृष्टि से देखा। क्योंकि यह अति निर्धन परिवार था जहां पर सामाजिक

स्टेटस से अधिक आवश्यक पेट की आग थी जिसको मधुर रोज़ बुझाने का कार्य करता था इसलिए भी वह सबका प्यारा था।

कभी – कभी हमारे समाज में किन्नर बच्चों को मारने की घटनायें चल रही हैं ।कुछ ऐसी भी घटनाएं ज्ञात होती है कि उक्त बच्चे को उसके पिता ने लोकल किन्नर को दे दिया। दरअसल इसके पीछे एक ही मानसिकता कार्य करती है कि पता नहीं कैसा मर्द पिता है जिसके द्वारा एक अलिंगी बच्चे ने जन्म लिया। ऐसा ही माँ के द्वारा सोचा जाता है। इस घटना के घटित होने में सबसे अधिक योगदान तथाकथित सभ्य समाज का है जो माता पिता- को इस हद तक हेय दृष्टि से देखता है कि उनकी समाज में कोई इज्जत नहीं बचती है। इसलिए ये घटनायें भारतीय संदर्भ में अधिकतर मध्यम वर्गीय परिवारों में होती है जहाँ सबसे अधिक पितृसत्तात्मक समाज का बोलबाला होता है। क्योंकि पिता को स्वयं समाज में मर्द साबित करना होता है। दरअसल ऐसे बच्चे के जन्म में पूरे परिवार और कुनबे की पद प्रतिष्ठा का प्रश्न खड़ा हो जाता है। भविष्य में यह- नहीं कराना चाहता है । क्योंकि उस परिवार में उक्त व्यक्ति किन्नर या अलिंगी है। यद्यपि उसके उभयलिंगी होने में किसी का दोष नहीं है । फिर भी परिवार अपनी इज्जत बचाने के नाम पर बच्चे को फेंक देता है। जैसा कि रचना सिंह रश्मि की कहानी **किन्नरों'की प्रतिभा'** में विदित है" – बच्चे

की रोने की आवाज़ और ज़ोर से आने लगी चंपा आवाज़ें उस झाड़ी के पास के गड्ढे से आ रही है, शर्मीली ने झाड़ियों को हटाकर देखा एक बच्चा कपड़ों में लिपटा था और जोर जोर से रो रहा था। शर्मीली ने तुरंत गोद से उठा- लिया बच्चा ठंड से कांप रहा था बस एक तौलिए में लिपटाहुआ था वो लड़की थी" [77] ज्ञातव्य है कि जब यह सभ्य समाज एक लड़की को अपने समाज में स्थान नहीं दे सकता है तो फिर किन्नर बच्चे को कैसे समाज में जगह मिलेगी । क्योंकि पितृसत्तात्मक सोच समाज में कूट कूट कर भरी- है, मानवता के लंबे-लंबे भाषण होते हैं। लेकिन वह भाषण कंठ में ही दम तोड़ देते है। कभी भी वह हृदय और विचार में नहीं आये जिसके कारण लागू न हो सके। इसका उदाहरण राकेश शंकर भारती जी की कहानी **मेरी बेटी"** में विदित है लड़की पैदा होती है तो दहेज के लिए किसी न" - किसी तरीके सेपैसे का इंतजाम कर ही लेते। कम से कम इस समाज के ताने और हँसी मज़ाक को नहीं सुनना पड़ता। यह उनके लिए सबसे बड़ी बेइज्जती थी। अगर लोग जान जाते कि उनकी तरफ हैरत अंगेज़ निगाह से देखता। मुन्नी के मातापिता बमुश्किल पांच महीने तक ही इस रा-ज को अपने पड़ोसियों से छुपा सके।[78]"

परिवार से बाहर आकर कुछ किन्नरों शिक्षा ग्रहण करके नौकरी करते हैं। फिर भी किन्नर के नाम पर परिवार उनको स्वीकारने के लिए

तैयार नहीं है l इसका एक ज्वलंत प्रमाण चाँद दीपिका की कहानी '**खुश रहो क्लिनिक**' में चित्रित किया गया है l मरीज देखने की श्रेणी में एक बार ऋषि की माँ भी दिखाने को आ गयी जिसको ऋषि ने पहचान लिया। ऋषि के पिता उसके बारे में बताते रहे कि उसकी माँ को क्या पीड़ा है। ऋषि ने देखते ही बताया कि इनको शारीरिक पीड़ा से अधिक मानसिक पीड़ा है l ऋषि ने उनको दवा दी और वह ठीक होने लगी। ऋषि के धनी पिता ने उनको पैसे की गड्डी देना चाहा l लेकिन ऋषि ने मना कर दिया जेब से" - सी गड्डी निकाला टेबल पर धर बोला था-नोटों की मोटी, ''डाक्टर साहिब यह आपकी फीस और दवाओं के पैसे। हम आपके कृतज्ञ है कि आपने हमें अपना अमूल्य समय प्रदान किया। यह मेरी धर्म पत्नी जैसे ही ठीक हुई हम आपके दर्शन करने पुनः यहां आयेंगे। ''डॉक्टर ने कहा था-"इतने नोट न हमारी फीस है न औषधि कीमत l वो सामने बॉक्स पड़ा है l यथा योग्य अल्पराशी दल दीजिये" [79] डॉ. ऋषि ने अपने धनी पिता को पैसे का मोल बता दिया जबकि उसकीमाँ उसके ही सामने उसके पिता को अपने पुत्र ऋषि राजा बाबू के बारे में बता चुकी थी l वह अपने बच्चे के लिए तड़पती थी। पल पल वह उसको याद करती थी। वह ऐसे समाज को भी कुछ नहीं-समझती थी जहाँ मानवता और इंसान का सम्मान न हो। इधर डॉ. ऋषि अपनी जैविक माँ को बहुत याद करके उनके लिए रोता था और भावुकता

से स्वयं से पूछता था मेरे पास एक स्टेटस है। अथाह संपत्ति भी अर्जित कर सकता हूँ लैंगिकता तो जो है वह है ही लेकिन मेरे पास मेरी माँ नहीं है जिसको एक बेटा सबसे अधिक प्रेम करता है। इस पूरी घटना में ऋषि के जैविक माता पिता ने-इसको नहीं पहचाना। लेकिन ऋषि ने उनको पहचान लिया और कुछ दिन अपनी माँ को पत्र भी लिखामां चरण वंदना । तुमने तो मुझे लगभग पहचान ही लिया होगा। पहचान तो मैं गया था मां मैं ही तुम्हारा राजाबाबू हूँ। हम एक दूसरे को भूले नहीं यही हमारे- लिए पर्याप्त है। इस जन्म में हमारा मिलना असंभव हैं, हम अवश्य मिलेंगे इस जन्म में नहीं अगले जन्म में मिलेंगे फिर कभी अलग न होने के लिए। आपका बेटा"[8]

एक ही माँ से पैदा होना खून का रिश्ता बिल्कुल नहीं कहलाता है बल्कि एक ही माँ के सीने से दूध पीना ही खून का रिश्ता कहलाता है। खून का रिश्ता सबसे बड़ा रिश्ता है । कुछ रिश्ते जन्म के साथ मिलते हैं और कुछ बनाये जाते हैं। इसका प्रमाण देने वाली कहानी है डॉ. सूरज बडत्या द्वारा रचित **'कबीरन'** कहानी में कबीरन एक ऐसा पात्र है जो प्रोफेसर सुमेध की जैविक बहन है तथा उसके माता-पिता ने जन्म के बाद कबीरन को अनाथालय में छोड़ दिया ।कबीरन प्रोफेसर सुमेध कोट्रेन से अक्सर

मिल जाती है जिससे प्रोफेसर को अपनापन लगता है। वह उससे ट्रेन में वार्तालाप भी करता है - "क्या यह एक महज संयोग तो नहीं होते, लगातार घटते संयोगों के बीच कुछ तो रिश्ता होता ही होगा।"[81] ऐसे अनेक बार सुमेध की उससे बातचीत होती रहती। फिर वह उस कबीरन का जिक्र अपने माँ-बाप से फोन पर करता और वह बताता कि जब वह छोटा था तो वह अक्सर घर पर आती थी। माँ-बाप तो जानते थे। लेकिन वह उनको बताते नहीं थे कि कबीरन उनके ही खून से पैदा है। लेकिन भावुक संवेदनशीलता के कारण कबीरन और सुमेध में आपस में एक विचित्र सा खिंचाव है। शायद एक ही खून का असर है। कहानीकार ने इस अंश के माध्यम से रिश्तों की भावुकता को बताया है जो कि अनैच्छिक और संयोग कहे या नियति का प्रयोग जिसको व्यावहारिक तौर पर समझना दुर्लभ है, केवल महसूस किया जा सकता है। इसी कारण प्रोफेसर सुमेध कबीरन को अपने घर लाने की जुगत में है कि वह किसी तरह वापस आ जाए और उसका भी जीवन संवर जाए। क्योंकि पिता ने साफ-सफाई का काम छोड़ दिया है। वह सब अब प्रसन्न रहते हैं। कहानीकार ने यहाँ पर मानसिकता को बदलना दर्शाया है जिससे समाज को अच्छा संदेश मिल जाता है। लेकिन यह तथाकथित सभ्य समाज बिल्कुल भी यह नहीं समझना चाहता है। कबीरन को जब यह पता चलता है कि सुमेध उसका ही भाई है और

वह उसको वापस घर लौटाना चाहता है तो वह कहती है कि - "अब हमारा परिवार रिश्ते-नाते सब यही समुदाय तो है। हम यहीं अपनी पूरी ज़िंदगी जी लेते हैं भाई-बहन, पति-पत्नी, माँ-बाप सब यहीं होते हैं। पर मैं पूरे विश्वास से कह सकती हूँ कि तुम्हारी दुनिया से अच्छी होती है, हमारी दुनिया। किसी को धोखा नहीं देते, दुत्कारते नहीं है। हम मेहनत करते हैं, गाते-बजाते हैं, उसके बदले कुछ लेते हैं, हमारा समाज तुम्हारी बेरहम दुनिया से कुछ अलग है बाबूजी कहते कहते तन् होती गयी थी कबीरन।"[82]

किरण सिंह द्वारा रचित एक सामाजिक कहानी है **संज्ञा"** । इस कहानी में ग्राम के एक वैद्य जी को किन्नर बच्चा का जन्म होता है। वैद्य जी और वैदायिन अपने बच्चे को समाज के डर से किसी को दिखा भी नहीं सकते। वैद्य जी अक्सर वैदायिन को ही दोषी ठहराते थे जिससे उनकी मानसिक स्थिति भी खराब हो गयी और जीवन जीने की लालसा भी समाप्त हो गयी थी। वैद्य जी बडबडा रहे थे – "वैद्यायिन धोखा दे गयी तुम। तुमने भंवर में साथ छोड़ा है वैद्यायिन" [83] पहले तो वैदायिन को किन्नर बच्चे के जन्म लेने पर उलाहना देते थे लेकिन जब उनकी इसी मानसिक स्थिति के कारण मृत्यु हो गयी तो वैद्य जी अकेले रह गए। अब उस बच्ची की देखभाल उनके ही जिम्मे आ गयी। वैद्य जी अचानक कठिनाईयों से घिर चुके थे।

उनको स्वयं के साथ – साथ ऐसे बच्चे का भी ध्यान रखना है जिसका समाज बहिष्कार करता है उपेक्षित समझता है। इसी कारण वैद्य जी ने दवा देना बंद कर दिया और बच्चे का पालन – पोषण माँ – बाप दोनों बनकर करने लगे।

समाज में संझा के जवान होने की खबर भी आम हो चुकी थी। सब जानते थे कि वैद्य जी की लड़की अब जवान हो चुकी होगी। क्योंकि उसके साथ की लड़कियों का विवाह हो चुका है बल्कि उससे एक दो साल छोटी , लड़कियाँ भी ब्याह चुकी है। इसी मानवताप्रिय व्यवहार के कारण सब आपस में भावुक प्रतीत होते हैं । वैद्य जी तो प्रसिद्ध व्यक्ति थे क्योंकि वह चार गांव के अकेले वैद्य थे जो सबको –"हर प्रकार की दवा मुहैया करते थे। संझा की शादी की बात हुई वैद्य जी ने कन्हाई को पसंद किया और ब्याह का समय आ चुका था। सारे रीति रिवाज़ भी हुए और संझा की - विदाई भी घूम धाम से हुई। संझा ने कनाई को अपनी हकीकत बता दी जबकि कनाई एक बार देख चुका ,नहीं गयी कि .... वो....वो .... हिजड़ा है। [84] एक दिन बिसेसर चाचा को नींद के लिए पोस्ता दाना देने से पहले उसने खुद चख लिया था। उस रात मेरी जानकारी में यह पहली

बार सो गयी थी। इसकी साड़ी इसके सर पर चढ़ गई थी और पल्लू हट गया था। तब मैंने देखा था   कि संझा का ऊपर बेर है और..... कनाई को अपनी हकीकत बता दी जबकि कनाई एक बार देख चुका, संझा ने सबके सामने संझा की हकीकत बता दी थी और इसमें वैद्य जी भी शर्मिंदा हुए लेकिन समाज ने संझा को बहुत हेय दृष्टि से देखा जबकि पूरा गांव संझा के ही हाथ की पिसी हुई दवा खाते है वह सबके बारे में जानती है। कौन कैसी दवा लेता है और किसी के लैंगिक दिव्यंगता पर ज्ञान दे रहे है। इसी तरह की सकारात्मक कहानी भी किन्नर कहानियों में शामिल हैं।

लव कुमार लव की **अँधेरे की परतें"** कहानी में एक किन्नर बच्चे की माँ के संघर्ष को दिखाने का प्रयत्न किया है तथा जीवन के अनेक दुर्लभ पहलुओं को रेखांकित किया है। इस कहानी में परेश एक स्त्री किन्नर है जिसने माँ के साथ-साथ संघर्ष किया है तथा निशा परेशा किन्नर की जैविक माँ है जिसने समाज और किन्नरों को सामना करके अपनी ममता के कारण परेश का पालन- पोषण किया है।परेश की मां जब तक जीवित थी तब तक बचपन में किन्नरों से उसको बचाया। किशोरावस्था के बाद समाज के ठेकेदारों से बचाया तथा उसके जीवन के लिए संघर्ष करती रही।आखिर वह एक थी जिसकी ममता अपरंपार है।परेश के जन्म पर ही उसके पिता

इसलिए छोड़ कर भाग गया क्योंकि उसकी माँ ने एक किन्नर बच्चे को जन्म दिया था।अब परेश और निशा के सामने जीवन चलाने का प्रश्न उत्पन्न हो गया। फिर भी निशा ने अपने बच्चे के साथ अपने जीवन को संघर्ष के साथ आगे बढ़ाती रही एवं अनेक कहानियों के साथ जीवन को आगे संघर्ष एवं अनेक कठिनाइयों के साथ विकृत करना प्रारंभ किया। जब तक निशा जीवित रही तब तक परेश को किसी किन्नर टोली ने नजर उठा कर नहीं देखा। जैसे ही उसकी मृत्यु हुई कि किन्नर अपने साथ परेश को लेकर चले गए।कहानीकार ने इस कहानी में माँ की ममता और वात्सल्य की और ध्यान खींचने का कार्य किया है। क्योंकि ममता लिंग भेद,नस्लभेद भेद जैसी अनेक सामाजिक बुराइयों से परे होती है।

किन्नर जीवन की बाधा बाल्यावस्था से ही प्रारंभ हो जाती है। जैसे ही परिवार को ज्ञात होता है कि उक्त नवजात शिशु अलिंगी है तो उसके साथ अधिकतर दोहरा बर्ताव परिवार द्वारा प्रारंभ हो जाता है। उस व्यवहार का प्रारंभ परिवार के मुखिया के द्वारा ही होता है। उसमें भी उसके जैविक पिता के द्वारा। कई कहानियों में यह मिलता है कि पिता ही अपने बच्चे को कहीं झाड़ झाड़ियों में फेंक देता है। धार्मिक स्थलों पर छोड़- हैं। **'नियति'** कहानी में डॉ. रश्मि दीक्षित ने यह चित्रित किया है की अपने बच्चा किन्नर जानते हुए उसके पिता उसको एक मेले में छोड़ कर भाग

जाता है I वहां पर अन्य बच्चों के साथ झूला झुलाने की लालच में झूले पर ही छोड़ कर भाग जाता है तथा वहाँ से वह किन्नरों की टोली में शामिल हो जाता है। उसका नाम रितु है जो बाल्यावस्था में रितेश के नाम से पुकारा जाता था। रितु को उसकी माई किन्नर टोली के मुख्य किन्नरों को इतिहास की कथा से परिपूर्ण जानकारी से अवगत कराती है तथा किन्नरों के चाल-चलन, उनकी पीड़ा, समाज का दोहरापन, जैविक परिवार का व्यवहार तथा समाज में उन की दिशा एवं दशा का वर्णन मिलता है। एक दिन अचानक रितु को स्वयं के घर बधाई लेने जाना पड़ता है जहाँ पर उसके माता पिता उसको उनके साथ रुकने को कहते हैं और रितु मना कर देता-है। वहाँ माँ पिताजी को समझा रही थी कि -" मैं वापस नहीं आ सकती मेरी दुनिया अलग हो चुकी है। अब यह किन्नर ही मेरा परिवार है। यह मेरा भाई बहन, सखियाँ सब है। दिन में ही मेरी खुशी है, मैं ही मेरी हंसी है।मैं भी तो इन्हीं में से हूं, मैं भी तो किन्नर हूं "। 85

माँ का प्यार एक भावना है I ऐसी भावना जिसे समझाने के लिए असीमित शब्दों की आवश्यकता होती है I क्योंकि यह एक महासागर जैसा गहरा है I लेकिन आज के समय में भी यदि दृढ़ निश्चय और मन में कुछ करने की इच्छा हो तो कोई भी इन परिस्थितियों से ऊपर उठकर दुनिया

जीत सकता है । डॉ. संगीता गांधी द्वारा लिखित कहानी **'दुनिया जीत ली'** में माँ की ममता एवं प्यार का चित्रण मिलता है ।यह कहानी है कुर्मी और उसके बच्चे स्नेहा की है जिसको एक अच्छा जीवन देने के लिए पूर्व में इस समाज से लड़ते हुए और लोगों के उपहासो को सहके अपनी बच्ची को पढ़ाती है और एक शोधकर्ता बनाती है जिसका शोध विदेश की पत्रिका में प्रकाशित होता है और उसको उस शोध के लिए पुरस्कार मिलता है। जब स्नेहा ने उर्मि को यह बताती है तो उर्मि की आंखों पर आंसू आ जाते हैं और वह बाहर जब खेलते हुए बच्चों को देखती है तो अपनी अतीत की यादों में खो जाती है । क्योंकि उसकी बेटी स्नेहा ने इन बच्चों की तरह समान जीवन नहीं व्यतीत किया है। उसको याद आती है कि पहले समय ऐसा नहीं था और जब नई नई दुल्हन बनकर ससुराल आती है तो वह रिशब और उसके ससुराल के सभी लोग बहुत खुश होते हैं और समय बिताता चला जाता है और जब वह जयपुर में गर्भवती होती है तो पूरे परिवार में खुशियाँ की लहर दौड़ जाती है।किंतु समय का पता किसी को नहीं रहता है। पूर्वी भी आने वाले समय से पूरी तरह अनजान थी कि आगे उसके जीवन में कितनी घटनाएं या आने वाली है ।उर्मि जब भी बच्चे को जन्म देती है और पूरे परिवार को पता चलता है कि वह बच्ची एक किन्नर है तब इस समाज की सोच का पता चलता है जब उसका पति ऋषभ और उसके परिवार वाले उस बच्चे को अपनाने से मना कर देते है । उसके ससुर और उसकी भाभी मानव कल्याण संस्था से जुड़े हुए होते हुए भी वह अपनी मानसिकता को

परिवर्तित नहीं कर पाते हैं और समाज के डर से उस बच्चे को अपनाने की हिम्मत नहीं कर पाते हैं जिससे कि उर्मि का जीवन पूरी तरह से बदल जाता है और उर्मि को आभास हुआ कि उसको इस समाज और इसकी मानसिकता से भी बहुत लड़ना है ।क्योंकि समाज में कहीं न कहीं लोग अपनी मानसिकता के कारण इस तथ्य को अभी भी स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं। यहाँ से उर्मि के जीवन में अपने और अपने बच्चे के अस्तित्व को लेकर संघर्ष शुरू होता है। और मैं को उसके परिवार से निकाल दिया जाता है वह बिना किसी की मदद लिए अपने और अपने बच्चे को लेकर चली जाती है। जहाँ वह एक घर किराए पर लेती है और पनीर बच्ची की देखभाल के लिए एक आया रख लेती है,परंतु स्त्रियों का जीवन इतनी सरलता से नहीं बताता है जितना कि सबको प्रतीत होता है। वहाँ पर उसके मकान मालिक का लड़का गीत उसको तिथियों के सामने बेबस समझ कर उसको गलत भावनाओं से देखता है। लेकिन उर्मि उसका विरोध करती है तो वह उसको जम जाता है कि वह सारे समाज में यह बता देता कि उसकी बेटी वास्तव में एक किन्नर है। जिसके डर से वह शहर छोड़ कर चली जाती है उसे कुछ समझ में नहीं आता है और अपनी बेटी को रेलवे स्टेशन पर जाती है पर शायद से करते की जब आप किसी समस्या से लड़ने के दृढ़ होते हैं तो ईश्वर भी आपका साथ देता है। शायद अभी उसके पास एक भिखारिन आती है जो उसके जीवन में एक आशा की किरण बनके आती है वह स्त्री भी उसी समाज की ठुकराई हुई होती है जिस समाज उर्मि बस्ती थी।

लेकिन दर्द की भी अपनी एक अलग परिभाषा होती है जो आंखों से समझी जा सकती है, वे दोनों आपस में अपना दर्द समझ सकती है और उर्मि और वह भिखारी जिसको उर्मि ने काकी मान लिया था वह दोनों एक नए शहर जाते हैं और जीवन को फिर से शुरू करते हैं ।उर्मि वहाँ उस स्कूल में पढ़ाने लगती है और काकी स्नेहा का ख्याल रखती है और समय व्यतीत होने लगता है । बड़े होने पर उसको मालूम हो जाता है कि दूसरे बच्चों से वह अलग है।

इस तरह स्नेहा अपनी प्रतिभा से दसवीं और बारहवीं में सारे राज्य में प्रथम आती हैं जिसके सम्मान के लिए उसको राजधानी बुलाया जाता है, जहाँ के मुख्य अतिथि उर्मि के ससुरथे।वे उर्मी से बात करना चाहते थे। लेकिन उर्मी अपनी बच्ची स्नेहा को लेकर इन सबसे आगे निकल चुकी थी।

तब का दिन और आज का दिन जब उर्मि, स्नेहा और उसकी विदेश में थे जहां उनको उसके शोध के लिए पूर्व पुरस्कार मिलना था, आज उम्र और काकी के स्नेहा को लेकर बहुत खुश थी, और स्नेहा की जुबान पर केवल एक ही शब्द था कि उसने " दुनिया जीत ली"। 86

इससे पता चलता है कि आज भी किन्नरों को समाज में अपना स्थान बनाने के लिए कई कठिनाइयों और समाज के परे जाकर अपनी प्रतिभा

को साबित करना पड़ता है। जिसमें उर्मी और स्नेहा पूरी तरह से खरी उतरी थी।

रेखा लोढास्मित जी द्वारा रचित कहानी '**सुगंधा**'में लेखिका का एक पड़ोस की लड़की के प्रति माननीय दृष्टिकोण गहरा करता है। जबकि सुगंधा की माँ मर चुकी है जैसे कि उसे पता चला है कि दुनिया जान गई कि सुगंधा किन्नर है।लेखिका के नातेदारी में शादी की बधाई लेने आए किन्नरों के साथ सुगंधा का पता चला कि यह वही लड़की है। जहां उनके अच्छे संबंध थे। कई बार लेखिका ने सुगंधा के घर संपर्क करने की कोशिश की ।लेकिन उसके परिवार से कोई रेसपांस नहीं मिला ।इस प्रकार एक मेधावी छात्रा का जीवन नरक बन जाता है और अच्छे परिवार का होने पर भी वह ऐसा जीवन व्यतीत करने को मजबूर है। लेखिका ने अनेक कठिनाइयों का सामना करके सुगंधा से संपर्क किया।

'**भूमिजा**' कहानी मीना पाठक जी द्वारा रचित विशिष्ट आदर्शवादी कहानी है। इसमें एक किन्नर बच्चे के पैदा होने पर कुछ लोग गड्ढे में दबाकर भागना चाहते हैं। जिसको गांव की ही फुलमतिया ने देख लिया और बच्चे को बाहर निकाल लिया तथा उसमें कुछ सांस बची थी। उस नवजात बच्चे को नया जन्म मिल गया जिसको कुछ सगे संबंधी भूमि-गीत करके भागा चुके थे। इस कहानी के माध्यम से मीना पाठक ने

जिस बच्चे को दबाकर गए थे गड्ढे में उसका नाम भूमिजा रख दिया था। उसे गांव के संभ्रांत परिवार से ताल्लुक रखने वाले भूत राय और उनकी धर्मपत्नी उर्मिला देवी ने गोद में ले लिया। फिर उसकी उच्च शिक्षा के लिए विदेश भेज दिया जहां से उसने डॉक्टरी पड़ी। अपना लिंग भी सही करा लिया तथा गांव में ही अपने धनवान पिता की सहायता से हॉस्पिटल बनाकर जन सेवा में लग गई और फूल मतिया का भी जीवन बचाया जिसने पूर्व में भूमिका को जीवन दान दिया था।

'ट्रांसजेंडर ' कहानी राम ललित सिंह राजपुरोहित जी द्वारा रचित है। इस कहानी की कथा में एक किन्नर है जिसका नाम कुमुद है उसमें पुरुषत्व के तत्व अधिक विद्यमान है। उसका वर्णन इस कहानी में विस्तृत रूप में किया गया है। कथाकार ने कुमुद में पुरुषत्व के लक्षण होने के कारण वैज्ञानिकता के माध्यम से उसका लिंग बदलने का वर्णन किया है तथा रो रोकर वितरित होने वाले जीवन को वैज्ञानिकता की सहायता से बदलने के लिए जागरूकता का भी प्रचार प्रसार किया है। देश में ऐसे बहुत से व्यक्ति हैं जिनको अपना लिंग ही नहीं पता चलता है । वे ऐसे कि इधर उधर भटकते रहते हैं। इस कहानी में इन्ही बिंदुओं को उठाया गया है जिससे किन्नर समाज में भी वैज्ञानिक के द्वारा बदलाव आ सकें।

'रोहिणी' कहानी पार्वती कुमारी द्वारा लिखी गई है। इस कहानी में एक किन्नर जिसका नाम रोहिणी है। उसके विवाह का झूठा स्वांग रचा गया है। जिससे समाज में पिता रामलाल (मुखिया) के ऊपर किन्नर बच्चे का लगा काला कलंकमिट जाए और उसकी बेटी उसके साथ अपना जीवन व्यतीत (किन्नर) कर सके। क्योंकि उसके किन्नर होने पर किसी की गलती नहीं है। यह प्राकृतिक है। रामलाल चाहता है कि शादी तो टूटना ही है फिर वह आजीवन अपनी बेटी रोहिणी के (किन्नर) साथ रहेगा। - "यह शादी उसे जिल्लत भरी जिंदगी से मुक्ति दिलवाएगी। हम जानते हैं कि आज उसकी शादी है और कल उसे ससुराल से निकाल दिया जाएगा [87] "। पिता किन्नर बच्चे का बाप ना कहलाए इसलिए स्वयं को बचाना चाहता है। जिससे समाज में उसकी प्रतिष्ठा धूमिल ना हो और शादी के बाद पति ने छोड़ दिया कह रोशनी को अपने साथ रख सके और उसका तथा अपना जीवन एवं उसकी प्रतिष्ठा बच सके।

डॉक्टर अरविंद कुमार की सामाजिक पृष्ठभूमि पर आधारित एक पात्र प्रमुख कहानी है**' सोनम के चर्चे '**। इस कहानी में पात्र को महत्व दिया गया है जिसमें सोनम किन्नर जिसके डांस की चर्चा पूरे शहर के आसपास गांव में भी है इस कहानी में किन्नर सोनम के घर से भागने का

वर्णन मिलता है। कहानी की तारतम्यता अद्‌भुत बनी हुई शब्दावली का भी प्रयोग विशिष्ट श्रेणी का है। सोनम को लोकल किन्नर जब लेने आते हैं तो उसके पिता ने आदर्शवादी रूप दिखाया और अपने बच्चे को साथ रखना चाहा। उसकी मां ने भी सोनम को देने से इंकार कर दिया। लेकिन किन्नरों ने समझाया कि उसको किन्नरों की टोली में जाना ही पड़ेगा। समाज में सभी लोग सोनम को चिढ़ाते थे क्योंकि उसका जन्म एक लड़की के रूप में हुआ था। लेकिन शारीरिक विकास नहीं हो पाया। जिसके कारण लैंगिक का विकास भी नहीं हुआ-"उसके माता पिता ने सोनम को ढूंढने-की कोशिश बहुत की । लेकिन कहीं उसका कोई पता नहीं चला । साड़ी रिश्तेदारी – नातेदारी में खोजबीन की गयी थी । लेकिन कहीं सुराग नहीं लगा था" ।[88]

इस तरह हम देखते हैं कि किन्नर को अपने परिवार वाले ही घर से बाहर कचरे की तरह फेकते हैं । सबसे पहले उनको परिवार लोगों से लड़ना पड़ते हैं । लेकिन कुछ कहानियाँ ऐसी भी हैं जो परिवार वाले अपने किन्नर बच्चे का देखभाल करते हैं । यह इसका एक सकारात्मक पक्ष है ।

4.5.7. बधियाकरण एवं किन्नर समाज

किन्नर समुदाय के सन्दर्भ में यह अफवाहें समाज में प्रचलित है कि वे छोटे बच्चों को उठाकर उनका लिंग काटकर बधिया करके अपने समाज में शामिल कर लेते हैं। क्योंकि माना जाता है कि किन्नर अपनी जनसंख्या बढ़ाने के लिए ऐसा करते हैं। कई कहानियों में इसका वर्णन भी मिलता है। लेकिन यह प्रश्न उठता है कि ऐसा कुकृत्य वे बच्चे की मर्ज़ी से करते हैं या जबरदस्ती अपने सामर्थ्य के बल पर। यह अलग बहस का विषय है। लेकिन बधियाकरण की समस्या कहानियों में दृष्टिगत होती है। इसका प्रमाण देनेवाली एक कहानी है राकेश शंकर भारती की **'बधिया'**। इस कहानी में नौजवान एवं कमसिन लड़कों का बधियाकरण किया जाता है। किन्नर बनाने के लिए कोई भी गुरू बधिया कराता है। कहानी में विदित है – " यहीं गुरु ने उसका लिंग काटकर बधिया कर दिया। उसके बाद शालिनी के रूप में उसका नामकरण हो गया। यह रही सुरेंदर से शालिनी बनने की कहानी" [89]। खूबसूरत लड़कों को अपने मोहपाश में फंसाकर, ऊंचे सपने दिखाकर, नशे की लत में शामिल करके बधियाकरण करा देता है। फिर भी वह किसी भी काम का नहीं रहता है। उसकी

सेक्सुअल जीवन का अंत हो जाता है। दूसरी तरफ वह अपनी प्रेमिका सुष्मिता से बहुत प्रेम करता था। अब वह प्रेम किसी काम का नहीं रहा क्योंकि बच्चे उत्पन्न करने की उसमें ताकत नहीं है l वह कुछ भी नहीं कर सकता न ही एक स्त्री से संभोग करने की क्षमता उसमें बची है। जर्नादन जब अपने पिछले समय के बारे में सोचता है तो उसको स्मरण होता है कि उसने ही सुष्मिता की सील भंग की थी l अब वह कुछ नहीं कर सकता - "सुष्मिता ही मेरी ज़िन्दगी की सबसे पहली और आखिरी महिला है। मैं एक ज़माने में पक्का मर्द था और मैंने ही सुष्मिता की विर्जिनिटी तोड़ी थी। वह मेरी और सुष्मिता की ज़िंदगी का सबसे खुशगवार लम्हा था।" [90] यह उस समय की बात है जब जानकी जर्नादन हुआ करता था अर्थात् जनार्दन के बधिया होने के समय सुष्मिता को जब जनार्दन मेट्रो में मिलता है तो वह उससे साथ चलने को कहता है। क्योंकि वह आज भी उसकी राहें देख रही है। वर्तमान में जनार्दन जानकी बन चुका है तो वह सुष्मिता को खुश नहीं कर सकता इसलिए वह दूर ही रहता है।

किन्नर बनना एक प्रक्रिया है l वह मानसिक और शारीरिक दोनों प्रकार से होता है l किन्नर बनने में बधियाकरण एक अहम् भूमिका निभाता है l सुमित यादव की कहानी '**तीन किन्नर**' में बधियाकरण की प्रक्रिया का

वर्णन इस प्रकार दिया गया है –“डॉक्टर ने अब अपने बैग से तेज़ धार वाली कैंची निकाल लीं। कुसुम उसके दोनों हाथों को सहला रही थी। उसके अन्य दो मित्रों उसके पैरों को ज़ोर से दबाकर पकड़ी हुई थी , ताकि दर्द का एहसास होने पर ज़रा – सा झटपटा ना सके”। [91]

इस प्रकार किन्नर बनाने की प्रक्रिया प्रारंभ होती है और इस कार्य में छोटे – छोटे कमसिन बच्चों की बलि दी जाती है। इस समस्या को कमल कुमार द्वारा रचित **‘कुकुज नैस्ट’** कहानी में चित्रित किया गया है। कुछ किन्नर ऐसे भी पाए जाते हैं जो बालात् बधियाकरण की प्रक्रिया से बनते हैं। कहानी में रचनाकार ने बलात् लिंग काटकर हिजड़ा बनने की प्रक्रिया का विस्तार से वर्णन किया - “ये लोग बेसहारा, असहाय छोटे लड़कों का अपहरण करके या उन्हें बहला फुसलाकर ले जाते है। उनका लिंग काटकर उन्हें अपने गिरोह में शमिल कर लेते है”। [92] किन्नरों के जीवन के यथार्थ का न केवल चित्रण किया है अपितु किन्नरों के साथ परिवार और समाज और यहां तक की राज्य के स्तर पर होने वाले नकारात्मक रवैये का भी रेखांकन किया गया है। लिंग काटकर किन्नर बनाने की प्रक्रिया बड़ी भयावह एवं दर्दनाक होती है। बिना किसी डाक्टरी सुविधा के, तेज चाकू

के एक वार से ही काट दिया जाता है लिंग। चार लोग उसके हाथ-पैरों को पकड़े रहते है। दर्द से कई बार इन बच्चों की मौत भी हो जाती है। लिंग काटकर उन्हें तीन दिनों तक सीधा लिटाया जाता है। उस पर कई किलो तिल का तेल लगातार डाला जाता है। दस-पन्द्रह दिनों में ज़ख्म भी भर जाता है फिर उस पर नीम और बबूल लगाया जाता है उसे चालीस दिनों तक निरीक्षण में रखा जाता है। कभी लिंग काटने की प्रेरणा के रूप में अंधभक्ति की भावना भी कार्य करती है। बुचरा देवी की पूजा के लिए भी समाज में लिंग काटने की प्रथा का उल्लेख कहानी में विद्यमान है। इस संदर्भ में टी.के. सुलैमान अपनी किताब '- Transition from homosexuality sub culture to gay politics' में कहा है कि – "चाकू से लिंग काटने की पुरानी रीति-रिवाज़ का क्या मतलब है ? इसकी युक्ति क्या है ? डॉक्टरों को सेक्स री असाइनमेंट सर्जरी के बारे में जानना बिलकुल आवश्यक है। उनके पाठ्यक्रम में किन्नरों से सम्बंधित इस तरह की बातों को शामिल करना चाहिए"। 93

एस. जी. एस. सिसोदिया द्वारा रचित **'हिजड़ा गली'** नामक कहानी की कथा में गांव की उस गायत्री का वर्णन है जहां किन्नर रहते थे और बहुत से मां बाप अपने बच्चों को उस गली में जाने नहीं देते थे क्योंकि उनको

अंदेशा था कि कहीं उनके बच्चों को वह अपने जैसा ना बना ले। अधिकतर गांव में किन्नरों के प्रति भ्रांतियाँ फैलाई जाती है कि बच्चों को पकड़कर बधिया कर देते हैं। अचानक एक रात आराम कर रहे किन्नरों को शोर सुनाई दिया कोई लड़की चिल्ला रही है और गुंडों से बचाने का इच्छा कर रही है तभी गली के किन्नर निकले और दोनों तरफ से गुंडे को घेर लिया और राधिका को बचा लिया। यह घटना देखकर गांव वालों का विश्वास किन्नरों के प्रति भर गया और किन्नरों ने भी कहा - " यह नहीं कॉलोनी के सभी बच्चे हमारे अपने हैं उन सभी की सुरक्षा की चिंता जैसे आप लोगों को है वैसे ही हमें भी हैं" [94]। गौरतलब यह है कि भारतीय उपमहाद्वीप के अतिरिक्त संसार के दूसरे देशों में शारीरिक रूप से अपूर्ण अर्थात् किन्नरों के प्रति नकारात्मक भावना नहीं। कथाकार इस तथ्य का उल्लेख करते हुए किन्नरों के प्रति परिवार, समाज और राज्य से सकारात्मक रवैया अपनाने का आह्वान करते हैं तथा उनको समानता का अधिकार देने की बात करते हैं। केरला में सेक्स री असाइनमेंट सर्जरी के लिए सरकार ने दो लाख रूपए देने का बिल पारित किया है। इस तरह शास्त्रीय ढंग से किन्नरों के बधियाकरण करने से उन लोगों को किसी भी प्रकार की हानी नहीं होती हैं।

4.5.8. जिस्मफरोशी और किन्नर समाज

जिस्मफरोशी या वेश्यावृत्ति एक किस्म का कारोबार होता है जिसमें पैसों के लिए शारीरिक रिश्ते बनाए जाते हैं। भारत में जिस्मफरोशी अभी भी अनैतिक देहव्यापार कानून के तहत रहती है। देहव्यापार के धंधे में दिनोदिन किन्नर समुदाय भी शामिल होता जा रहा है क्योंकि उनको अपने पेट की आग बुझाने के लिए यही धंधा बचता है जिससे वे स्वयं को इस दुनिया में ज़िन्दा रख सकते हैं। कभी – कभी हमारे मन में यह सोच उभरकर आते हैं कि क्यों और कौन उन्हें इस देहव्यापार में भेजता है जबकि वे कड़ी मेहनत कर सकते हैं और पैसा कम सकते हैं। उनके ये पेशे का कारण काफी हद तक हमारा समाज ही है क्योंकि मुश्किल से ही ऐसी कोई जगह है जहाँ इन्हें इनकी योग्यता के अनुसार नौकरी मिलती है। इसका प्रमाण देनेवाली कहानी है उर्मिला शुक्ला द्वारा रचित **मैं फूलमती' और हिजड़े'**। इस कहानी में एक पुरूष अपनी गरीबी एवं पत्नी से तंग आकर ज़िस्मफरोशी में धकेल देती है। उन सभी यथार्थपरक बिन्दुओं को कहानीकार ने दर्शाने का प्रयत्न किया है। एक किन्नर फूलमती और सीमा दोनों को ज़िस्मफरोशी से बचा लेती है उसको कहानीकार ने बताने का प्रयत्न किया है सारी दुनिया जिसे हिजड़ा कहती थी। फूलमती के लिए" - वही संपूर्ण पुरूष था वह पुरूष जिसने उसे प्यार दिया, सम्मान दिया

और अधिकार दिया। उसे दल दल से बाहर निकाला। जिसमें तथा-कथित पुरूष ने धकेल दिया था उसे अब वही बता न दीदी, हिजड़ा कौन है ये था कि वो जेन मोला बेसिया बना दिस''। [95] कहानीकार ने उक्त पंक्तियों के माध्यम से असली पुरूष और किन्नर कौन है इसके अंतर को स्पष्ट करने ? का प्रयास किया है क्योंकि समाज तो अधिकतर नरभक्षी हो चुका है जो किसी को भी कभी भी कहीं पर भी फेंक सकता है।

किन्नर लोगों के लिए कोई नौकरी उपलब्ध नहीं होती । अतः उनके लिए सिग्नल पर भीख माँगना और वेश्यावृत्ति के ज़रिए पैसा कमाने का विकल्प ही रह जाता है । इस तरह से ही वे अपनी जीविका कमा सकते हैं । विनोद कुमार द्वारा लिखित **किन्नर दासी''** नामक कहानी में कहा है कि शांतनु उस पुरुष से पुछा – "कौन देगा हमें काम । हमारे लिए कोई नौकरियां भी नहीं हैं । हमें समाज में प्रवेश नहीं दिया जाता । चाहे स्कूल हो या शादी या बच्चे या केवल दोस्त बनाना हो हमें किसी भी तरह सामान्य जीवन नहीं जीने देता"। [96] किन्नर की विवशता इसमें कहानीकार ने स्पष्ट रूप में चित्रित किया है ।

'रेड सर्किल' माधव राठौड़ द्वारा लिखी गई कहानी है। इसमें किन्नरों में जिस्मफरोशी की समस्या को उठाया गया है। लेखक का कहना है कि यह कोई प्रेम कहानी है। यह केवल संवेदना की मांग करती है की हम अपने आसपास की घटना वह तथ्यों और वस्तुओं को विशेष अकार किन्नर समाज को देखने का नजरिया पूर्वाग्रह से भरा हुआ ना रखें क्योंकि इस कहानी में किन्नरों को पैसों के कारण जिस्मफरोशी मैं धकेला जाता है। उसका वर्णन इस कहानी में तत्परता से मिलता है। इसलिए कहानी का नामकरण रेड सर्किल है-" हां साहब यहां पर अच्छे ठीकठाक सब तरह के होते हैं-। जवान खूबसूरत लड़कियां विदेशी बुड्ढी औरतें और हम जैसे सबकी अपनी केटोरी और ग्राहक होते हैं। जेब में पैसों के आधार पर आपकी हैसियत होती है कि आप किस खोटे की तरफ रुख करेंगे।"[97] यह सब कार्य किन्नरों को इसलिए करना पड़ता है कि बुढ़ापे में केवल वह ताली ही बजा शक्ति है। कोई जवान ग्राहक जो सेक्स का आदि होगा वह तो इनकी और नजर उठा कर नहीं देखेगा। इन्हीं सब कारणों से भविष्य की चिंता के साथ ऐसे बुरे व्यसनों में किन्नरों को भी उतरना पड़ता है।

यह साक्षात्कार नुमा कहानी किन्नरों की दयनीय स्थिति का वर्णन करता है जीवन के सभी सच को जानने के लिए उत्सुक है। क्योंकि साक्षात्कार लेने वाला व्यक्ति पेशे से पत्रकार है जो सभी प्रश्नों के उत्तर ले लेता है। लेखक और उसे किन्नर के बीच प्रश्नों और उत्तरों का यह सिलसिला

काफी देर तक चलता रहा। अंत में लेखक ने आखरी सवाल पूछना चाहा क्या तुम खुश हो अपने इस जीवन से इस प्रश्न को सुनकर वह कि ना कुछ देर तक कुछ नहीं बोला। तब लेखक को यह एहसास हुआ कि कुछ प्रश्नों के उत्तर शब्दों से नहीं दिए जाते केवल उनके उत्तर को महसूस किया जा सकता है। बड़ी ईमानदारी से उस हिजड़े ने जवाब दिया कुछ कह नहीं"-सकती साहब, फिर भी भगवान को धन्यवाद देना चाहूंगी इस खूबसूरत दुनिया में जी रही हूं नहीं तो कहीं उस रेड साइकिल में धन चक्कर से झूमती हुई गुमनाम हो जाती। लेखक उससे एक और प्रश्न पूछता है क्या तुम्हें इस दुनिया से कोई शिकायत है "? तब उत्तर देती है " –शिकायत तो सबको होती है साहब हम तो बस यह चाहते हैं कि हमारे साथ इंसानों जैसा व्यवहार किया जाए। ईश्वर ने हमें जिस भी रूप में भेजा है उसको समाज स्वीकार कर हमारी भावनाओं को समझें।। हमारे भी प्रेम भावना है समाज हमें अपने समान समझे उपेक्षित नहीं। उसकी इन बातों को सुनकर मैं चुप था और वह गुड नाइट कह कर अपने डिब्बे की और चली गई तब लेखक को ऐसा लग रहा था कि मानो उसके आसपास और भीतर रेट साइकिल फैलता हुआ दिखने लगा उसे लगा कि कैसे हम किन्नर समुदाय को समाज से निकाल कर एक साइकिल में डाल देते हैं जहां फाइल का है उपेक्षा तिरस्कार का रेट वर्तुल 98" वास्तव में लगता है कि ट्रेन में उसके नर से मुलाकात होने के बाद लेखक का उनेक प्रति पूर्वाग्रह टूट गया होगा।

डॉ. अरविन्द कुमार की कहानी है **'सुरेखा की इमानदारी'** । इस कहानी में सुरेखा नामक किन्नर प्रारंभ में जिस्मफरोशी के कार्य में लिप्त थी। उसकी सहेलियां उसको समझाती थी लेकिन वह कई ऐसे कारण थे वह अनुचित कार्य करती थी। अलका ने सुरेखा को बताया कि उस कार्य में धन अर्जित किया जा सकता है। महंगे होटल में रहना खाना जैसी सुविधाएं मिलती है। सेक्स करने वाले लोगों के कभी नहीं,। वर्तमान समय में लोग गुदामैथुन का शौक अधिक रखते हैं अलका ने जो ग्लैमर सुरेखा के सामने" - प्रस्तुत किया था उसने उसे अचंभित कर दिया था। वीआईपी होटल का खाना भी आई पी मेहमान की खातिरदारी करना उनकी रातें गुलजार करने के एवज में पर लाइट कम से कम 2000₹से लेकर 10000₹ रुपैया तक का सौदा तय हो जाता है "। [99] सुरेखा अंतत गुरु मां के पास लौट आई क्योंकि उसके आत्मा इन सब कामों से जल चुकी थी। वह दूर रहना चाहती थी। गुरु माँ की याचना करने के बाद वह बधाई के लिए जाने लगी। जहां पर ईमानदारी से वसूली करती थी। कथाकार ने यहाँ यह दर्शाने का प्रयत्न किया है कि सुरेखा के माध्यम से बुरे व्यसनों से निकल कर आया इंसान भी अच्छा बन सकता है।

राकेश शंकर भारती जी की एक महत्वपूर्ण कहानी है **'इस ज़िन्दगी के उसपार'** इसमें किस प्रकार एक मजबूर किन्नर द्वारा दिल्ली जैसे

हाइटेक सिटी में झाड़ी में देहव्यापार करता है और अपने जीवन की गाडी को ढकेलता है इसका चित्रण किया है "–ग्राहकों को झाड़ी के पास आने का इशारा करने लगा। वह पच्चीस साल का हट्टा कट्ठा नौजवान था। साड़ी-और ब्लाउज़ में वह निहायत ही ख़ूबसूरत लग रहा था। वह सौलह श्रृंगार कर नवेली दुल्हन की ख़ूबसूरती को भी टक्कर दे रहा था। उसके होंठ पर- लाल लिपस्टिक ख़ूब शोभा दे रहा था। माथे पर एक बड़ी सी लालबिंदी भी लगा रखी थी। हाथ में रंग बिरंगी चूड़ियाँ भी धारण कर रखी थीं।-साफ़-किसी औरत की तरह ही उसके सीने पर भी स्तन का उभाड़ साफ़ झलक रहा था, जिसे देखकर कई मर्द तो आसानी से उसकी तरफ़ आकर्षित हो जाते थे। उसने नये फैशन के हिसाब से अपनी लंबी ज़ुल्फें संवार रखी थीं। दूर से देखने से ऐसा ही प्रतीत होता था कि सचमुच में कोई सुंदर युवती झाड़ी के पास खड़ी होकर पास से गुज़रने वाले राहगीरों पर लाइन दे रही है "।100

डॉ. ललित सिंगर राजपुरोहित द्वारा लिखित कहानी **'नीलोफर'** में भी किन्नर द्वारा देहव्यापार करने की समस्या का उद्घाटन किया गया है। इस कहानी के माध्यम से कहानीकार ने एक किन्नर की बाल्यावस्था की कठिनाइयों तथा उसके कारण जिस्मफरोश बनने का वर्णन किया है कि समाज और पितृसत्तात्मक उसके बचपन को खा जाती है। बचपन खत्म हो

जाता जीवन लीला समाज होने की कगार पर पहुंच जाती है। इस कहानी में रचनाकार ने ऐसे बिंदुओं का रहस्योद्घाटन किया है। जिनसे एक किन्नर बच्चा गुजरता ही है। समाज किस प्रकार एक बच्चे को सेक्स वर्कर बनाने की और धकेल लेता है। वर्तमान समय में वह चिंता का विषय है जिसको कहानीकार ने लिखा है“– उसी आदमी से मिलने जा रही हूं बाबू जिसने उस मुकाम तक पहुंचाया। एडवांस पैसे मिल चुके हैं। सबका अपना अपना-बिज़नेस तुम्हारा लिखना और मेरा खैर जाने दो,”। [101] इस अंश के माध्यम से रचनाकार ने समाज के उस दुष्टता का वर्णन किया है जिसके कारण अच्छे बच्चे भी इस निष्ठुर समाज में सेक्स वर्कर समझना नहीं चाहता है और उनकी लैंगिक विषमता के कारण अत्याचार करता है। उनके साथ गुदा मैथुन करता है।

अब सरकार द्वारा किन्नर अब सरकार द्वारा किन्नर के लिए नियमों के साथ कुछ नए बदलाव किए गए है। उसमें एक विकल्प लिंग का "ई" रखा गया है जो इन लोगोंके लिए आनंददायक समाचार है। आशा है कि इन लोगों को अब नौकरियां मिलेंगी जिससे इन्हें जीवन की इन अंधेरी राहों पर नहीं जाना पड़ेगा।

4.5.9. नकली और असली किन्नर का चित्रण

प्रयागराज के कुंभ मेले के दौरान अस्तित्व में आये किन्नर अखाड़े के बाद अब किन्नरों के उत्थान की दिशा में परिवर्तन हो रहा है। नकली

किन्नर बनकर लोगों को परेशान करने व धन उगाही करने की बातों पर रोक थाम लगाने के लिये मामला हमारे समाज में पहुंच गया है। कौन असली किन्नर है ? और कौन नकली ? इसके लिये इलाहाबाद हाईकोर्ट में याचिका दाखिल की गयी है जिसे हाईकोर्ट ने स्वीकार कर लिया है । तपस्या चौहान की कहानी **'लूट'** में नकली और असली किन्नरों के बारे में बताया गया है कि किस प्रकार नकली किन्नर समाज में लूटपाट करते हैं और आमजन का जीना दूभर कर देते हैं । बद्दुआ के नाम पर श्राप के डर से आस्थावान लोग उनको मुंह मांगी दक्षिणा, नेग और बधाई देते हैं। यद्यपि जो ये सब करते हैं वे,किन्नर नहीं, बल्कि वहीं के लड़के शराब पीने के कारण या धन कमाने के लिए ऐसे कुकर्म करते हैं। इसका प्रमाण कहानी में इस प्रकार मिलता है - "आपके साथ जिन हिजड़ों ने लूट की थी, वह असली हिजड़े नहीं थे वह तो लाल बगीची के लड़के (स्थान का नाम) थे"।[102] कहानी में तपस और मोहित नकली किन्नरों द्वारा लूट जाते हैं। उन्होंने तपस और मोहित की कार को चारों तरफ से घेर लिया था जिससे वे भयभीत होने लगे । लेकिन तपस ने हिम्मत करके मोबाइल कैमरा ऑन कर दिया और कहा - "हां उतारो कपड़े, मैं तुम्हारी वीडियो बनाकर

वायरल कर दूंगी"। [103] पुलिस को नंबर लगाते देख सभी किन्नर फ्लाई ओवर से भाग गए। जब पूर्वाग्रह टूटते हैं, तब बहुत देर हो जाती है।

किन्नर अखाड़े की महामंडलेश्वर लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी ने भी हलफनामा देते हुये कहा है कि – " बहुत से धूर्त व बहुरूपिये किन्नरों के वेश में किन्नरों के बीच शामिल हो गए हैं। वे व्यक्तिगत लाभ व अपने उद्देश्यों को पूरा करने के लिये ऐसा कर रहे हैं। ऐसे में यह बहुत आवश्यक है कि मेडिकल टेस्ट के माध्यम से असली व नकली किन्नरों की पहचान की जाये। और, असली किन्नरों को संरक्षण, उनका हक व आरक्षण दिया जाये"।[104]

इलाहाबाद हाईकोर्ट में किन्नरों के हित के लिए याचिका दाखिल कर दी गयी । इसके दौरान जस्टिस विक्रम नाथ और जस्टिस पंकज भाटिया की डबल बेंच ने मुकदमा शुरू कर दिया है और राज्य सरकार, भारत सरकार समेत किन्नर अखाड़ा आदि को नोटिस जारी कर इस बारे में उनका पक्ष जानना चाहा है। मामले में संभावना है कि किन्नरों को संरक्षण व सुविधा देने के लिये मेडिकल टेस्ट व इनका डाटाबेस सरकार अपने पास रख सकती है। परिणामस्वरूप बीते दिनों ट्रेन से लेकर अन्य स्थानों पर इनके लिये सुविधाओं का क्रम शुरू हुआ है। धार्मिक रूप से किन्नर अखाड़ा बनने के बाद राष्ट्रीय स्तर पर इनकी पहचान के लिये व

इनके पक्ष में आवाज उठाने की दिशा में अब आमूलचूल परिवर्तन हो रहा है।

4.5.10. किन्नर लोग एवं मतदान

हमारा देश भारत एक लोकतंत्रात्मक गणराज्य है, जहां जनता का शासन चलता है, जनता अपने मताधिकार का इस्तेमाल कर एक ऐसे व्यक्ति को चुनती है, जो देश के विकास करवाने के लिए योग्य हो और देश की बागडोर को कुशलतापूर्वक संभाल सके। हर एक व्यक्ति का वोट बेहद कीमती होता है, क्योंकि एक वोट भी किसी सरकार को गिराने और उसे बनाने का दमखम रखता है, लेकिन आज भी कई लोग अपने मताधिकार का इस्तेमाल करने को लेकर जागरूक नहीं हैं।

किन्नर समाज काफ़ी समय से राज्य विधानसभाओं और संसद में आरक्षण एवं मददान की मांग कर रहे हैं। अपने अनुभव की बात करते हुए शबनम मौसी कहती हैं- "मैं चुनाव जीती, क्योंकि लोग नेताओं से नाराज़ थे। मेरी जीत से मुझे समाज में कुछ सम्मान ज़रुर मिला, पर किन्नर समाज के तिरस्कार को समाप्त करने के लिए उनको समुचित प्रतिनिधित्व देने की ज़रुरत है"। 105

चुनाव आयोग के अधिकारियों के अनुसार आयोग को इस सिलसिले में कई ज्ञापन मिले। इन ज्ञापनों पर ग़ौर करने के बाद चुनाव आयोग ने महसूस किया कि समाज के एक ख़ास तब़के को क्यों बाहर छोड़ा जाए।

किन्नर समाज को वोट देने के अधिकार और चुनाव लड़ने की अनुमति देने की मांग अलग-अलग राज्यों में उठती रही है। डॉ. अखिलेश निगम 'अखिलेश' की **'मेरा हक'** कहानी में किन्नर की चुनाव के बारे में बताया गया है। इस कहानी के टाइटल के माध्यम से किन्नरों के हक के बारे में विवरण हमें मिलते हैं। इस कहानी में सौरव घोष नामक किन्नर चुनाव में भाग लेना चाहता है और अंत में वह चुनाव में जीता है।

केरल जैसे देशों में किन्नरों को मददान देने का हक है। केरल में पहली बार मददान का सुअवसर सूर्या नामक किन्नर को मिली थी।

हाल ही में हुए महाराष्ट्र चुनाव से पहले राज्य मानावधिकार आयोग को एक ज्ञापन दिया गया जिसमें किन्नरों को वोट का अधिकार ना देने को मानावधिकारों का उल्लघंन बताया गया था। चुनाव आयोग का यह फ़ैसला लगभग उसी समय आया है जब समलैंगिकों को आपसी सहमति से

शारीरिक संबध बनाने की आज़ादी देने वाले दिल्ली उच्च न्यायालय के फ़ैसले का केंद्र सरकार ने समर्थन किया है।

4.5.11. **किन्नर नाम की समस्या**

किन्नरों को विभिन्न नामों से पुकारा जाता है जिनमें प्रमुख हैं- हिंदी में 'किन्नर' या 'हिजड़ा', 'द्विलिंगी' , 'तृतीय प्रकृति' , 'किम्पुरुष' , पंजाबी में 'खुसर' , तेलुगु में 'नपुंसकुडु', 'कोज्जा' या 'मादा', तमिल में 'थिरु नंगई' , 'अरावनी', मराठी में 'छक्का' , अंग्रेज़ी में 'ट्रांसजेंडर' या 'थर्ड जेंडर' आदि। समाज में किन्नर और हिजड़ा शब्द पर विवाद है। किन्नर शब्द का प्रयोग , जो कि शारीरिक रूप से अक्षम व्यक्तियों के लिए हो रहा है। इससे हिमाचल जनता बहुत व्यथित है। हिमाचल की जनता ने इसका बहुत विरोध किया। इस सन्दर्भ में एसहरनोट की कहानी .आर. **'किन्नर'** बहुत प्रासंगिक लगता है। इस प्रसंग की व्याख्या एस हरनोट ने.आर.इस कहानी में विस्तार से किया है –" हिमाचल के जनजातीय जिला किन्नौर को कालान्तर में 'किन्नर देश' के नाम से जाना जाता था। इसके निवासी 'किन्नर' कहलाते थे। आज़ादी के बाद हिमाचल प्रदेश का जब पुनर्गठन हुआ तो यह प्रदेश का स्वतंत्र जिला बना और इसी आधार पर इसका नामकरण

हुआ 'किन्नौर' I यहाँ रहने वाली जनजाति आज भी 'किन्नर और किन्नौरा' से जानी जाती है जिसे 1956 में भारतीय संविधान की अनुसूची में शामिल किया गया था I परंतु जब से किन्नर शब्द का प्रयोग 'हिजड़ा' समुदाय के लिए होने लगा है, किन्नर जनजाति के लिए अस्मिता का घोर संकट उत्पन्न हुआ है I मैं हिजड़ा समुदाय का बहुत आदर और सम्मान करता हूँ" I 106

इस कहानी के माध्यम से वे किन्नर प्रदेश के नाम से विख्यात एक स्थान और जाति का विरोध दर्जा कराते हैं I क्योंकि उस स्थान के नागरिक अपने नाम के आगे गर्व से किन्नर लिखते हैं I साहित्यकार भी ट्रांसजेंडरों या तृतीयलिंगीयों को किन्नर कहते हैं I एस हरनोट .आर. चाहतेहैं कि किन्नर नाम का प्रयोग ट्रांसजेंडरों के लिए हो जिससे उस स्थान पर निवास करने वाले नागरिकों का अपमान न हो जो लोग अपने नाम के आगे किन्नर लिखने में गर्व की अनुभूति करते हैं I

'किन्नर' कहानी के कथ्य में बेलीराम किन्नर पी .डी.एच.की उपाधि प्राप्त कर चुका I वह पंचायत का नेता है और वह गर्व के साथ स्वयं के

नाम के सरनेम की जगह पर किन्नर लिखता है। लेकिन उसको बहुत अपमान प्रतीत होता है जब लोग उसको सचमुच किन्नर समझ लेते हैं। यद्यपि वह किन्नर नहीं है, जिसको एस हरनोट ने कहानी के माध्यम .आर. - से बताया है“मैंने आपके लेख पढ़ें हैं। यह सचमुच हमारा अपमान है। संविधान का भी, जिसमें हमारी जनजाति किन्नौरा और किन्नर दर्ज है।”[107] बेलीराम किन्नर कई राजकीय स्थानों पर अपनी जनजाति को लेकर विरोध दर्ज करा चुका है।

एक संविधान सम्मत जनजाति को किन्नर समझा (ट्रांसजेंडर) जाता है जबकि वह कई बार ट्रांसजेंडर और किन्नर के अंतर को समझाने में विफल रहा है। एक बार वह टी में लोकसभा चुनाव .वी.के परिणाम देख रहा था। जहाँ पर शबनम मौसी चुनाव जीत गयीं जो किन्नर समुदाय से सम्बंधित थी। यह सब देखकर सहसा बेलीराम किन्नर को भी धक्का लगा कि वह भी किन्नर है। क्योंकि टी पर शबनम मौसी किन्नर लिखा .वी. - हुआ आ रहा था “शबनम मौसी लोकसभा सदस्य का चुनाव जीत गयी है और किन्नरों का चार दिवसीय महासम्मेलन शुरू हो गया है .... किन्नरों का इतना बड़ा आयोजन हो और उसे पता तक नहीं। ऐसा कैसे हो

सकता है लेकिन जब पूरे समाचार देखे तो दंग रह गया !! सारे हिजड़े तरह – तरह के लटकों – झटकों के साथ अपनी – अपनी टोलियों में सम्मलेन में भाग लेने आए थे । जो किन्नर लोक सभा चुनाव जीता था उसे शबनम मौसी नाम से पुकारा जा रहा था । पहले तो उसकी समझ में नहीं आया, लेकिन थोड़ी देर बाद समझ गया कि यह सम्मलेन ट्रांसजेंडरों का है न कि किन्नरों का ।"108

बेलीराम की मानसिक स्थिति बदल गयी और वह स्वयं को शंका की दृष्टि से देखने लगा कि वह ट्रांसजेंडर है या कुछ और क्योंकि वह तो अपने नाम के आगे अपनी जनजाति का उपनाम गौरवपूर्ण शब्द किन्नर लिखता था । फिर वेद – पुराण , महाभारत सब जगह किन्नरों का वर्णन भी मिलता है । सहसापूर्ण स्थिति में वह असमंजस में था जबकि वह पूर्ण रूप से एक सम्पूर्ण पुरुष था उसकी प्रेमिका भी सुनम थी जिससे वह शादी रचाना चाहता था ।

इस कहानी में भारतीय राजनीति के सभी मुख्य बिंदुओं को उठाया गया है । उसके अलावा भारतीय राजनीति के सफ़ेद और रिमाह रंग को दिखाया गया है कि किस प्रकार हिमाचल – प्रदेश की राजनीति की

पारंपरिक टोपी का रंग बदल रहा है और राजनीति भी उसी ओर झुक रही है जिसका दबदबा साफ़ झलक रहा है - "बेलीराम ने इस तरफ सोचना ही छोड़ दिया। उसे तो अपने काम से कम था। वह जहाँ अपने इलाके को विकास से जोड़ने के लिए आतुर था, वहां पूरे किन्नर समुदाय पर आए संकट के लिए लड़ना था। शहर जहाँ हर घर में टीवी थे। अनेक समाचार पत्रों का मायाजाल था , वहां तो इस बात को लेकर अवश्य ही बवाल मचा होगा। कितने ही इस क्षेत्र के लोग वहाँ बसे है। चाहे हरी टोपी वाले हो या केसरिया टोपी वाले, यह सवाल सभी का है। अपने इतिहास और संस्कृति का।" [109]

आज भी किन्नर शब्द को लेकर काफी मत प्रचलन में हैं। इस शोध प्रबंध में किन्नर शब्द का प्रयोग किया गया है जिसका मतलब किन्नौर देश के जनजाति से नहीं बल्कि ट्रांसजेंडर से है।

4.5.12. किन्नर के साथ बलात्कार

शुरु से इज्जत औरत का गहना रही है। इज्ज़द महिला के अस्तित्व से भी ज्यादा मायने रखती है। इसकी कीमत सिर्फ एक महिला को ही पता

होती है। इज्ज़द शब्द पर महिलाओं का संसार टिका है। जिस प्रकार पुरुखों की सम्पति या आपका सबसे कीमती सामान कोई चुरा कर ले जाने से समाज तुच्छ निगाहों से देखता है उसी प्रकार इज्जत लूटने की,पीड़ा का अनुभव तो मात्र उस लड़की को होती है जिसके साथ बलात्कार हुआ हो । बलात्कार किसी भी लड़की के लिए मौत से पहले मौत होती है । आज किन्नरों के साथ भी बलात्कार हो रहा है जिसका चित्रण डॉ. पद्मा शर्मा ने अपनी कहानी **'इज्ज़त के रहबर'** में किया है । इस कहानी में बलात्कार की घटना श्रीलाल के परिवार की लड़की प्रतिभा के साथ होती है जिससे सोफिया तनतना जाती है और रौद्र रूप धारण कर लेती है । प्रतिभा का बलात्कार करते समय बबलू ने हिंगा को देख लिया अब रिश्ते निभाने के लिए और अपनी वफदारी तथा सामाजिक संबंधों का निर्वहन करने के लिए सोफिया हिंगा को सबक सिखाना चाहती है और उसके साथ ऐसा व्यवहार करना चाहती है जो समाज में एक उदाहरण बन जाए तथा कोई ऐसा कुकर्म करने से पहले एक बार अवश्य घटना को याद करे और हो सकता है उसके कदम रूक जाए और किसी बच्ची का जीवन बच सके - " हाँ यही सच है कि ये काम हमने किया है लेकिन अपनी सख्या बढ़ाने के लिए नहीं, बल्कि तुम जैसे भीरु लोगों में चेतना जगाने के लिए । जिस दिन बलात्कारियों को ये सज़ा मिलने लग जायेगी उस दिन से कोई भी गुंडा

औरतों की इज्जत लूटने की हिम्मत नहीं कर सकेगा" ।[110] इस प्रकरण के माध्यम से रचनाकार सोफिया के माध्यम से सन्देश देना चाहती है कि किसी भी स्त्री के साथ ऐसा कुकर्म न करो । जिस कारण उसके परिवार की इज्जत मान – सम्मान मिट्टी में मिल जाए और पीड़ित लड़की का भी जीवन नरक बन जाए सोफिया ने समाज को कठोर संदेश दिया है और समाज के प्रत्येक वर्ग को जागरूक करने के लिए यह कदम उठाया है तथा देश की क़ानून व्यवस्था पर भी प्रश्न चिन्ह लगा दिया है कि गांव – शहर में बलात्कार हो जाता है और पुलिस को कुछ पता ही नहीं चलता है वह दलाली करने में व्यस्त नज़र आते हैं । ऐसे कुकर्मियों का समाज को भी कड़ा विरोध करना चाहिए क्योंकि इज्ज़त सबकी समान है और इज्ज़त के रहबर सबसे अच्छे किन्नर ही है !

डॉ. सुमा टी. रोडनवर द्वारा रचित कहानी है **'मेरी प्रिय सजनी चंपावती'** । इस कहानी के कथ्य में एक ऐसे बच्चे का वर्णन है जिसको बचपन में ही कोई अपनी यौन ईच्छाओं का शिकार बना लेता है। फिर वह स्वयं किन्नर समझने लगता है, क्योंकि उसकी मानसिकता पर बुरा प्रभाव पड़ता है और मानसिक तौर पर वह किन्नर बन जाता है और अपना नामकरण चंपावती के नाम से करा लेता है । चाइल्ड एब्यूज की घटनाएं

देश में उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है जिसके कारण ही अनेक बच्चों की मानसिक दशा बिगड़ रही है। वह हमेशा इस डर में जीवन व्यतीत कर रहा है। लेखिका ने इस कहानी के माध्यम से समाज के काले चेहरे को उजागर किया है। चंपा के अनेक लोगों से यौन संबंध थे जिसमें जमींदार का बेटा भी शामिल है जिसके कारण चंपावती भी एड्स जैसी लाइलाज बीमारी की चपेट में आ गयी। इन्हीं सभी कारणों से वह भगवान से शिकायत ही करती है "अब मैं ऊपर जा रहा हूँ। लेकिन भगवान अगर ऊपर मुझे कहीं मिले तो जरूर पूछूंगा................ स्त्री पुरुष की तरह किन्नर भी आपने ही बनाया है तो किन्नरों के साथ ऐसा भेदभाव क्यों ? तुम उसे जीने नहीं दिया इंसान की तरह जिंदगी बसर नहीं कर सकता है? क्यों उसे अपना जीवन गुजारने के लिए सड़कों पर ट्रेन बसों में भीख मांगना पड़ता है? क्या वह आम इंसान की तरह पढ़ लिख कर नौकरी नहीं कर सकता?" [111]

आज भी किन्नरों के साथ बलात्कार हो रहा है। केरल जैसे देशों में 'ट्रांसजेंडर कल्याण बोर्ड' का आयोजन सरकार द्वारा किया गया है। इसका लक्ष्य किन्नर को न्याय दिलाना है।

4.5.13. किन्नरों में जाति, धर्म की भावना

समाजविज्ञान के विद्वान गोविंद सदाशिव घुर्ये के अनुसार – " भारत एक जटिल देश है"। [112] इसका कारण यह है कि जाति के आधार पर बांटे गए केवल एक ही देश भारत है। इसलिए इतिहास की दृष्टि से भी देखा जाए तो भारतीय समाज के विभाजन भी जाति के मुताबिक होते हैं। किन्नर भी इसी जाति व्यवस्था का शिकार है।

हम जानते हैं कि जाति के अनुसार चार प्रकार के वर्ग होते हैं। उसमें सबसे नीच जाति के रूप में दलित को माना जाता है। एक ओर किन्नर को भारतीय समाज में ईश्वरीय परिवेश देता है तो दूसरी ओर दलित से भी नीचे का स्थान दिया जाता है। एक दलित समुदाय के किन्नर अपने ही समुदाय में आते समय उसको जाति के नाम पर अनेक पीडाओं का सामना करना पड़ता है। किन्नर समुदाय में जाति के नाम पर जो असमानता दिखाई पड़ती है उसको परखना ज़रूरी है। इसका प्रमाण सूरज बडत्या कृत **'कबीरन'** नामक कहानी में देखा जा सकता है। इस कहानी में कबीरन एक अछूत परिवार में जन्म लेता है। उनके प्रति दया की अभिव्यक्ति के

अतिरिक्त उनकी आत्मीयता को चिह्नित करते हुए लिंगीय आधार पर सामान्य समझे जाने वाले समाज, जाति, धर्म और स्त्री पुरूष के अधार-भाव पर प्रहार करती है। अछूत-पर हो रहे सामाजिक भेदत परिवार में जन्मे सुमेध को बहुत समय बाद पता चलता है कि उसकी दैनिक यात्रा में बहुत ही सुरीले स्वर में गाने वाली सुंदरी कबीरन उसके माता पिता की-अंलिंगी संतान है। जिसे दूसरे उभयलिंगी बच्चों की ही भांति जन्म लेने के बाद सामाजिक भय से त्याग दिया गया था। सुमेध अनजाने में ही उससे स्नेह का भाव रखता था। लेकिन जब उसे हकीकत का पता चलता है तो वह चाहता है कि कबीरन फिर से परिवार में लौट आए जिसको वह मना कर देती है।

डॉ. महेंद्र प्रताप सिंह जी ने अपनी कहानी **'किन्नर का सम्मान'** में जाति के बारे में बताया है। कहानी में बाबूजी नामक पात्र किन्नरों के प्रति अपने भाव को व्यक्त करते हुए कहते हैं कि अब समाज तेज़ी के साथ बदल रहा है –" मैं उपेक्षित जाति के अनेक संतों एवं तपस्वियों को जानता हूँ जिनका सभी समुदाय के लोग चरण वंदना एवं करते हैं। कहा भी जाता है साधु – संतों की कोई जाति नहीं होती। इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए किन्नर साधु – संतों की भी स्वीकार्यता समाज में स्थापित करनी होगी। कोई भी

विवेकशील मानत यह नहीं कहेगा कि किन्नर सम्मान के पात्र नहीं हैं किन्तु रूढ़ियों एवं परम्पराओं को टूटने में समय लगता है” I [113]

इस कहानी के माध्यम से कहानीकार समाज को संदेश देना चाहते हैं कि मानसिकता बदलने से सब कुछ सामान्य हो सकता है। अंततः वह किन्नर भी इंसान ही है।

4.5.14. किन्नर कहानी में मित्रता

दोस्ती एक अनमोल रिश्ता है जिसके जैसा कोई नहीं है I मनुष्य अपने संपूर्ण जीवन में कई रिश्ते निभाता है I एक पुत्र या पुत्री एक बाप , पति या पत्नी इत्यादी कई रिश्ते इंसान सामाजिक परिवेश में , एक माँ , निभाता है I दोस्ती का रिश्ता न जन्म से होता है और न ही विवाह के बाद होता है I यह रिश्ता अटूट विश्वास और प्रेम से आता है I इसका प्रमाण देने वाली कहानी है सुभाष अखिल द्वारा लिखित **‘दरमियाना’** I यह कहानी तारा नाम के किन्नर और लेखक की कहानी है। इस कहानी की कथा में तारा तथा लेखक के मध्य बहुत नजदीकियां बढ़ चुकी हैं I इस कहानी का एक अन्य पात्र है आशु I आशु भी एक किन्नर है I आशु और तारा दोस्त हैं I तारा हमेशा आशु को समझाने का प्रयत्न करती है तथा उसकी गन्दी आदतों को बदलकर मित्रता के वास्तविक मूल का सन्देश देना चाहती है लेकिन

आशु उसकी बात नहीं मानता है और अपनी मन मर्ज़ी करी है l जिस कारण तारा को अथाह गहराइयों से पीड़ा होती है क्योंकि तारा आशु के साथ संवेदनाओं से जुड़ी हुई है और उसकी दिक्कतों को स्वयं की दिक्कत समझती है l इस प्रकार तारा और आशु किन्नरों के माध्यम से किन्नर के मित्रता का भाव भी लेखक हमारे साथ प्रस्तुत किया है l

'एक मोड़ ये भी' कहानी में भी मित्रता का एक रूप हमें देखने को मिलती हैं l कहानी में एक लड़की है जिसका नाम प्रतिज्ञा है ,l बाद में वह समीर नाम के किन्नर के रूप में जानी जाती है l इस कहानी में प्रतिज्ञा के दो दोस्त भी हैं जिनका नाम रघु और सोफिया है l इन तीनों ने अपना बचपन एक साथ बिताया और तीनों आपस में इतने गहरे मित्र थे कि एक साथ खेलना – खाना , पढ़ना , पीना और सभी दैनिक क्रियाएं साथ – साथ करते थे l इस तरह मित्रता का चित्रण कहानी में इस प्रकार दी है – "एक साथ पढ़ते थे , हम एक साथ खेलते थे और सब एकसाथ करते थे" l [114]

4.5.15. किन्नर की उपलब्धियाँ

शबनम मौसी का नाम देश की पहली किन्नर विधायक के तौर पर इतिहास में दर्ज है l इन्होंने अपने एक साक्षात्कार में कहा था कि - "लोग अपने कुत्ते को पालते हैं l उसको कितनी इज़्ज़त देते हैं l कितने प्यार से

उसको खाना खिलाते हैं। गाड़ियों में बिठाते हैं। उसको बिस्तर पर सुलाते हैं। वे तो एक कुत्ता है जब आप उसे जीने का अधिकार देते हैं तो एक किन्नर को क्यों नहीं?" [115]

मनुष्य के रूप में जन्म लेने के बावजूद भी किन्नर दयनीय जीवन जीने के लिए मजबूर हैं। किन्नरों के साथ होने वाले सामाजिक भेदभाव से उनका मनोबल टूटता है। उनके लिए न रोज़गार की व्यवस्था है और न ही उनकी खुद की कोई परिवार जैसी इकाई है। समय समय पर दुनिया-भर के विभिन्न मंचों पर मानवाधिकार उल्लंघन और मानवाधिकारों की बदतर स्थिति की चर्चा की जाती है, लेकिन कई मूलभूत सुविधाओं से वंचित और समाज की प्रताडऩा के शिकार किन्नरों की स्थिति पर बहुत कम लोगों का ध्यान जाता है।

देश की आजादी के 75 साल बीत गए, लेकिन आज भी हमारे समाज का एक तबका आज़ादी के बाद मिले कई अधिकारों से वंचित है, जिन्हें पाने के लिए वह खुद ही व्यवस्था से लड़ रहा है।

लक्ष्मी नरायण त्रिपाठी एक टीवी कलाकार, भरतनाट्यम नर्तिका और सामाजिक कार्यकर्ता हैं। वे एक ट्रांसजेंडर हैं, जो किन्नर समुदाय के हित में कार्य करती हैं। लक्ष्मी बिगबॉस सीज़न 5 की प्रतिभागी भी रह चुकी हैं। टीवी शो "सच का सामना", "दस का दम" और "राज़ पिछले जन्म का" में भी भाग लिया है । वे सेक्शुअल माइनॉरिटी के समर्थन और विकास के लिए काम करने वाली संस्था ‘अस्तित्व’ की संस्थापक और अध्यक्ष हैं। लक्ष्मी 2008 में संयुक्त राष्ट्र संघ में एशिया पैसिफिक का- प्रतिनिधित्व करने वाली पहली ट्रांसपर्सनथीं ।

मानबी बंदोपाध्याय भारत की पहली ट्रांसजेंडर कॉलेज प्रिंसिपल बनने के बाद किन्नर समुदाय एक बार फिर चर्चा में है। उन्होंने इसी साल जून में पश्चिम बंगाल के कृष्णानगर विमेंस कॉलेज में प्रिंसिपल का पद संभाला था। समाज के बहिष्कृत समुदाय से होने के बावजूद प्रिंसिपल के पद तक पहुंचने के लिए उन्हें सराहना तो मिली, पर बरसों की प्रताड़ना और परेशानियों के बाद। ये सब किन्नरों के उन्नमन के उदाहरण हैं। इक्कीसवीं शती के हिंदी कहानीकारों ने भी इस विषय पर थोड़ा कुछ लिखने का प्रयास किया है। बंदना पूर्णतांबेकर द्वारा लिखी गई यह कहानी '

जीवनार्थ साहस की आंधी' कुमुद नामक किन्नर की कहानी है। इस कहानी में एक किन्नर पात्र है जो एक लड़की को किसी कचरे से उठाकर पालती है और उसका नाम बरखा है तथा जीवन की कशमकश सहित अनेक कठिनाइयों और संघर्ष से लड़कर उस कचरा बीनने वाली लड़की को ऑफिसर बना देती है। कहानी उस व्यक्ति की है जो किन्नर है और लिंग भेद का शिकार है। बेटी बरखा को अवार्ड जब भी मिला तो उसने उसका श्रेय अपनी माँ कुमुद को दिया अवार्ड माँ के हाथों में रखा। वह माँ को सीने से लग कर गर्व महसूस करती है ।

'अपना दर्द' कहानी की रचनाकार युवा लेखिका सफिया सिद्दीकी है । इस कहानी के माध्यम से उन्होंने किन्नर समाज के व्यक्ति को एक रोजगार से जोड़ने का प्रयत्न किया है। जिससे उसका जीवन बदल चुका है और वह अपने समाज के लोगों का जीवन बदलना भी चाहता है किन्नर की भूमिका में राजू पुरुष किन्नर है जो अनेक कारणवश किन्नरों की टोली में शामिल हो गया। जहां उसने गुरु मां से जिद्द कर के श्रृंगार का कार्य सीखकर रोजगार से जुड़ गया। राजू की मेहनत और लगन के कारण उसको कार्य के प्रति निष्ठा के कारण उसके प्रसिद्धि मिल गई जिसके कारण वह अपने समाज और अपने गुरु मां पारो को धन्यवाद हमेशा ज्ञापित करता है।

नीतू सिंह भदौरिया की कहानी है **'इंसानी ज़मीन'** । इसमें विधु नामक एक किन्नर की समाज के साथ लड़ने की कथा को चित्रित किया गया है। विधु की रूचि के अनुसार उसकी डांस क्लास में भर्ती होती है। डांस अध्यापक बहुत सकारात्मक तरीके से उसका स्वागत करता है। अध्यापक कहता है कि – " मैं तुम्हारे जैसे व्होंहार शिष्य को खोना नहीं चाहता तुम कल से आओ" । [116] इस तरह वह डांस में अपनी क्षमता दिखाता है। इस तरह के अध्यापक गण हमारे समाज में ज़रूर होंगे। इन लोगों की वजह से किन्नर बच्चे जीवन में आगे बढ़ जायेंगे।

'किन्नर का सम्मान' कहानी में लेखक महेंद्र प्रताप सिंह ने किन्नरों की शिक्षा के बारे में तथा उनके सम्मान के बारे में भी बताया है। वैसे तो शिक्षा , राजनीति ,उद्योग एवं अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्रों में धीरे धीरे किन्नरों-का प्रवेश हो रहा है। अनेक स्थलों पर भी वे अपने परिश्रम से कार्यरत हैं लेकिन आज भी उनको सम्मान नहीं मिल पाया है जो उन्हें बहुत पहले मिल जाना चाहिए था।

'किन्नरों की प्रतिभा' कहानी का लेखक रचना सिंह 'रश्मि' हैं। सामाजिक पृष्ठभूमि पर लिखी गई यह कहानी प्रेरणादायक प्रतीत होती है जिससे किन्नरों की प्रतिभा का भी पता चलता है। इस कहानी में समाज

का बिगड़ा एवं विकृत रूप सामने आता है जिसमें प्रतिभा को एक झाड़ी से शर्मीली नामक किन्नर उठाती है । उसे वह आई एस बना देती है।.पी. प्रतिभा जन्मजात किन्नर होती है। वह किसी लिंग भेद पर निर्भर नहीं करती है। बस परिस्थितियाँ उसको सांवारती और बनाती हैं । प्रतिभा जब आई एस की अधिकारी बन गई तो उसने सबसे पहले मीडिया में अपनी.पी. माँ, गुरु माँ, सभी टोली वालियों का परिचय कराया और गर्व से कहा कि इन्होंने मुझे पाल पोसकर आज देश का प्रथम अधिकारी बनाया है। मैं इनका उपकार जीवन भर नहीं भूल सकती जबकि जो मेरी जैविक माँ थी, उसने जन्म देकर मुझे झाड़ियों में फेंक दिया था - "मैं सभ्य समाज की पाप की निशानी हूँ जिसने रेलवे के किनारे झाड़ियों में मरने के लिए फेंक दिया। बचपन से लेकर अब तक यह सब साफ की तरफ मेरे साथ खड़े हुए हैं मेरी मां कभी भी किसी के सामने इसलिए नहीं आती थी कि लोग मुझ पर हंसे ना। बाप सब कुछ है I मेरी शर्मिली का हाथ पकड़कर बोली -न पुरुष है न महिला । इन सबसे ऊपर यह इंसान है। इनमें इंसानियत थी। जो मेरी रोती हुई आवाज से इनका दिल पिघल गया। किसी की परवाह किए बिना मुझे सीने से लगा लिया। मुझे पढ़ा लिखा कर आज इस लायक बनाया कि आज आप मेरा इंटरव्यू ले रहे हैं। मैं आई.पी.एस. सिर्फ अपनी

मां की वजह से हूं। मुझे गर्व है मेरी परिवारिश हिजड़ों ने की है। मुझे सारे संस्कार मिले हैं, जो आम मांबाप अपने बच्चे को देते हैं-" । 117

'पद्मश्री थर्ड जेंडर' विनोद कुमार दव की कहानी है जिसके कथ्य में एक किन्नर का परिश्रम और उसे पद्मश्री मिलने की कहानी है। लेकिन वह किन्नर का जन्म होते ही रेवती की सास ने उसको गालियाँ दी। उसके परिवार ने उस बच्चे को किन्नरों की टोली को सौंपना चाहा। इसी कारण रेवती अपने बच्चे को लेकर एक पढ़े -लिखे, जागरूक परिवार में रहने लगती है। वहाँ पर वह महिधर को शिक्षा देती है और डॉ जयपाल मिश्रा . की सहायता से उसको एक पर्वतारोही बना देती है तथा कुछ समय बाद महिधर को पर्वतारोहरण में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने पर राष्ट्रपति द्वारा पद्मश्री सम्मान मिलता है जिसका वर्णन कथाकार ने अपने कथ्य के माध्यम से किया है तथा उसमे लैंगिक भेदभाव का भी विरोध किया है-: " पद्मश्री पुरस्कार के लिए नाम पुकारा पर्वतारोही वह इधर तास लाइव की गड़गड़ाहट से राष्ट्रपति भवन गूंज उठा। दुनिया के सात सबसे ऊंचे पर्वत शिखरों पर चट कर तिरंगा फटराने वाल बड़ी महीधर ने किन्नरों का मस्तक गर्व से ऊंचा कर दिया था। रेवती पल्लू से अपने आंसू पोंछते हुए उस रात को याद कर रही थी। जिस रात उसने अपनी जिंदगी का सबसे कठिन फैसला लिया था"। 118

'आदर्श' कहानी का रचनाकार रवि कुमार गोड है । यह सामाजिक पृष्ठभूमि पर लिखी गई कहानी है जिसमें किन्नर का न्यायाधीश बनने का चित्रण मिलता है। सहेलियाँ अपनी जागरूकता के माध्यम से समाज का दृष्टिकोण बदलने का जोखिम लेती है। वह समाज में जागरूकता के अनेक कार्य करती है जैसे एक किन्नर बच्चे को फेंक दिया जाता है। लेकिन चारो सहेलियाँ प्रियांशी,शिवांशी,दिव्यांशी और विनांशी उसको उठा लेती हैं और उसका पालन-पोषण करती हैं । उसको शिक्षा देती हैं तथा उसे विश्वजीत नाम देती हैं । वह अनेक कठिनाइयों का सामना करके जज बन जाता है। यह प्रेरणादायक कहानी है जिससे सभ्य समाज किन्नरों के प्रति नजरिया बदल कर उनको मुख्य धारा में सम्मिलित करके देश और समाज को बदल सकता है। कथाकार ने मानसिकता को बदलने और सेवा भाव के जज्बे को इस कहानी के माध्यम से उजागर किया है-: "कुछ सालों के बाद विश्वजीत और अपनी सूझ बूझ और मेहनत निष्ठा के बल पर सुप्रीम कोर्ट का मुख्य व्याधि न्यायाधीश बना और सुप्रीम कोर्ट का ही नहीं बल्कि पूरे विश्व का पहला किन्नर न्यायाधीश बनने का गौरव हासिल किया लोगों की सोच को बदलना है तो अच्छे कार्यों से लगन और निष्ठा से भी उसे भी बदला जा सकता है"[119]

इस तरह की कहानियों पर विचार करते समय यह पता चलता है कि किन्नर में हुनर है। अगर हम उसको मदद करेगा तो वह समाज के कई स्थानों में पहूँचेगा।

प्रसिद्ध रचनाकार कुसुम अंसल द्वारा रचित कहानी है **'ई मुर्दन का गाँव'**। यह एक सामाजिक कहानी है जिसका मुख्य पात्र प्रवासी किन्नर बिली है जो एक संपन्न परिवार से संबंध रखता है। जब बिली के बारे में किन्नरों को पता चलता है तो वे बिली के घर आ जाते हैं तथा बिली को साथ ले जाने के लिए लड़ाई झगड़ा करते हैं। बिली के माता – पिता उसको किन्नरों के साथ नहीं भेजना चाहते थे। क्योंकि वह टोली की नारकीय ज़िन्दगी से भलि–भांति परिचित थे। अंततः किन्नरों और बिली के माता – पिता में समझौता हो जाती है। उसके लिए हर माह कुछ धन दिया करते थे और किन्नर भी शांत रहते थे -"परंतु हर महीने की पहली तारीख को रिक्शा पर चढ़कर आती उन औरतों   का सिलसिला ज़ारी रहा। चाची का आते – जाते चाचा का उन्हें नोट पकड़ाने का क्रम भी निरंतर कुछ वर्ष चलता रहा।"[120] इसी के साथ – साथ चाचा – चाची ने बिली को विदेश भेज दिया जहाँ उसने फैशन डिज़ाइनिंग का कोर्स कर लिया और बड़ा

डिज़ाइनर बन गया। इसकी धूम फैशन जगत में काफी बन गयी थी और उसके किन्नर होने का बाहरी दंश लगभग खत्म हो गया था। वह शोहरत भरी ज़िन्दगी गुजार रहा था। लेकिन न ही वह मर्द था और न ही औरत। यह पीड़ा अक्सर उसको तकलीफ देती थी। फिर भी वह एक प्रोफेशनल होने के नाते इस दर्द को भूलने की कोशिश करता था। नाम कमाने और प्रसिद्धि पाने की दौड़ में वह व्यक्तिगत जीवन का समय ही नहीं बचने देता था-: "उनकी रूट्स तो इंडिया में हैं तभी....इतने साल बाद पेरिस से लौटकर एक भव्य शो दिल्ली में ओर्गानाइज़ किया है....– ही इज वेरी शाई वह अपने बचपन के बारे में कुछ नहीं बताना चाहते ...., बस ए स्विस – सूट उनके बचपन की किसी याद के तहत उन्होंने डिज़ाइन किए हैं।" [121]

यदि कोई किन्नर निम्न वर्ग निर्धन होता तो वह तो किन्नरों की टोली में बधाई माँग रहा होता। उनके साथ रहकर अपना जीवन यापन करता। इस क्षेत्र में भी उच्च और निम्न का अंतर साफ़ झलकता है। बच्चे को यह पता नहीं है कि वह किस लिंग में पैदा हुआ है। लेकिन परिवार किसी भी बच्चे को बदलने का कार्य करता है। बिली के परिवार ने जागरूकता के साथ

कदम उठाया और बिली को नारकीय जीवन से बचाकर एक कामयाब, शोहरत मंद व्यक्तित्व बना दिया।

'विकास का गर्भपात्र' एक सामाजिक कहानी है। इसके रचनाकार दीपांकर पाठक है। यह एक लड़के की कहानी है जिसका नाम है विकास जो कि एक किन्नर है। इस कहानी में विकास के माध्यम से बताया गया है कि जीवन में सभी प्रकार के ऐशो आराम, धन, ऐश्वर्य हो और मर्दानगी न हो तो व्यक्ति स्वयं कितना खोखला होता है। उसको वही समझता है, जबकि समाज की दृष्टि किन्नरों के लिए भयावह है वह किसी से छिपा नहीं है। विकास बाल्यावस्था से ही लड़कियों के खिलौने और कपड़ों में रुचि रखता था। वह अपनी बहन का फ्रॉक पहन लेता है जिसको रचनाकार ने दर्शने का प्रयत्न किया है - "बस बहन के साथ नहीं बनती, क्योंकि वह बहन के फ्रॉक खुद ही पहन लेता है, जिसे लेकर आए दिन दोनों भाई बहनों में जंग छिड़ जाती है"। [122] ऐसे ही विकास का जीवन चलता रहता है। फिर मेहनत करके विकास जिला अधिकारी बन गया। स्वयं को विकास ने प्रेमिका रखने का भी स्वांग रचा। ऐसी घटनाएं आम होती हैं जो समाज में हो जाती हैं।

4.5.16. किन्नर से जुड़ी अंधविश्वास

अंधविश्वास का अर्थ – बिना सोच – समझे किसी पर विश्वास करना। वह विश्वास किसी मनुष्य पर हो सकता है किसी विचार पर हो सकता , किसी परंपरा या संस्था या धर्म में हो सकता है , है। जैसे कोई माता अपनी संतान के विरूद्ध कुछ भी सुनना नहीं चाहती उसी प्रकार अंधविश्वा ,सी अपने विश्वास के विरूद्ध कुछ भी सुनना नहीं चाहता। किन्नर के साथ भी समाज में अनेक प्रकार के अंधविश्वास फैली जाती है। अंधविश्वास के कारण लोग किन्नरों के आशीर्वाद को शुभ मानते हैं, उन्हें धनधान्य देते हैं, भले ही वे किन्नर लोगों से जोरजबरदस्ती करते हों, अश्लील फब्तियां कसते हों। किसी बच्चे का जन्म हो या कोई शुभकार्य, जैसे शादी, मुंडन, घर का मुहूर्त, ये किन्नर जबरदस्ती तालियां बजाबजा कर घर में घुस आते हैं और हजारों रुपयों की मांग करते हैं। न देने पर अश्लील फब्तियां कसते हैं। इतना होने पर भी लोग इन्हें पैसे व दानदक्षिणा देते हैं ताकि इन की बद्दुआ न लगे। यह अंधविश्वास सदियों से हमारे समाज में चलता आ रहा है। इसका प्रमाण कई कहानियों में मिलती हैं। **'दापा'** कहानी डॉ. दिलीप मेहरा द्वारा प्रेषित है। इस कहानी का कथ्य अंधविश्वास रूढ़िवादी और जड़ता को आईना दिखाता है। समाज में एक लोकोक्ति काफी प्रसिद्ध

है कि किन्नरों की बद्दुआ नहीं लेना चाहिए। बल्कि उनकी मुंह मांगी बधाई या दे देना चाहिए। यदि वह श्राप दे देंगे तो परिवार का नाश हो जाएगा। यह सब मध्यमवर्गीय या अति पिछड़े समाज में पाया जाता है। देश के नागरिक इस को मानते हैं। इस कड़वे सत्य को रचनाकार ने उजागर किया है। तथा इस जड़ता से निपटने का कारगर तरीका भी बताया है।

यदि श्राप से ही सब कुछ होता तो हम अपने दुश्मनों को किन्नरों से श्राप दिलवाकर मरवा देते। रिक्शा में तन्ना भाई ने सलोनी को बताया कि-" मुझे मालूम था कि हमें नंगे होने की कोई नौबत नहीं आएगी और गांव वालों पर मुझे पूरा भरोसा है कि वह कभी भी हम लोगों पर हमला नहीं कर सकते। वे हमें देवदूत मानते हैं फिर भी इन्हें डरना तो पड़ता है। अगर वहां से बिना पैसे लिए निकल गए होते तो फिर कर लो कमाई फिर तो कोई भी व्यक्ति कभी भी नहीं देगा जब तक आस्था और विश्वास है तब तक ही पैसे देंगे नहीं तो नहीं "।[123] इस कहानी के माध्यम से हमें यह पता चलते हैं कि किन्नर के साथ और किन्नर के बीच में अंधविश्वास किस तरह अपना तांडव करती हैं।

लता अग्रवाल की कहानी है **'शगुन-अपशगुन के बीच'**। इसमें श्राप , अभिशाप के ज़रिये शगुन तथा अपशगुन के बारे में बताया गया है। इस

कहानी में एक शादी के दृश्य को दर्शाया गया है जिसमें बारात आने वाली होती है तथा दहेज का सामान बाहर बिखरते समय वहाँ किन्नर का प्रवेश हो जाता है और किन्नर तथा परिवार वालों के बीच नेग के संबंध में झगड़ा शुरू हो जाती है और किन्नर ने परिवार वालों को श्राप देता। कहानी में हमें इस बात का पता चलता है कि हम शगुन – अपशगुन के डर से अनेकों बार गलत बातों में भी अपनी सहमती दे देते हैं तथा यहीं से अंधविश्वास एवं रूढ़ियों की शुरुआत होती है। हकीकत में यह अपशगुन या शगुन कुछ तथा नहीं बस हमारे मन का डर होता है जबकि हमा ,रे मन का आत्मविश्वास ही एक मात्र वह चीज़ है जो हमें जीत और हार दिलाता है।

'अधिकार' कहानी डॉ. नीलम रावत की है , जो सामाजिक पृष्ठभूमि पर आधारित कहानी है। इस कहानी में बधाई लेने आए किन्नर और परिवार के मध्य झगड़ा हो जाता है। किन्नर टोली से बधाई मांगती है लेकिन उसको नेग देने केलिए परिवार असमर्थ रहता है । तब एक किन्नर भला बुरा कहती है और पुरुषों से बुरी बातें कहने लगता है। जो धनंजय को बुरा लगता है और इन सब बातों के कारण खूब गर्मा – गर्म बहस हो जाती है और किन्नरी अपना अधिकार मांगती है।-"धन्य है आप लोग और

आपका समाज।जब हम जैसे बच्चों का जन्म होता है। तो नरम होकर छोड़ आते हैं। अपने भाग्य पर मरने के लिए निष्ठुर होकर एक बार भी पीछे मुड़कर अपनी गलती को देखना भी पसंद नहीं करते हैं। यहां है आपके सभ्य समाज के संस्कार सभी स्तब्ध होकर सुन रहे थे अरे नहीं चाहिए तुम्हारे पैसा हमें। हो सके तो हमारा सम्मान और अधिकार वापस कर दो"। 124 यह कहानी समाज से प्रश्न पूछ रही है कि क्या किन्नरों को भी अधिकार वापस मिलेगा ? और कब?

4.6. किन्नर से सम्बंधित अन्य कहानियाँ

'गली आगे मुड़ती है' सोम भारती द्वारा लिखित कहानी है तथा इस कहानी के केन्द्र में किन्नर नील का चरित्र है। इस लिए इस कहानी को हम चरित्रप्रधान भी कह सकते हैं । नील प्रतिष्ठित फैशन डिज़ाइनर है । उसकी लिंगीय सच्चाई से समाज अनभिज्ञ है। निश्चित ही वह नहीं चाहता है कि उसकी इस सच्चाई का लोगों को पता चले, लेकिन वास्तविकता को छुपातेव्यस्त हो - छुपाते वह मानसिक रूप से अस्त- जाता है और रायना से कहता है कि अपना रिश्ता केवल बिजनेस का है। जबकि नील उससे मिलना चाहती है - "जाओ रायना घर जाओ। हमारा रिश्ता बिजनेस का है वही ठीक हैकिसी पूरे व्यक्.....ति से विवाह करना जो तुम्हें हर सुख

दे सके।" [125] एक अंजाना सा भय उस पर सवार हो जाता था। इसका- प्रभाव उसके व्यावसायिक और सामाजिक जीवन परकभी उसे लगने लगता है कि उसका जीवन पर भी पड़ने लगता है। कभी एक बार सब कुछ एक ही झटके में समाप्त हो जाएगा। उसके सामने यह प्रश्न खड़ा होता है कि वह इस यथार्थ से कब तक भागेगा? यह कहानी उसके इस प्रश्न के पीछे के मनोविज्ञान का सच के धरातल पर चित्रित करती है। जीवन में दुरूह स्थितियों का सामना करते हुए स्वयं को स्थापित करने वाली मित्र मॉडल रायना उसकी सहचर बनकर मानसिक उद्वेलन से बाहर निकालकर यथार्थ से सामना करने की शक्ति देती हुई जीवन की सच्चाई से सामना करने की शक्ति प्रदान करती है।

'तराजू' डॉक्टर लवलेश दत्त द्वारा लिखी गई कहानी है। संवेदनात्मक परिप्रेक्ष्य में लिखी गई यह कहानी समाज के कड़वे सत्य को उजागर करती है। इस कहानी में दो सगे भाई अपने पिता नंदलाल को कोढ हो जाने के कारण छोड़ देते हैं। नंदलाल वृद्ध पात्र है जिसने अपने जीवन में संतानों के लिए आशु संपत्ति अर्जित की है। लेकिन उसको कोढ बीमारी हो जाने के कारण उसके पुत्र नरेंद्र सुधीर और प्रदीप छोड़ देते हैं तथा उनके हृदय से पुत्र पिता की संवेदना भी निकल जाती है अंत

में नंदलाल के यहां काम करने वाली जमुना के किन्नर बेटे ने उसको संभाला और नंदलाल अपने घर जमुना के किन्नर बेटे रंगीला के नाम पर लिख देता है। इसका वर्णन कहानी में इस प्रकार है – " यह बंगला मेरा है और मेरे नाम पर है। अब मैं इसे आश्रम बनाऊंगा जिसकी देखरेख का जिम्मा मैं गोद लिए बेटे श्यामसुन्दर को अर्थात रंगीला को देता हूं"[126] अपने बड़े बेटे के हाथ में वसीयत के कागज़ पकड़ा दिए। तीनों बेटे एक दूसरे का मुंह ताकते रह गए उनके हाथ में वसीयत के कागज़ हवा में ऐसे फड़फड़ा रहे थे जैसे मानो वह उन पर खिलखिला कर हंस रहे हो।

'होने न होने के बीच ' कहानी के रचनाकार नमिता हैं। यह सामाजिक पृष्ठभूमि पर रची गयी कहानी है जिसमें कहानीकार ने कमासिन किन्नरों की कठिनाइयों एवं विपदाओं का वर्णन किया है कि तथाकथित समाज का काम और कम आयु के किन्नर बच्चे को अपनी हवस का शिकार बनाता है केतकी को जो साथ ले गया था उसी ने ही उसके साथ गुदा मैथुन जैसे संबंध बनाई -"उनके अशलील मनोरंजन के लिए उसका कैसा कैसा इस्तेमाल। जवाब भी उसे उनके अंडर है। उसका शरीर

गया था और मन तो चिंता चिता चैन से फिर भी चल रहा थी हाय उमा तुम्हारी कैसे खडसे रुक गई थी ”। 127

‘ताली की गूँज’ कहानी के अंतर्गत एक परिवार में चार लड़कियों को जन्म देने के बाद पुत्र की लालसा में एक किन्नर बच्चा जन्म ले लेता है। बाद में उसकी हत्या हो जाती है । लेखक ने इस कहानी में उसे दिखाने का प्रयत्न किया है । लड़कियों के बीच में रहकर कैसे एक किन्नर अपना जीवन व्यतीत करता है उस दृष्टांत को भी इस कहानी में प्रस्तुत किया गया है। प्रेम से प्रेमा बने किन्नर ने आप बीती रानी को सुनाई तथा बधाई लेकर अपना जीवन यापन किया। एक उम्र गुजर जाने के बाद प्रेमा कपड़े सिल कर समय व्यतीत करने लगी।

डॉ. मोहन तिवारी आनंद द्वारा रचित कहानी है **‘तीसरा वर्ग’** । इसको कथेतर साहित्य के अंतर्गत रखना चाहिए क्योंकि इसमें कहानी के तत्व नहीं मिलते हैं। इस कहानी में कृटिया के पास फेंके गए बच्चे तथा उसके जीवन की कहानी है जो अपने बाबा को छोड़कर एक धनवान व्यक्ति के पास नहीं जाना चाहता है क्योंकि वह किन्नर जीवन का कड़वा यथार्थ समझता है। कथाकार ने किन्नरों के संदर्भ में जो रेखा खींची है उसको

समझना होगा - "किंतु जब हम भी तीसरी रचना किन्नर पर नजर डालते हैं तो एक अनिश्चितता की हताशा लिए सुनसान तिराहे पर खड़ा जीवन नजर आता है जिसकी न कोई तमन्ना होती है और ना उम्मीद। हर और से तिरस्कार उपहास और न जाने क्याक्या-? फिर भी जीवन को किसी तरह जीकर गुजारने का अनवरत उपक्रम चलता रहता है "।[128]

'हिजड़ा कहीं का' इस कहानी के रचनाकार डॉ. अनीता पाण्डेय हैं। सामाजिक पृष्ठभूमि पर लिखी गई कहानी है जिसमें एक किन्नर का दर्द छलकता है । उसमें अपने मां बाप के के प्रति संवेदनाएं एवं भावुकता विद्यमान है। सुमी माता पिता से-मिलना चाहती है लेकिन समाज के डर से वह नहीं मिल पाती है जिसकी उसे जीवन भर पीड़ा रहती है।

'बुल बुल ' कहानी किन्नर विमर्श के अध्येताओं और विद्वानों में शामिल डॉ. लता अग्रवाल की है जिन्होंने अपनी कहानियों की पृष्ठभूमि अधिकतर सामाजिक ही रखी है क्योंकि वे कहानी के माध्यम से समाज को जागरूक करने का प्रयत्न करती हैं। यह कहानी पात्र को आधार बनाकर रची गयी है । बस में यात्रा करते वक्त लेखिका और बुलबुल किन्नर

की भेंट हो जाती है। 'बुलबुल ' लेखक के सामने समाज का चेहरा दिखाती है और अपने परिवार के बारे में भी वर्णन करती है। जिन्होंने रिश्ते बनाकर धोखा दिया है उनको भी लेखिका ने दर्शाने का प्रयत्न किया गया है। लेखिका ने जब रिश्तो के संबंध में बुलबुल से वार्ता की तो उसने बताया -" रिश्तो की कमी तो महसूस होती होगी ? रिश्ते का सुख नसीब में नहीं एक भाई बनाया था।एक दिन बहुत सा रुपया लेकर भाग गया नासपिटा फिर एक गरीब लड़की को पढ़ाया उसकी शादी में पैसा खर्च किया सोचा घर बस जायेगा तो दुआ देगी। तो शादी होकर वह भी अपने घर की हो गई कभी याद नहीं करती" ।[129]

किन्नर से सम्बंधित अन्य कहानियों में लेखकगण समाज में किन्नर लोग किस प्रकार तड़प रहे हैं इसको दिखाने का सफल प्रयत्न किया है। किन्नर विमर्श पर अनेक कहानियों का अवलोकन करने के बाद उनकी समस्याओं, सामजिक स्थिति तथा उनकी आज़ादी के सम्बंध में सभी रचनाकरों ने विभिन्न तरीके से प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है जो वास्तव में मनुष्यता के लिए आवश्यक है।

कोई भी लेखक जब किसी कृति का सृजन करते हैं तो वे मानवता के लिए ही अपनी आवाज़ को परोक्ष या अपरोक्ष रूप से उठाने का प्रयत्न करते हैं।

वर्षों से बहिष्कृत, उपेक्षित इस समाज की कठिनाइयां, संघर्ष और अपने पैतृक सगे सम्बन्धियो की उलाहना से तंग आकर इस समाज ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है जिसको आज भारतीय सरकार भी सहायता प्रदान कर रही है। जिसकी वजह से कुछ उत्थान सम्भव हुआ है।

संदर्भ ग्रथ

1. Sociology of india , contributions to Indian sociology No.III , F.G Bailey Page No. 91 , SAGE journals

2. Inequality and social change , Beteille , Page No. 41 , SAGE journals

3. Sociology in india , T.B. Bottomore , The British Journal of Sociology Volum. 13 , No.02 , Page 101

4. हिंदी का गद्य साहित्य , रामचंद्र तिवारी , गोरखपुर विश्वविद्यालय प्रकाशन , पृ. 214

5. नयी कहानी की भूमिका , कमलेश्वर , अक्षर प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड दिल्ली , पृ. 9

6. नई कहानी : कितने क्षितिज संवेदना , डॉ. विष्णु ओझा , विश्वविद्यालय प्रकाशन , दिल्ली 2017 पृ. 36

7. कहानी के नये प्रतिमान , डॉ. कृष्ण कुमार , वाणी प्रकाशन , दिल्ली पृ.27

8. समकालीन हिंदी कहानी का इतिहास , डॉ. अशोक भाटिया , नेहा पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर , पृ. 22

9. स्वतंत्र्योत्तर हिंदी कहानी : विविध आन्दोलन , डॉ. जयेंद्र त्रिवेदी (सं. रामकुमार गुप्त) पृ. 22

10. हिंदी कथा साहित्य का इतिहास , डॉ. हेतु भारद्वाज , पंचशील प्रकाशन जयपुर , पृ. 77-78

11. समकालीन हिंदी कहानी : युगबोध का सन्दर्भ , डॉ. पुष्पपाल सिंह , नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली , पृ. 57

12. नयी कहानियाँ , सं. अमृतराय , मार्च 1968 पृ.05

13. हिंदी कथा साहित्य का इतिहास , डॉ. हेतु भारद्वाज , पंचशील प्रकाशन जयपुर , पृ.93

14. वही पृ.93

15. सक्रिय कहानी की भूमिका , सं. राकेश वत्स , पृ. 01

16. थर्ड जेंडर कथा की हकीकत , सं. अकरम /मनीष , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ.09

17. थर्ड जेंडर और साहित्य , डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , विकास प्रकाशन , कानपुर , पृ.06

18. मानवाधिकार विमर्श में कहां खो जाती है , तीसरे लिंग की आवाज़ , पंजाब स्कीन INDIA

19. थर्ड जेंडर और साहित्य , डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , विकास प्रकाशन , कानपुर , पृ.05 (भूमिका)

20. किन्नर विमर्श साहित्य के आईने में , डॉ. इकरार अहमद , वांग्मय बुक्स अलीगढ़ , पृ.05 (भूमिका)

21. किन्नर का यथार्थ , डॉ. सतीश चन्द्र भारती , कलकत्ता पब्लिशिंग हाउस , पृ.33

22. थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ , डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ.23

23. वही , पृ.26

24. वही , पृ. 27

25. वही , पृ.28

26. वही , पृ.22 , 23

27. दास्तान- ए- किन्नर , सं. पुरोबी ए. भंडारी , विकास प्रकाशन , कानपूर , 2018 , पृ.74

28. थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ , डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ.30

29. वही , पृ.31

30. वही , पृ. 32 , 33

31. इस ज़िन्दगी के उस पार , राकेश शंकर भारती , अमन प्रकाशन कानपुर , 2019, पृ. 98

32. हम भी इंसान हैं , सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , वाग्मय बुक्स अलीगढ़ , 2018 , पृ. 55

33. इस ज़िन्दगी के उस पार , राकेश शंकर भारती , अमन प्रकाशन कानपुर , 2019पृ. 17

34. हम भी इंसान हैं , सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , वाग्मय बुक्स अलीगढ़ , 2018 , पृ.96

35. थर्ड जेंडर की हिंदी कहानियाँ , सं. डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह , डॉ. रवि कुमार गौड़ , ए.बी.एस. पब्लिकेशन , 2020 , पृ. 44

36. इस ज़िन्दगी के उस पार , राकेश शंकर भारती , अमन प्रकाशन कानपुर , 2019पृ.58

37. थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ , डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ. 124

38. वही , पृ.124

39. वही , पृ. 126

40. वही , पृ. 141

41. वही , पृ.141

42. वही , पृ. 148

43. वही , पृ. 148

44. हम भी इंसान हैं , सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , वाग्मय बुक्स अलीगढ़ , 2018 , पृ.02

45. वही , पृ.61

46. किन्नर विमर्श साहित्य और समाज , सं. मिलन बिश्नोई , विद्या प्रकाशन कानपुर , पृ.98

47. दास्तान- ए- किन्नर , सं. पुरोबी ए. भंडारी , विकास प्रकाशन , कानपूर , 2018 , पृ.127

48. वही , पृ. 27

49. वही , पृ.27

50. वही , पृ.27

51. थर्ड जेंडर की हिंदी कहानियाँ , सं. डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह , डॉ. रवि कुमार गौड़ , ए.बी.एस. पब्लिकेशन , 2020 , पृ.124

52. वही , पृ.25

53. वही , पृ.90

54. वही , पृ.91

55. थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ , डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ.128

56. वही , पृ.46

57. कथा और किन्नर , सं.डॉ. विमल ग्यानोबाराव सूर्यवंशी , रोशनी पब्लिकेशन्स कानपुर , 2018 , पृ.18

58. वही , पृ.18

59. दास्तान- ए- किन्नर , सं. पुरोबी ए. भंडारी , विकास प्रकाशन , कानपूर , 2018 , पृ.70

60. थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ , डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ.116

61. वही , पृ.108

62. वही , पृ.119

63. वही , पृ.121

64. समकालीन साहित्य में किन्नर विमर्श और अन्य सन्दर्भ , डॉ. अनु पांडेय ,माया प्रकाशन कानपुर 2019 , पृ.62

65. थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ , डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ.129

66. कथा और किन्नर , सं.डॉ. विमल ग्यानोबाराव सूर्यवंशी , रोशनी पब्लिकेशन्स कानपुर , 2018 , पृ.32

67. मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी , लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी , वाणी प्रकाशन 2015, पृ.35

68. थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ , डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ.35

69. समकालीन साहित्य में किन्नर विमर्श और अन्य सन्दर्भ , डॉ. अनु पांडेय ,माया प्रकाशन कानपुर 2019 , पृ.18

70. अस्तित्व की तलाश में सिमरन , डॉ. मोनिका देवी , विद्या प्रकाशन कानपुर , 2018, पृ. 03

71. थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ , डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ .92

72. वही , पृ.105

73. वही , पृ.106

74. वही, पृ.116

75. वही , पृ.128

76. वही , पृ.133

77. थर्ड जेंडर की हिंदी कहानियाँ , सं. डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह , डॉ. रवि कुमार गौड़ , ए.बी.एस. पब्लिकेशन , 2020 , पृ.30

78. इस ज़िन्दगी के उस पार , राकेश शंकर भारती , अमन प्रकाशन कानपुर , 2019 , पृ.36

79. थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ , डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ .148

80. वही , पृ.148

81. हम भी इंसान हैं , सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , वाग्मय बुक्स अलीगढ़ , 2018 , पृ.13

82. वही , पृ.79

83. थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ , डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ .61

84. वही , पृ.77

85. हम भी इंसान हैं , सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , वाग्मय बुक्स अलीगढ़ , 2018 , पृ.92

86. दास्तान- ए- किन्नर , सं. पुरोबी ए. भंडारी , विकास प्रकाशन , कानपूर , 2018 , पृ.168

87. वही , पृ.93-94

88. थर्ड जेंडर की हिंदी कहानियाँ , सं. डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह , डॉ. रवि कुमार गौड़ , ए.बी.एस. पब्लिकेशन , 2020 , पृ. 68

89. इस ज़िन्दगी के उस पार , राकेश शंकर भारती , अमन प्रकाशन कानपुर , 2019 ,पृ.128

90. वही , पृ.130

91. कथा और किन्नर , सं.डॉ. विमल ग्यानोबाराव सूर्यवंशी , रोशनी पब्लिकेशन्स कानपुर , 2018 , पृ.19

92. हम भी इंसान हैं , सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , वाग्मय बुक्स अलीगढ़ , 2018 , पृ.04

93. Transition from homosexuality sub culture to gay politics , T.K. Sulaiman , LAMBERT Academic Publishing , Calicut , 2015, Page. 28

94. थर्ड जेंडर की हिंदी कहानियाँ , सं. डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह , डॉ. रवि कुमार गौड़ , ए.बी.एस. पब्लिकेशन , 2020 , पृ.13

95. हम भी इंसान हैं , सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , वाग्मय बुक्स अलीगढ़ , 2018 , पृ.37

96. आधारशिला (पत्रिका) जून 2018 , सं. दिवाकर भट्ट , पृ. 31

97. दास्तान- ए- किन्नर , सं. पुरोबी ए. भंडारी , विकास प्रकाशन , कानपूर , 2018 , पृ.127

98. वही , पृ.129

99. थर्ड जेंडर की हिंदी कहानियाँ , सं. डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह , डॉ. रवि कुमार गौड़ , ए.बी.एस. पब्लिकेशन , 2020 , पृ.84

100. इस ज़िन्दगी के उस पार , राकेश शंकर भारती , अमन प्रकाशन कानपुर , 2019, पृ.112

101. दास्तान- ए- किन्नर , सं. पुरोबी ए. भंडारी , विकास प्रकाशन , कानपूर , 2018 , पृ.66

102. वही , पृ.123

103. वही , पृ.124

104. http://www.w3newspaper.com>hindi janurary 2018

105. http://www.w3newspaper.com>hindi janurary 2018

106. थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ , डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ.46

107. वही , पृ.47

108. वही , पृ.47

109. वही , पृ.47

110. वही , पृ.95

111. दास्तान- ए- किन्नर , सं. पुरोबी ए. भंडारी , विकास प्रकाशन , कानपूर , 2018 , पृ.33

112. Transition from homosexuality sub culture to gay politics , T.K. Sulaiman , , LAMBERT Academic Publishing , Calicut , 2015, Page.82

113. थर्ड जेंडर की हिंदी कहानियाँ , सं. डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह , डॉ. रवि कुमार गौड़ , ए.बी.एस. पब्लिकेशन , 2020 , पृ.28

114. दास्तान- ए- किन्नर , सं. पुरोबी ए. भंडारी , विकास प्रकाशन , कानपूर , 2018 , पृ.85

115. आधारशिला (पत्रिका) जून 2018 , सं. दिवाकर भट्ट , पृ.36

116. दास्तान- ए- किन्नर , सं. पुरोबी ए. भंडारी , विकास प्रकाशन , कानपूर , 2018 , पृ.147

117. थर्ड जेंडर की हिंदी कहानियाँ , सं. डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह , डॉ. रवि कुमार गौड़ , ए.बी.एस. पब्लिकेशन , 2020 , पृ.96

118. हम भी इंसान हैं , सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , वाग्मय बुक्स अलीगढ़ , 2018 , पृ.110

119. थर्ड जेंडर की हिंदी कहानियाँ , सं. डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह , डॉ. रवि कुमार गौड़ , ए.बी.एस. पब्लिकेशन , 2020 , पृ.103

120. थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ , डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ.54

121. वही , पृ.52

122. दास्तान- ए- किन्नर , सं. पुरोबी ए. भंडारी , विकास प्रकाशन , कानपूर , 2018 , पृ.117

123. वही , पृ.56

124. वही , पृ.142

125. हम भी इंसान हैं , सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , वाग्मय बुक्स अलीगढ़ , 2018 , पृ.26

126. दास्तान- ए- किन्नर , सं. पुरोबी ए. भंडारी , विकास प्रकाशन , कानपूर , 2018 , पृ.48

127. हम भी इंसान हैं , सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान , वाग्मय बुक्स अलीगढ़ , 2018 , पृ.48

128. थर्ड जेंडर की हिंदी कहानियाँ , सं. डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह , डॉ. रवि कुमार गौड़ , ए.बी.एस. पब्लिकेशन , 2020 , पृ.93

129. वही , 131

उपसंहार

उपसंहार

साहित्य मनुष्य के हृदय की कल्पनाओं और अनुभूतियों की भावाभिव्यक्ति है। किसी भी देश, समाज में साहित्य का अभाव इस ओर इंगित करता है कि वहाँ मनुष्यता का भी अभाव है। भारत देश सांस्कृतिक और साहित्यिक रूप से धनी माना जाता है। यहाँ की साहित्यिक सभ्यता और समाज पूरे संसार में विशिष्ट है। यही भारत की पहचान भी है। जिसके बल पर भारतीय अपनी पहचान दूसरे देशों के नागरिकों से भिन्न पाते हैं। व्यक्ति जब भौतिक और बौद्धिक नीरसताओं से मुक्त होकर अंतर्मन के अंतःकोणों में झांकता है और अपनी संवेदना और भावना का विस्तार करता है तब साहित्य की उत्पत्ति होती है। जिसमें वह जो देखता है, पढ़ता है, सोचता है, उसे फिर कल्पना शक्ति के माध्यम से साहित्य में उतारता है। अंततः उस साहित्य से समाज के आयाम तय होते हैं। राजनीति को नया विषय मिलता है। मीडिया में चर्चा होती है। उसके बाद समाज में बदलाव के मानक तय होते हैं और मानवता समृद्ध होती है। गैर बराबरी पर समानता की विजय साहित्य के द्वारा ही होती है जिससे संविधान के माध्यम से सबको नैतिक अधिकार मिलते हैं। कहा जाता है 'साहित्य निर्जीव पदार्थों को भी अपनी संवेदना से सजीव बना देता है तथा जब वह वैज्ञानिक और दार्शनिक के रूखे-सूखे भौतिक एवं बौद्धिक सत्यों को अपनी

ही भावना और कल्पना से सजीव एवं सस्ता बना देता है, तभी ललित कलाओं और साहित्य की भाव-भूमि तैयार होती है। साहित्यकार केवल वस्तुओं के बाहरी सौंदर्य पर ही मुग्ध नहीं होता,अपितु वह अपनी सौन्दर्य-चेतना के आधार पर जड़ वस्तुओं में भी आंतरिक सौंदर्य की अनुभूति करता है। इस प्रकार साहित्य की भाव-भूमि विस्तृत है , वह जीवन से जुड़ी है। सभ्यता और संस्कृति का संरक्षण-संवर्द्धन उसके संकल्पों में शामिल होता है। साहित्य अपने उद्भवकाल से युगीन सामाजिक और सांस्कृतिक प्रवृत्तियों से जुड़ा रहा है। हर युग का साहित्य उस युग के इतिहास को स्वयं में समेटना है। इसी कारण से हमारे मनीषियों ने साहित्य को समाज का दर्पण और दीपक कहा है। साहित्य में दृष्टि को विशेष महत्व दिया गया है। साहित्यकार आम नागरिक की अपेक्षा अधिक संवेदनशील और भावुक होता है। अतः इसकी दृष्टि भी उतनी ही प्रखर और तीखी होती है। उसकी यह विशिष्टता दृष्टि पर निर्भर करती है। अर्थात् साहित्य के लिए दृष्टि एक महत्वपूर्ण अंग है जो मानवतावादी साहित्य का सृजन करता है।

विश्व में उपलब्ध श्रेष्ठ साहित्य इस बात का साक्षी है कि उसके मूल में कोई-न-कोई पुष्ट दार्शनिक-सामाजिक पृष्ठभूमि अवश्य रही है। यदि हिन्दी का ही उदाहरण ले तो स्पष्ट है कि जिस प्रकार मध्ययुग तक वही साहित्य श्रेष्ठ बन सका जिसके पीछे कोई पुष्ट धार्मिक-दार्शनिक विचारभूमि थी। उसी प्रकार आधुनिक युग में भी नवीन सामाजिक, आर्थिक और

राजनैतिक सिद्धांतों तथा जीवन-मूल्यों के साहित्यिक संस्करण द्वारा ही साहित्य और कलाओं को गौरव मिला है। इस प्रकार दृष्टि से साहित्य की प्रासंगिकता लंबे समय तक नहीं बनी रह सकती। या फिर वह एक समाचार, इतिहास और विज्ञान कहा जाएगा, न कि साहित्य। इस प्रकार दृष्टि और साहित्य में गहरा संबंध है। साहित्य सृजन पर दृष्टि का व्यापक प्रभाव पड़ता है। साहित्य की रचना प्रक्रिया को दृष्टि प्रभावित करती है। नज़रिया ही साहित्यकार को किसी विषय-विशेष के समर्थन और विरोध में खड़ा करती है। इसमें साहित्य का प्राणतत्व है। साहित्यकार की रचना-प्रक्रिया में उसका दृष्टिकोण झलकता है।

विषय-वस्तु का चयन, परीक्षण, विश्लेषण एवं प्रस्तुतीकरण साहित्यकार की दृष्टि पर निर्भर करता है। किसी भी रचना में साहित्यकार की दृष्टि एक महत्तवपूर्ण भूमिका अदा करती है। यह कहना भी तर्कसंगत होगा कि दृष्टि के अभाव में साहित्य, साहित्य नहीं होता। वह केवल एक समाचार हो सकता है। दृष्टि अर्थात् विचारधारा होती है जो तत्कालीन परिस्थितियों द्वारा निर्धारित होती है।

युगीन परिस्थितियों के अनुसार ही साहित्य भी परिवर्तित होता रहता है। रचनाकार की दृष्टि उसके समय और युग की स्थितियों-परिस्थितियों द्वारा ही निर्मित होती है। आदिकाल में वीर तथा सौंदर्य की

रचनाओं का बाहुल्य, भक्तिकाल में मूल्यों तथा आदर्शों को पुनस्थापित करने की व्यग्रता और भक्तिरस की रचनाओं की अधिकता, रीतिकाल में मांसल सौंदर्य और रामाश्रयी रचनाओं की प्रमुखता तथा आधुनिक काल में युगीन विसंगतियों पर प्रहार और पुर्नजागरण व राष्ट्रवादी रचनाओं का लेखन इस तथ्य को प्रभावित करता है कि युगानुरूप साहित्य की दृष्टि में भी परिवर्तन होते हैं। इक्कीसवीं सदी की मानवीय सभ्यता जटिल सामाजिक संरचना और वैश्विक सांस्कृतिक परिवेश में अपने मूल्यों और आदर्शों को तय करती है। इस युग में जीवन तथा जगत की अवधारणाएं जितनी तेजी से बदली हैं वैसा पहले कभी नहीं हुआ। वस्तुतः भूमंडलीकरण और आधुनिकीकरण के दवाब में मनुष्य का दृष्टिकोण पल-प्रतिपल बदल रहा है। पहले जिन परंपराओं का अनुकरण-अनुसरण आदर्श माना जाता था, आज वही दकियानूसी मानकर त्यागमय माना जा रहा है। साहित्य में यह शक्ति निर्मित है कि वह दृष्टि के व्यापक अर्थों को चरितार्थ करता है। साहित्यकार की दृष्टि घटनाओं को मात्र देखने-दिखाने का ही काम नहीं करती अपितु उसका समीक्षण-परीक्षण भी करती है। वैदिककाल से आधुनिक काल तक के साहित्य में इस तथ्य को अनुभूत कर सकते हैं। साहित्यकार सदैव अपने युग तथा समय की स्थितियों-परिस्थितियों से जुड़ा रहा है। अपने देशकाल के यथार्थांकन के साथ-साथ उसके मूल्यांकन का कार्य भी साहित्य करता आया है। साहित्य द्वारा सदैव युगीन

विसंगतियों और विद्रूपताओं पर तीखे प्रहार किए जाते रहे हैं और अपने युग के दिशानिर्देशन का उत्तरदायित्व निभाया जाता रहा है। साहित्य की दृष्टि संपन्नता ही उसे उचित-अनुचित का बोध कराती है। साहित्य में जो हित का भाव निहित है,वह उसकी दृष्टिसंपन्नता के कारण ही है क्योंकि विवके के अभाव में कल्याण का संकल्प दिग्भ्रमित हो सकता है। साहित्य का इन्द्रियबोध ही उसे अपने युग के विसंगत पर प्रहार करने तथा सार्थक मूल्यों को पुनस्थापित करने की शक्ति प्रदान करता है। साहित्य के पास तीसरी आंख होती है वह तीसरी आंख जो सामने दिखाई पड़ रही है वही नहीं, बल्कि जो बीत चुका है। उस अदृश्य को और अदृष्ट को देख सके, उस बीते हुए अतीत को जो अदृष्ट है और उस आने वाले भविष्य को जो दूर-दूर तक अभी प्रत्यक्ष नहीं हुआ है, उस अप्रत्यक्ष को भी देखने की क्षमता रखता हो। साहित्यकार के पास वह दृष्टि होती है जो अतीत को पुनर्मूल्यांकित करती है और भविष्य के मानदंडों को निर्धारित करती है। हिन्दी साहित्य में विमर्शों का प्रारंभ दृष्टिकोण की दृष्टि से ही हुआ है। वर्तमान समय में हिन्दी साहित्य में जिन विमर्शों का दौर चल रहा है वह वास्तव में दृष्टि और मानवता की ही देन है जो प्रत्येक नागारिक को समानता का अधिकार दिलाने के लिए प्रेरित करता है। इन्हीं विमर्शों के ध्यान में किन्नर विमर्श पर जब भी दृष्टिपात किया गया तो पाया गया कि औरतों के कपड़े, साज-सज्जा भी औरतों वाली, सफा चट दाडी, कानों में कुंडल उभरी हुई

बेतरतीब छाती लेकिन जब मुंह खोले तो मोटी सी आवाज़ जो इस ओर दृष्टि उत्पन्न करती है कि उक्त व्यक्ति आखिर में कौन है जो पहनावे से स्त्री और आवाज़ से मर्द लगता है। तब एक लंबी जद्दोजहद के बाद मालुम हुआ वह किन्नर है जिसको समाज में अनेक बोलियों, भाषाओं में भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा जाता है। फिर भी समाज में उनकी स्वीकार्यता नहीं है। इसी को ध्यान में रखते हुए इस बहिष्कृत, उपेक्षित समाज का अवलोकन प्रस्तुत शोध-प्रबंध में करने का प्रयास किया गया है।

साहित्य के सन्दर्भ में 'विमर्श' आधुनिक काल की देन है I आलोचना , विवेचन , चिंतन , गुणदोष की परिचर्चा आदि सभी शब्द विमर्श के ही समानार्थी हैं I किसी बात पर गहन सोच- विचार विनिमय करना ही विमर्श है I व्यक्ति , समाज , वर्ग , जाति , विचार तथा कोई विशिष्ट स्थिति आदि सब विमर्श के विषय हो सकते हैं I इसी विचार की दृष्टि से साहित्य में विभिन्न विमर्श जन्म लेते हैं I आज दलित विमर्श , स्त्री विमर्श , आदिवासी विमर्श , वृद्ध विमर्श , दिव्यांग विमर्श , किसान विमर्श , अल्पसंख्यक विमर्श , सेक्स विमर्श , शिक्षा विमर्श , किन्नर विमर्श और पर्यावरण विमर्श जैसी संकल्पनाएँ काफी प्रचलित हुई दिखाई देती है I वस्तुतः विमर्श को केंद्र में रखकर साहित्यिक पहल के उदघाटन का श्रेय

विख्यात हिंदी कथाकार एवं हंस पत्रिका के सम्पादक राजेन्द्र यादव को देना होगा। समकालीन रचनाओं में दलित विमर्श , स्त्री विमर्श , श्रमिक विमर्श और किसान विमर्श विषयक विचार सर्वाधिक रूप में अभिव्यक्त हुए हैं। इसके साथ ही किन्नर विमर्श जैसे विमर्श की पहल साहित्य में कम मात्रा में दिखाई देती हैं । किन्नर विमर्श ने भी २० वीं शताब्दी के अंतिम दशक से साहित्य में अपना स्थान बनाया और जड़ होते समाज को संवेदनशील बनाने का प्रयत्न किया। किन्नर विमर्श में किन्नरों को मनुष्य न समझ कर उनके साथ अन्याय किया गया है। यह विमर्श उनके प्रति हो रहे अत्याचार को उजागर करता है। किन्नर तब उस स्थान को प्राप्त करते हैं जब समाज उन्हें अपने से अलग न समझे और इस सृष्टि का अभिन्न हिस्सा माने। जबकि समाज ने मुख्य रूप से दो ही लिंग मानी स्त्री और पुरुष ,इसमें तीसरे की अस्मिता तक विलुप्त हो जाती है। उन्हें समाज की अवहेलना झेलनी पड़ती है खाने के लिए अन्य लोगों के सामने हाथ फैलाना पड़ता है। वे समाज की नज़रों में दृष्टि हीनता का शिकार हो जाते हैं।

मनुष्य की उत्पत्ति किसी भी भेदभाव एवं असमानता से अलग है। जब मनुष्य की उत्पत्ति हुई तब स्वयं के जीवन संचालन के लिए समाज बना। समाज के बिना मनुष्य का अस्तित्व ही नहीं है। वह समाज से ही सीखता है तथा समाज में ही रहता है और बसता है।मनुष्य ने अपने

अस्तित्व को बचाए रखने के लिए प्रजनन की प्रक्रिया अपनाई ।प्राणी का अस्तित्व अग्रसित होता रहा। किन्नर भी उसी प्रजनन प्रक्रिया के अंग के रूप में विद्यमान है जिनकी स्थिति प्राचीन तथा मध्यकाल में सम्मानजनक रही है लेकिन आधुनिक दौर आते-आते इन्हें उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाने लगा। मुख्यधारा के लोगों ने इनसे मुंह मोड़ना शुरू किया तब काफी समय बाद बुद्धिजीवियों ने इन्हें मुख्यधारा से जोड़ने का कार्य किया।मगर आज इनके ऊपर हो रहे अत्याचारों को बखूबी समझा जा सकता है ।आज के समय में अपनी लड़ाई स्वयं लड़ी जाती है इसीलिए इन्हें अपने अधिकार दिलाने के लिए संघर्ष ही करना पड़ेगा। इस शोध में सेक्स , जेंडर और लैंगिकता के अंतर को समझाया गया है। 'लिंग' का संबंध जननांग से होता है लेकिन सेक्स जैविक से होती है। किन्नरों के प्रति समाज की जो अवधारणा है वह बहुत ही दयनीय है क्योंकि भारतीय समाज आज भी पितृसत्तात्मक है। वहां अधिकतर बिंदुओं को अपनी अस्मिता और इज्ज़द से जोड़कर देखा जाता है जबकि ऐसा होता नहीं है। क्योंकि उनकी दृष्टि प्रारंभ से ही किन्नरों के प्रति ऐसी बना दी गयी है जिससे परोक्ष रूप से इस समाज की अस्मिता का दोहन होता है। किन्नर के अनेक रूपों और उनके प्रकार के बारे में समाज में बहुत किंवदंतियां चलती हैं जिसको आप अफवाह भी कहते हैं। किसी

भी किन्नर को देखकर पहला प्रश्न मनुष्य के मस्तिष्क में यही आता है कि उक्त व्यक्ति असली किन्नर है या नकली किन्नर। इसीलिए किन्नरों के रूप के जो चार प्रकार होते हैं उनके अंदर को यहाँ बताया गया है तथा उनकी पहचान के लिए जो नियम होते हैं उसका विस्तृत वर्णन किया गया है । किन्नर जीवन की विसंगतियां , विकृतियां तथा जो परिणाम दृष्टिगत हो रहे हैं उनको भी स्पष्टता से बताया गया है जिससे किसी भी प्रकार की भ्रांतियां न हो और किन्नरों के अधिकारों को निर्धारित करने में सरकार को कोई कठिनाई न हो।अक्सर किन्नर समाज की ऐतिहासिकता पर प्रश्न उठता है।इनका वर्णन भारतीय वाग्मय के प्राचीन वेदों में मिलता है , मुगल काल में इन्हें सम्मान के भाव से देखता था ता तथा ब्रिटिश राज्य में इनकी जो स्थिति बनाई गई थी उसका भी वर्णन किया गया है। किन्नर समाज के रीति-रिवाजों का वर्णन भी समग्रता से किया गया जिससे उनकी संस्कृति और संस्कार का भी पता चल सके।किन्नर का आराध्य देवी बहुचरा माता हैं।किन्नर समुदाय में प्रवेश दो प्रकार से होता है। एक परिवार अपने यहाँ उत्पन्न बच्चे को स्वयं किन्नर समुदाय में शामिल कर देता है तो वहीं दूसरी तरफ किन्नर जब बधाई देने जाते हैं तब उन्हें अपने साथ ले आते हैं। किशोरावस्था में स्वयं किन्नर व्यक्ति अपनी कम्युनिटी में शामिल हो जाता है जब उनकी शारीरिक बनावट पृथक होती है अर्थात 18 से 20 वर्ष के

होने पर व्यक्ति अपनी जमात में स्वयं प्रवेश लेता है। नए सदस्य को प्रवेश से पहले गुरू चुनना होता है। उसके अनुसार सभी रीति-रिवाज़ को वह निभाता है। इसे दुल्हन की तरह तैयार किया जाता है। वह अपनी खुशी को एक त्यौहार की तरह मनाता है और अपना पूरा जीवन उसी गुरु की देख – रेख में व्यतीत करता है।

किन्नर समाज की समस्याओं के संदर्भ में कहें तो किन्नर को सबसे पहले अपने परिवार से लड़ना पड़ता है। परिवार से उन्हें वंचित किया जाता है और उनके साथ सौतेला व्यवहार होता है। किन्नरों को रोज़गार के लिए भटकना पड़ता है और उनके साथ अनेक समस्याएं भी उत्पन्न होती हैं। किन्नर इन्हीं करणों से अपने पेट की आग बुझाने के लिए भीख माँगते हैं। किन्नरों के लिए शिक्षा दुर्लभ है। कई शिक्षण संस्थान समाज में अपनी पहचान बनाने के चक्कर में किन्नरों को प्रवेश नहीं देते , क्योंकि वे मानते हैं कि समाज में उनके संस्थान की मान – मर्यादा और संस्थान की पृष्ठभूमि अच्छी नहीं मानी जाएगी। इसी कारण किन्नर शिक्षा से वंचित रह जाते हैं । सर्वोच्च न्यायलय ने सन् 2014 में नेशनल लीगल सर्विस अथॉरिटी की अर्जी पर सुनवायी करते हुए किन्नरों को समाज में तृतीय लिंग के रूप में कानूनी अधिकार दिया । किन्नरों के अधिकारों के प्रति सचेत बिल फरवरी

2014 में सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के बाद दिसम्बर 2014 में राज्यसभा में प्राइवेट मेंबर्स बिल के रूप में 'द राइट्स आफ ट्रांसजेंडर पर्सन्स बिल 2014' पेश किया गया।

किन्नर विमर्श पर वर्तमान में उपलब्ध सभी उपन्यासों के सन्दर्भ में विस्तृत चर्चा की गयी है। किन्नर केन्द्रित उपन्यासों में 'यमदीप' , 'तीसरी ताली' , 'किन्नर कथा' , 'गुलाम मंडी' , 'पोस्ट बॉक्स नंबर २०३ नाला सोपारा' , 'अस्तित्व की तलाश में सिमरन' आदि उपनास आते हैं। प्रदीप सौरभ द्वारा लिखित 'तीसरी ताली' उपन्यास में निकिता की माँ सामाजिक मजबूरी के कारण अपनी बेटी को किन्नर समुदाय को सौंप देती है और निकिता परिवार से दूर अपनी इस नई परिस्थिति को समझने और खुद की पहचान और भविष्य के प्रति आशंकित महसूस करती है । 'यमदीप' उपन्यास में किन्नर नाजबीबी के इर्द – गिर्द घूमता है। जब से उनका जन्म हुआ तब से लेकर घर – परिवार सब परेशान हैं। सभी उपन्यास में इसी प्रकार का सन्दर्भ देखने को मिलता है। हिंदी नाटक में किन्नर जीवन से सम्बंधित अब तक दो नाटक मिलते हैं - महेश दत्तानी द्वारा लिखित 'आग के सात फेरे' और हरीश बी. शर्मा द्वारा लिखित 'हरारत'। 'हरारत' एक लघु नाटक है जिसमें किन्नर 'माल चंपा' की केन्द्रीय भूमिका है , जो

मानवीय मूल्यों को देखने के लिए हरारत का बखान है। 'आग के साथ फेरे' एक बहुचर्चित नाटक है जिसमें उन्होंने अग्नि को सप्तपदी द्वारा सात प्रदक्षिणा अर्थात वर – वधु के विवाह के प्रमाण के रूप में स्वीकार किया गया है। किन्नर आत्मकथा को भी आधार बनाकर उनकी समस्याओं को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है कि वे किस प्रकार परिवार छोड़कर अपना जीवन व्यतीत करते हैं , समाज की उलाहना सहते हैं , फिर भी जीवन व्यतीत करने का प्रयत्न अपने आत्मसम्मान के साथ करते हैं। लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी जी द्वारा लिखित 'मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी' और मनोबी बंद्योपाध्याय द्वारा लिखित 'पुरुष तन में फँसा मेरा नारी मन' इन आत्मकथाओं में किन्नर जीवन की मार्मिक एवं सच्चा चित्रण देखने को मिलता है। रचनाकारों द्वारा अन्य किन्नरों में भी चेतना जगाने का प्रयास हुआ है। अंत में किन्नर कविताओं में उनके जीवन पर दृष्टिपात किया गया है कि साहित्य की इस मुख्य विधा में किन्नरों का जीवन किस प्रकार चल रहा है। कविराज किशोर , डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह जैसे व्यक्तियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से किन्नरों की व्यथा को चित्रित करने का सफल प्रयास किया है। 'आधे अधूरे' , 'हिजड़ा कौन?' और 'हिजड़े की व्यथा' आदि महत्वपूर्ण कविताएं हैं। इन कविताओं में किन्नर जीवन के मनोविज्ञान

, सामाजिक सद्व्यवहार एवं दुर्व्यवहार को बहुत ही गंभीरता के साथ प्रस्तुत किया है ।

'इक्कीसवीं शती की हिंदी कहानियों में किन्नर विमर्श' पर विचार करें तो इसमें मानवशास्त्र और मानवतावाद के बारे में कहना अनिवार्य है । इसमें यह भी बताया गया है कि समयानुसार मानवतावाद के प्रतिमान किस तरह बदल गए हैं । साथ ही साथ किन्नर कहानियों में लेखकों ने किन्नरों की समस्याएं , उनके संघर्ष तथा समाज के दोहरे आचरण का भी वर्णन किया है । मुख्य रूप से देखा जाए तो किन्नरों की समस्या का आरंभ अपने परिवार से ही होता है। जब परिवारवालों को ज्ञात होता है कि अपने बच्चे किन्नर हैं तो वे परिवार से निकाल देते हैं। इसी वजह से किन्नर बेसहारे बन जाते हैं ।समाज उनको नौकरी भी नहीं देता इसलिए उनको भीख मांगना पड़ता है । इस तरह की अनेक समस्याओं से एक किन्नर गुज़र रहा है ।किन्नर केन्द्रित कहानियों में जाति - भेद की समस्या , सांस्कृतिक-आर्थिक व राजनीतिक समस्या , समाज से मिलनेवाली अनेक कठिनाईयाँ आदि का चित्रण किया गया है ।इन कहानियों में तमाम कहानियां उनकी मजबूरियों, व्यथाओं , शोषण पीड़ा और उनसे हो रहे भेदभाव को दर्शाती हैं । किन्नर भी इंसान है । हम अपने घर में कुत्तों का पालन करते हैं लेकिन

उसके स्थान पर किन्नर है तो हम उसे बाहर कर देते हैं इस वास्तविक सत्य को ये कहानियां उठाती हैं।

सभी कहानियों में भारतीय समाज की परंपरागत कुत्सित सोच दिखाई देती है जो सदियों से लेकर आज भी अपनी संकीर्ण सोच से उबार नहीं पाई। इन कहानियों के पात्रों के अध्ययन करते हुए एक बात निश्चित रूप से कही जा सकती है कि अधिकांश किन्नर घोर आस्तिक होते हैं और सदियों से चली आ रही परंपराओं का कष्ट से पालन करते हैं। 'बिंदा महाराज' , 'खालिक अहमद बुआ' , 'संझा' आदि अनेक उदाहरण हैं। 'त्रासदी','इज्ज़द के रहबर' और 'किन्नर' जैसी कहानियों में जहाँ मुख्यधारा के लोग किन्नरों और स्त्रियों से बलात्कार करते दिखाई देते हैं तो वहीं ये किन्नर उनकी इज्ज़द के रहबर बनकर सामने आते हैं।किन्नर होना इस तथाकथित सभ्य समाज में एक पाप ही है। उससे बड़ा पाप तब होता है जब कमसिन किन्नर बच्चों पर समाज की उल्टी नज़र पड़ती है। समाज उनके साथ मौन व्याभिचार करके जीवन नरक बनाना चाहता है क्योंकि किन्नर बच्चों की परवरिश में कमी होती है। उनके अंदर स्वतः ही स्त्रियों के गुण विद्यमान हो जाते हैं। जब वह किसी पुरूष के संपर्क में आता है तो सामने वाला व्यक्ति उसकी निगाहों को समझ लेता है और उसके साथ अपनी यौन इच्छाओं को पूर्ण करने की कोशिश करता है। यद्यपि कई सर्वे में यह पाया

गया है कि भारत में सामान्य बच्चों के साथ ही यौन शोषण की घटनाएं बहुत होती हैं। यह यौन शोषण करने वाले भी उस पीड़ित, पीड़िता का सगा-संबंधी ही होते हैं। आजकल ऐसे ही कृकत्य चाइल्ड एवयूस के नाम से देश के विभिन्न थानों तथा न्यायालयों में विचाराधीन है जिस पर अभी तक कड़ाई से कार्यवाही नहीं हुई है। लगभग दो दशक पहले निठारी कांड हुआ था। किन्नरों को लेकर कहानियों का आन्दोलन शुरू हो चुका है।

समस्त कहानियों का विश्लेषण करने पर निम्न सुझाव दृष्टिगत होते हैं –

- इस उपेक्षित , बहिष्कृत समाज में अधिकारों के प्रति जागरूकता का प्रचार – प्रसार करना चाहिए।
- उपेक्षा , सामाजिक बहिष्करण के कारण उदासीनता , हताशा और नाकामयाबी की धारणा जिसको केवल शिक्षा के माध्यम से दूर किया जा सकता है।
- किन्नर मेहनत और प्रज्ञा के साथ समाज से स्वीकृति का आकांक्षा रखते हैं।

- केंद्र सर्कार की स्टार्ट – अप योजना के अंतर्गत इन्हें कुटीर उद्योग , ब्यूटी – पार्लर , फैशन डिज़ाइनिंग और कला – प्रशिक्षण से इनको आजीविका चलाने का मार्ग को सुदृढ करना चाहिए।
- किन्ही भी नई नीतियों को बनाने में शासन एवं प्रशासनिक स्टार पर जटिल प्रक्रिया को सरल बनाकर प्रचार – प्रसार करना चाहिए ।
- समाज में किसी भी कुकृत्य का बदला केवल किन्नर ही तत्परता से लेते हैं और समाज को सन्देश देते हैं कि बेटियां सबकी समान ही होती है। फिर किन्नरों के मुंह – बोले रिश्ते भी होते हैं जो उनको उक्त परिवार से भावुकता से जोड़े रखते हैं। यह प्रकरण हमें एस.जी.एस. सिसोदिया की कहानी 'हिजड़ा गली' में मिलता है।
- रेखा लोदा स्मित की कहानी 'सुगंधा' का सन्देश है कि किसी भी किन्नर की शिक्षा – दीक्षा का ख्याल सामाजिक – संस्था या कोई विशेष व्यक्ति भी रख सकता है जिससे समाज में अच्छा सन्देश जाएं और उस बहिष्कृत समाज को बेरोज़गारी से रोका जा सके।

- डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह की कहानी ‘कर्त्तव्य’ में दिखाया गया है कि पेट की आग किसी भी प्रकार से भेदभाव नहीं करती है चाहे वह जातिगत हो , धार्मिक हो या फिर लैंगिक।

अनेक कहानियों के माध्यम से कहानीकारों ने किन्नरों की समस्याओं एवं सुझावों की ओर ध्यान इंगित करने का महती कार्य किया है जिसमें शिक्षा , रोजी-रोटी , कपड़ा मकान के अलावा सामाजिक भेदभाव के लिए भी संघर्ष गाथा को देखा जा सकता है। इस बहिष्कृत वर्ग का अपमान समाज में हर प्रकार से किया जाता है जिसका निवारण सरकार की नीतियों एवं सामाजिक जागरूकता से ही किया जा सकता है।

किन्नर समुदाय ने अनेक कठिनाईयों , संघर्षों एवं बहिष्करण को झेला है और वर्तमान में भी समाज को सहना पड़ रहा है क्योंकि उसका सीधा कारण है समाज में मानवता के लिए अपरिपक्वता , समानता जैसे शब्दों की प्रासंगिकता शून्य है। इस किन्नर समाज का जीवन बचपन से ही कठिनाईयों और संघर्षों से भरा होता है फिर भी अपनी श्रमशीलता के बल पर ये इस समाज में उत्कृष्ट काम कर जाते हैं जो इस वर्ग के लिए उदाहरण बन जाते हैं ।

किन्नर कहानियों को पढ़ने के उपरांत जो साक्षत्कार किया गया,उससे यह पता चला कि उनके किन्नर होने का सम्बंध शारिरिक एवं मानसिक बनाबट से है जिसमें उनका कोई दोष नहीं है। लेकिन समाज में उनको बराबरी का स्थान नहीं मिल रहा है।

प्रस्तुत शोध की प्रासंगिकता इस बात पर निर्भर करती है कि समाज में जो घटित हुआ है उसको यथार्थ रूप में इसमें प्रस्तुत किया गया है जिसको पाठकों तक पहुँचाकर जागरूक करने का प्रयास एक शोधार्थी का रहता है। इस विषय के माध्यम से भारत के दबे – कुचले , बहिष्कृत एवं उपेक्षित किन्नर समाज की दिशा, दशा उनकी सांस्कृतिक , धार्मिक एवं सामाजिक स्थिति का अनुशीलन किया गया है और इस समाज की कठिनाईयों का विश्लेषण किया गया तथा उनकी मुक्ति के लिए सुझाव दिया गया है।

भारत के प्रमुख किन्नरों की सूची

विद्या राजपूत - विद्या राजपूत वर्तमान में मध्य भारत के पहले सामुदायिक संगठन छतीसगढ़ मितवा संकल्प समिति की संस्थापिका है। यह संस्था छतीसगढ़ मितवा संकल्प समिति 2009 से किन्नर समुदाय के अधिकारों व सशक्तिकरण के लिए कार्य कर रही है।

धनंजय चौहान - पहली किन्नर है जिन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय से इतिहास विषय में बी . ए. किया और विश्वविद्यालय में टॉप में आया , इसी विश्वविद्यालय से ह्यूमन राइट्स एवं एम.एस.डब्लू. विषय में परास्नातक की उपाधि प्राप्त की , वर्तमान में वह स्टेट ट्रांसजेंडर वेलफेयर बोर्ड की सदस्या है नालसा की सदस्या है।

प्रिय बाबू– सुविख्यात किन्नर लेखक ने कई पुस्तकों की रचना की जिसके लिए कई प्रख्यात अवार्ड भी मिले जिसमें 'मार्जिनसड राइटर अवार्ड' , 'तमिलनाडु प्रोग्रेसिव राइटर अवार्ड' आदि प्रमुख हैं। 2019 में उन्होंने प्रथम फिल्म किन्नर फिल्म फेस्टिवल का आयोजन किया।

अमृता - भारत की पहली किन्नर जिनको HLFPPT में एडवो के सी ऑफिसर का पद मिला।

शबनम मौसी - भारत की पहली किन्नर जो मध्य प्रदेश की विधान सभा के लिए 1998 में निर्वाचित हुई तथा 2003 में एम.एल.ए. (विधायक) रही।

लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी–ये भारत से पहली किन्नर थीं जिन्होंने संयुक्त राष्ट्र में एशिया 2008 में भारत के किन्नर का प्रतिनिधित्व किया था।वे

हिज्र गुरु तथा उस समुदाय के उन्नमन के लिए सतत प्रयत्नशील हैं। वर्ष 2000 में उन्होंने अपने समुदाय के लिए ‘अस्तित्व ट्रस्ट’ का गठन किया। ‘किन्नर अखाड़े’ की शुरुआत की और 2018 में कुम्भ मेले में शाही स्नान में भाग लिया।

ए. रेधी– एशिया की पहली किन्नर है जिन्होंने किन्नर के जीवन पर पहली पुस्तक लिखी।

कलकी सुबामनियम– प्रथम किन्नर सहोदरी फाउंडेशन की संस्थापक है।

नर्तकी नटराज– प्रथम किन्नर जिन्हें संगीत नाटक अकादमी अवार्ड से सम्मानित किया गया।

के. प्रिथिका याशिनी– तमिलनाडु राज्य की पहली किन्नर एवं इंस्पेक्टर

रो जी वेंकटेशन– प्रथम किन्नर टी.वी. होस्ट

करपागा – प्रथम किन्नर महिला एक्ट्रेस

लक्की – प्रथम v6 टी वी न्यूज़ एंकर

मधु बाई किन्नर– प्रथम किन्नर मेयर रायगढ़ छतीसगढ़

श्री देवी– तमिलनाडु में जयललिता के विरूद्ध चुनाव लड़ा

डॉ. मानोबी बंधोपाद्याय– बंगाली साहित्य में प्रथम किन्नर पी.एच.डी. , पश्चिमी बंगाल में विवेकानंद सटोरबार्शिकी महिला विश्वविद्यालय की प्रिंसिपल।

ज्योति मंडन– प्रथम किन्नर जिसकी नियुक्ति पश्चिमी बंगाल में नार्थ दीनापुर जिले में इस्लामपुर लोक अदालत की जज के रूप में 2017 में हुई।

निष्ठा विखास– 'ब्यूटी क्वीन' 2017 का ताज प्रप्त करने वाली किन्नर है।

श्रुति – केरल में 2021 में भारत का पहली 'ब्यूटी किन्नर' बनने वाली प्रथम किन्नर है।

गंगा कुमारी– राजस्थान पुलिस में उनकीं नियुक्ति पहली किन्नर कांस्टेबल के रूप में हुई।

जिया दास– 2018 में प्रथम किन्नर ऑपरेशन थिएटर में टेक्निशियन के पद पर उनकी नियुक्ति हुई।

मोनीषा – केरल में राशनकार्ड मिली पहली किन्नर ।

रेंजू रंजिमार – केरल में ड्राइविंग लाइसेंस मिलनेवाली पहली किन्नर व्यक्ति ।

सूर्या और ईशान – भारत की पहली किन्नर दम्पतियाँ ।

इस प्रकार किन्नर समुदाय के अनेक संघर्षशील व्यक्ति भारत सरकार के पदों पर सुशोभित है और अपने समाज के प्रति जागरूकता का प्रचार – प्रसार कर रहे हैं । देश को अपनी सेवाएँ देने के साथ – साथ समाज को भी बदलने की महत्ती कार्य कर रहे हैं ।

1. सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान : थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , कानपुर , द्वितीय संस्करण , 2018

2. सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान : हम भी इंसान हैं , वाग्मय बुक्स , अलीगढ़ , प्रथम संस्करण , 2018

3. सं. पुरोबी ए. भंडारी : दास्तान – ए – किन्नर , विकास प्रकाशन , कानपुर , प्रथम संस्करण , 2018

4. सं. डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह , डॉ. रविकुमार गौड़ : थर्ड जेंडर की कहानियाँ , ए.बी.एस. पब्लिकेशन , वाराणासी , प्रथम संस्करण 2018

समीक्षा ग्रंथ

5. राकेश शंकर भारती : इस ज़िन्दगी के उस पार , अमन प्रकाशन , कानपुर , द्वितीय संस्करण 2021

समीक्षा ग्रंथ

1. डॉ. अनु पाण्डेय : समकालीन साहित्य में किन्नर विमर्श और अन्य संदर्भ , माया प्रकाशन , कानपुर , प्रथम संस्करण 2019

2. डॉ. अर्जुन चव्हण : विमर्श के विविध आयाम , वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली , प्रथम संस्करण 2008

3. सं. डॉ. आशीष कुमार 'दीपांकर' : भारतीय समाज में किन्नरों का यथार्थ , , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , कानपुर , प्रथम संस्करण 2018

4. सं. डॉ. इकरार अहमद : किन्नर – विमर्श साहित्य के आइने में , वाग्मय बुक्स , अलीगढ़ , प्रथम संस्करण 2017

5. सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान : थर्ड जेंडर कथा आलोचना , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , कानपुर प्रथम संस्करण 2017

6. सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान : थर्ड जेंडर – अतीत और वर्तमान भाग -2 (11 उपन्यासों पर केन्द्रित आलोचनात्मक ग्रंथ) विकास प्रकाशन , कानपुर , प्रथम संस्करण 2021

7. सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान : किन्नर कथा तीसरी दुनिया का सच , विकास प्रकाशन , कानपुर , प्रथम संस्करण 2019

8. सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान : थर्ड – जेंडर आत्मकथा और जीवन संघर्ष , विकास प्रकाशन , कानपुर , प्रथम संस्करण 2019

9. सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान : थर्ड – जेंडर और साहित्य , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , कानपुर प्रथम संस्करण 2018

10. सं. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान : थर्ड – जेंडर और ज़िन्दगी 50-50 , अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स , कानपुर प्रथम संस्करण 2018

11. गोपाल राय : हिंदी कहानी का इतिहास , राजकमल प्रकाशन , इलाहाबाद , प्रथम संस्करण 2008

12. ज्योति गौतम : भारतीय समाज में जेंडर संरचना , हिमांशु पब्लिकेशन , राजस्थान , प्रथम संस्करण 2017

13. डॉ. जयश्री टी. एस. : तीसरी दुनिया का यथार्थ , विकास प्रकाशन , कानपुर , प्रथम संस्करण 2019

14. डॉ. देवयानी महिडा : किन्नर साहित्य व्यथा , यातना और संघर्ष , रोशनी पब्लिकेशन , कानपुर प्रथम संस्करण 2019

15. सं. डॉ. दिलीप मेहरा : हिंदी साहित्य में किन्नर जीवन , वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली , प्रथम संस्करण 2019

16. सं. डॉ. दिलीप मेहरा : हिंदी कथा साहित्य में किन्नर समाज , माया प्रकाशन , कानपुर , प्रथम संस्करण 2018

17. नीरजा माधव : किन्नर नहीं हिजड़ा समुदाय (कुछ तथ्य , कुछ सत्य) , ए.बी.एस. पब्लिकेशन , वाराणासी , प्रथम संस्करण , 2019

18. पूनम सिंह : हिंदी साहित्य के नए आयाम , विनय प्रकाशन , कानपुर , संस्करण प्रथम 2019

19. सं. डॉ. भारती अग्रवाल : साहित्य और समाज में उभरता किन्नर विमर्श , नालंदा प्रकाशन , दिल्ली , प्रथम संस्करण 2019

20. सं. मिलन बिश्नोई : किन्नर – विमर्श साहित्य और समाज , विद्या प्रकाशन , कानपुर , प्रथम संस्करण 2018

21. रामडगे गंगाधर पिराजी : साहित्य एवं समाज में किन्नर जीवन , विद्या प्रकाशन कानपुर , प्रथम संस्करण 2019

22. डॉ. राजेन्द्र खैरनार : इक्कीसवीं सदी की हिंदी कहानियों में स्त्री – विमर्श और दलित – विमर्श , जगत भारती प्रकाशन , इलाहाबाद , पथम संस्करण 2016

23. सं. डॉ. राजेन्द्र कुमार सिंघवी : हिंदी आलोचना निकष एवं प्रतिमान , रजत प्रकाशन , नई दिल्ली , प्रथम संस्करण 2021

24. डॉ. विनय कुमार पाठक : किन्नर विमर्श दशा और दिशा , भावना प्रकाशन , दिल्ली , प्रथम संस्करण 2019

25. सं. डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह , रवि कुमार गौड़ : भारतीय साहित्य और समाज में तृतीय लिंगी विमर्श , अमन प्रकाशन , कानपुर , प्रथम संस्करण 2016

26. सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह : हिंदी उपन्यासों के आईने में थर्ड – जेंडर , अमन प्रकाशन , कानपुर प्रथम संस्करण 2017

27. सं. डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह , रवि कुमार गौड़ : विमर्श का तीसरा पक्ष , अनंग प्रकाशन , दिल्ली , प्रथम संस्करण 2016

28. सं. डॉ. शरद सिंह : थर्ड – जेंडर विमर्श , भारतीय पुस्तक परिषद् , नई दिल्ली , प्रथम संस्करण 2019

29. सं. डॉ. सुरेंदर वर्मा : हिंदी साहित्य में विविध विमर्श , मनीष पब्लिकेशन , दिल्ली , प्रथम संस्करण 2021

30. डॉ. होनगेकर , डॉ.आरिफ : 21 वीं सदी का हिंदी साहित्य नव विमर्श , ए.बी.एस. पब्लिकेशन , वाराणासी , प्रथम संस्करण 2018

31. सं. डॉ. हिंदूराव रामचंद्र धरपणकर : लिंग विद्यालय एवं समाज , विनय प्रकाशन कानपुर , प्रथम संस्करण 2017

मलयालम ग्रंथ

1. रश्मि जी , अनिल कुमार एस. : ट्रांसजेंडर , चिंता पब्लिकेशन , तिरुवनंतपुरम , प्रथम संस्करण 2016

2. विजयराज मल्लिका : मल्लिका वसंतम , ग्रीन बुक्स तृश्शुर , प्रथम संस्करण 2019

शब्दकोश

1. डॉ. उषा कुमारी विद्या वाचस्पति : भूमिका मिथक कोष भूमिका से , नेशनल पब्लिशिंग हाउस , चतुर्थ संस्करण 2004

2. कृष्ण कांत दीक्षित एवं सूर्य नारायण उपाध्याय : मानक हिंदी - हिंदी शब्दकोश नवीन संस्करण , कमल प्रकाशन , दिल्ली

3. नवल : नालंदा विशाल शब्द सागर

4. भारत सर्कार : अभिनव हिंदी कोष , केन्द्रीय हिंदी निदेशालय उच्चतर शिक्षा विभाग , मानव संसाधन मंत्रालय , दिल्ली , प्रथम संस्करण

5. डॉ. रामचंद्र वर्मा : मानक हिंदी कोष , हिंदी साहित्य सम्मलेन , प्रयाग सं. 1964

6. एस. के शर्मा : ऑक्सफोर्ड अंग्रेज़ी – हिंदी शब्दकोश

7. डॉ. हरदेव बाहरी : राजपाल हिंदी शब्दकोश , राजपाल एंड संस 1590 मदरसा रोड , दिल्ली संस्करण 2016

पत्र – पत्रिकाएँ

1. आर्यावर्त शोध विकास पत्रिका – दिसंबर 2019

2. अनुसंधान हिंदी त्रैमासिक , जनवरी – मार्च 2015

3. जनकृति किन्नर विशेषांक , सितंबर 2016

4. दृष्टिकोण - जनवरी – फरवरी 2021

5. नागफनी – जुलाई – सितंबर 2021

6. साहित्य वीथिका – दिसम्बर 2017

7. शब्दार्जन – जुलाई – सितंबर 2018

8. वाग्मय त्रैमासिक हिंदी पत्रिका – जुलाई – सितंबर 2016

e. पत्र – पत्रिकाएँ

1. अपनी माटी – सितंबर 2021

2. ई प्रदीप – जनवरी 2021

अंग्रेज़ी ग्रंथ

1. Dr. A.K. Uma – Perspective on Transgender Literature , Gourav books , Kanpur 2016

2. Editors : Dr. Mohd. Shamim & Dr. Noor Fatima : “ The Invisible Minority in Literature and Society – Haunting Tragedies , Vangmaya books , Aligarh 2016

3. Sulaiman Sulaikha : Transition from Homosociality Sub – Culture to Gay Politics in Malabar , LAMBERT Academic Publishing , Calicut 2015

साक्षात्कार

सिमरन के साथ

प्रश्न 1. आपका मूल नाम क्या है? और आप अपनी आपबीती बताइए।

उत्तर : मेरा मूल नाम जो मेरे नानाजी ने प्यार से रखा था शत्रोहन है , मेरे जीवन ऐसा तो बहुत कुछ घटा पर मैं संक्षिप्त मैं बताना चाहूंगी ,एक सामान्य लड़का या लड़की की तरह मेरा जीवन नहीं था शुरुआत में घर परिवार से बहुत ही प्यार मिला घर की पहली संतान थी इसलिए शायद वह प्यार मुझे अधिक मिला किंतु जैसे-जैसे मैं बड़ी होती गई और घर वालों को लगने लगा कि मैं अलग हूं उनकी सोच के विपरीत मैं लड़का नहीं हूं नहीं लड़की मेरे व्यवहार लड़कों से बिल्कुल विपरीत है और फिर धीरे धीरे उनका मेरे माता पिता का व्यवहार मेरे प्रति रुष्ट हो गया मानसिक रूप से प्रताड़ित करना या फिर शारीरिक रूप से कष्ट देना यह एक दिनचर्या हो गई घर में तो कष्ट से ही लेकिन बाहर की भी समाज में हमें रुखा ही व्यवहार मिलता था किन्नरों के जीवन में एक सामान्य बात होती है कि हमें अधिकतर बचपन में यौन शोषण से गुजरना पड़ता है कहीं ना कहीं हमारे रिश्तेदार या पड़ोसी पुरुष हमारा यौन शोषण करते हैं जब हमें सेक्स के बारे में पता भी नहीं होता हम अबोध होते हैं मेरे साथ भी यही सब हुआ जब मुझे पता नहीं था कि लिंग क्या होता है और सेक्स क्या होता है। कहीं न कहीं मैं भी अंदर से टूट चुकी थी क्योंकि मैं अपने घर में नहीं बता सकती कि मेरे साथ क्या हो रहा है अगर मैं बता भी देती तो मार भी मुझे खाने पड़ती। पाठशाला में विद्यार्थियों मेरे सहपाठियों का व्यवहार मेरे प्रति बहुत ही उपहास पूर्ण होता। वे मेरा मज़ाक उड़ाते और अपने समीप नहीं बैठने देते हैं मैं एक जुट की बोरी घर से लेके जाती और उसपे बैठती , आज जब मैं समाज सेवा के कार्य से जुड़ चुकी हूं तभी भी मेरे परिवार जन समाज के सामने मुझे स्वीकार नहीं करते। कहीं ना कहीं उन्हें यह अपमानजनक लगता है मुझे आश्चर्य होता है कि एक सफल होने के बाद

भी और एक अच्छा मुकाम पाने के बाद भी मेरे घरवाले परिवार जन मुझे अपनाते नहीं हैं।

2. किन्नर संस्कृति पर कुछ प्रकाश डालिए।

उत्तर : किन्नर संस्कृति अब पहले जैसे नहीं है। जिस प्रकार समय के साथ परिवर्तन होते हैं वैसे ही हमारी किन्नर संस्कृति मैं परिवर्तन हो रहे हैं और कुछ हद तक ये मलिन भी हो चुके हैं , पूर्व के समय में हमारे किन्नर बड़ी ही शिष्टाचार और सद्भावना का आचरण करते थे किंतु अब कुछ हद तक बदलाव है ,हमारे किन्नर समाज में गुरु शिष्य परंपरा अनिवार्य है। एक गुरु की ओर से अशिष्ट होने पर भी हम शिष्य कुछ बोल नहीं सकते ,किन्नर समाज में गुरु को सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया गया है ,हमारे समाज के कुछ प्रमुख देवता हैं जैसे अरावन ,देवी रेणुका जिन्हें दक्षिण भारत में यलम्मा देवी के नाम से जाना जाता है और बहुचरा देवी जिनकी पूजा भारतवर्ष के प्रत्येक किन्नर करते हैं ज़्यादातर किन्नर डेरे में रहना पसंद करते है और कुछ स्वंत्रत रहना पसंद करते है हमारे समाज मैं आज भी हर फैसले पंचायत करता है।

प्रश्न 3) आपकी शिक्षा की वर्तमान में क्या स्थिति है ?

उत्तर : जैसे जैसे आधुनिकता बढ़ रही है और हमारे समाज में बदलाव हो रहा है समय के साथ में किन्नर समाज भी शिक्षा के प्रति अब जागरूक हो रहा है लेकिन किन्नरों की शिक्षा की व्यवस्था अब भी पूर्ण रूप से संतोषजनक नहीं है किन्नर समाज शिक्षा की ओर अग्रसर हो इसलिए सरकार को उनको उत्साहित करने के साथ ,व्यवस्था मैं लचीलापन लाना होगा।

प्रश्न 4). आपका ही उपन्यास पढ़कर कैसे लगा ?

उत्तर : यह बहुत बढ़िया सवाल है। मोनिका दीदी जी ने मेरी ज़िन्दगी को आम पाठकों तक पहुँचाने का सफल कार्य किया है। मेरी ज़िन्दगी पढ़कर मुझे अच्छा लगा। यह एक सिमरन की बात नहीं है। हमारे समुदाय के अनेक सिमरन की बात है।

5.) आप की समस्याओं पर जो शोध कार्य हो रहे हैं उनसे आप क्या अपेक्षा रखती हों।

उत्तर : मुझे लगता है किन्नर समाज पर होने वाली समस्याओं पर जो शोध कार्य हो रहे हैं ,उनका समाज पर एक सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा ,मुझे ये अपेक्षा है कि कहीं न कहीं हमारे जीवन स्तर में सुधार होगा।

सूर्या के साथ

प्रश्न 1. सबसे पहले आप अपने परिवार के बारे में विस्तार से बताइए।

उत्तर: मैं केरल के तिरुवनंतपुरम शहर की रहने वाली हूँ। मेरा नाम सूर्या है जो कि गुरुओं द्वारा दिया गया मेरा नाम है , वैसे मेरा असली नाम विनोद है। मेरे परिवार में एक भाई और एक छोटी बहन है जो कि अब शादी शुदा हैं , माँ – बाप दोनों हैं।

मैंने वंझियुर सरकारी स्कूल में पढ़ाई – लिखाई पूरी की थी और मैं बहुत ही कम पढ़ी – लिखी हूँ। मैंने सिर्फ दसवीं तक की पढ़ाई की है। मेरी माँ तिरुवनंतपुरम मेडिकल कॉलेज में भोजन देनेवाली काम करती है। अब मैं भी शादी शुदा हूँ। मेरा पति का नाम है इशान।

प्रश्न 2. आप अपनी कुछ आप बीती बताइयें ?

उत्तर : मैं बहुत ही छोटी आयु की थी , जब मुझे एहसास हुआ कि मैं दूसरे बच्चों से बहुत अलग हूं। घर में मेरी माँ की कपड़ा पहनती थी , बाहर लड़कियों के साथ खेलती थीं। इसकी वजह से मेरे पापा और बड़े भाई ने मुझे बुरी तरह पीटाई की। मेरी कम उम्र में मुझे ही नहीं पता था कि लड़का क्या होती है ? , लड़की क्या होती है और किन्नर क्या होते हैं ? मेरे भाई अभी तब मुझसे बातचीत करने को तैयार नहीं है। कई रात में अकेली आँसू भरी आखों से सोती थी। एक दिन मेरी माँ घर पर नहीं थी उस दिन मैं हमेशा की तरह उनकी कपड़े पहन रखी। मेरी भाई ने यह देख लिया और घर से मारकर बाहर कर दिया।

प्रश्न 3. आपकी स्कूल की बातों को विशेषकर दोस्तों से या अध्यापकों से कुछ बुरा व्यवहार हुआ ?

उत्तर : मैं स्कूल जाती ज़रूरी थी , लेकिन न किसी के साथ बोलती थी , न किसी से बात करती थी , बस अकेली ही बैठी रहती थी और तो आधी छुट्टी में सभी बच्चे खेलते थे लेकिन मैं तब भी क्लास रूम में ही बैठी रहती थी। स्कूल में अन्य बच्चों से मुझे बलात्कार भी हुआ। अध्यापकों से कहने पर वे मुझे डांटते थे।

प्रश्न 4. एक किन्नर की मानसिक पीड़ा क्या होती है ?

उत्तर: वैसे तो सभी को अलग – अलग मानसिक परेशानियों से गुज़रना पड़ता है लेकिन जब बात आती है किन्नरों की तो आम इंसान सोच भी नहीं सकता कि वे कितनी मानसिक परेशानियों से जुज़रते हैं और उनकी एक प्यार भरी मुस्कान के पीछे कितना दर्द छुपा होता है। बचपन में पहले अपने परिवार और मित्रों में अपनी पहचान की तलाश करनी पड़ती है और ये भयावह सच जान लेना होता है कि मैं दूसरों से बहुत अलग हूँ , शुरू – शुरू में तो सच जान लेने के बाद भी सबके साथ ऐसे पेश आते हैं जैसे कि वह बिलकुल सही है और उन सब जैसे ही है , कुछ भी अलग नहीं। फिर वह जितना भी अपने आपको समझा ले या अपना दर्द छुपाने के कोशिश कर ले लेकिन फिर भी परिवार , मित्रों या फिर स्कूल में कोईं न कोई उसको ये एहसास करवा ही देता है कि तुम हम में से नहीं हो। कहने का मतलब जन्म से लेकर अंत तक सिर्फ परेशानियाँ और दर्द ही है हमारी ज़िन्दगी में। अगर कुछ नहीं है तो वह है इस दर्द को समझने वाला।

प्रश्न 5. क्या आपने कभी किसी से प्यार किया ?

उत्तर: अगर मैं किन्नर हूँ तो क्या हुआ। हूँ तो मैं भी इंसान ही और मेरे अंदर भी दिल है , कुछ भावनाएं। मैंने 2018 में इषान से शादी किया। बहुत खुशी के साथ आज भी हम एक साथ जी रहे हैं।

प्रश्न 6. अधिकांश किन्नर आत्महत्या क्यों करना चाहते हैं ?

उत्तर: मेरी सोच के हिसाब से आत्महत्या जैसा रंगीन कदम कोई तब उठाता है , जब उसको अपने आप से ही नफरत होने लगे या जब उसकी जीने की इच्छा खत्म हो चुकी हो या जब वह अपने आपको एक चलती फिरती लाश महसूस करने लगे और उसको लगने लगे कि अब मैं इस शरीर का बोझ नहीं उठा सकता , तब कहीं जाकर आत्महत्या जैसा कुकर्म करता है। मुझे लगता है कि किन्नरों की ज़िन्दगी में कहीं न कहीं कोई न कोई ऐसा समय ज़रूर आता है जब कोई किन्नर इस कदम को उठाता है और मैं आपको किन्नरों की ज़िन्दगी को बहुत करीब से दिखा और बता चुकी हूँ तो मुझे नहीं लगता कि आपको वह स्थिति बतानी पड़ेगी जिसके कारण अधिकांश किन्नर आत्महत्या का कदम उठाते हैं।

प्रश्न 7. किसी ने कहा कि केवल एक किन्नर ही किन्नर को समझ सकता है ऐसा क्यों ?

उत्तर: नहीं ऐसा कुछ नहीं है कोई भी अगर किन्नर से अपनेपन से पेश आए या उनको अपना समझकर उनके दिल को टटोले तो कोई भी किसी भी किन्नर की भावनाओं को समझ सकता है लेकिन यह बेदर्द समाज उनकी भावनाओं को समझने का प्रयास ही नहीं करता और न ही समझना चाहता है। सही बात है कि एक ही दूसरे किन्नर को समझ सकता है तो यह बात बिल्कुल सही है क्योंकि वे सब भी उस दौर से गुजर चुके होते हैं जिस दौर से आज युवा किन्नर गुजर रहा होता है।

प्रश्न 8. जब एक किन्नर समुदाय पर होने वाली दुर्दशा का अध्ययन करेगा तो वह संपूर्ण शोध यानी शोध होगा । इससे समुदाय के अंदर और समाज में क्या बदलाव आएगा ?

उत्तर: कहीं न कहीं मुझे ऐसा लगता है कि वाकई में किन्नर समाज पर एक शोध की जरूरत है ताकि उनकी असली दुर्दशा का पता चल सके कि उनको क्या - क्या कानूनी और मानसिक परेशानियां हैं , वैसे तो इस देश में किन्नरों के लिए कोई भी कानून बनाने से पहले उनकी स्थितियों को

बारीकी से देखा तक नहीं जाता। किन्नर तो इस समाज और देश में उस अनाथ बच्चे की तरह है जिसकी कोई मां नहीं है वह कितना भी रोए उसको कोई दूध पिलाने वाला नहीं उसको तो खुद ही अपने लिए अपने लिए दूध मांगना होगा या रो - रोकर मर जाना होगा । हमें समाज से सहानुभूति नहीं चाहिए बल्कि सम्मान चाहिए।

प्रश्न 9. किन्नरों की ख़राब स्थिति के लिए किसको जिम्मेदार माना जा सकता है और उसका कोई हाल है ?

उत्तर : किन्नरों की ख़राब स्थिति के लिए सबसे पहले हमारा पितृसत्तात्मक समाज है क्योंकि ये लोग कभी किन्नरों के साथ मित्रतापूर्ण व्यवहार करते ही नहीं। मुझे तो ऐसा लगता कहीं न कहीं ये किन्नरों को इंसान ही नहीं समझते। इनके उनके चेहरे की मुस्कान तो नज़र आती है लेकिन आंखों के सूख चुके आंसुओं का दर्द नहीं। ये लोग कुछ पैसे बधाई के रूप में देखकर ये सोच लेते हैं कि चलो शायद इन पैसों से ही इनका कल्याण हो जाएगा लेकिन इन लोगों को कौन समझाए कि सब कुछ पैसे ही नहीं होता। आप बधाई के अलावा उन्हें अपने अपनापन और प्यार भी दो , जिसके लिए वे बचपन से तरस रहे हैं और कुछ लोग तो उनको बधाई देते हुए चिढते हैं। अब इनको यह कौन समझाए कि आपके बच्चों के हर समय दुआ मांगने वाला यह फकीर इंसान जाए तो जाए कहां ?

दूसरा हमारी सरकार ने किन्नरों को हमेशा ही नजरअंदाज किया है और किसी भी कल्याणकारी सरकारी योजनाओं में किन्नरों के हित का न तो जिक्र किया जाता और ना ही ध्यान दिया जाता । बस अब हम इससे ज़्यादा क्या कहें और किसको दोष दें ? बाकी आप सब कुछ समझदार हो ।

हरिणी के साथ

प्रश्न 1. आप का मूल नाम क्या है ?

उत्तर: मेरा मूल नाम कुछ और है , मैं वह बताना नहीं चाहूंगी। पर किन्नर समाज में आने के बाद मुझे हरिणी नाम दिया गया है । इस तरह से आप मेरा नाम इसे ही मान सकते हैं।

प्रश्न 2. जीवन में कितना संघर्ष किया और यहां तक कैसे पहुंचे ?

उत्तर: मैं काफी कठिन परिस्थितियों से गुजरी हूं। जन्म के काफी समय बाद मुझे पता चला कि मैं किन्नर हूं । लड़कियों के बीच खेलने पर पिता और भी डांटते थे। यह कभी ना भूल गयी थी कि मैं केरल के पालककाड से हूं। एक दिन मेरे पिता और भाई ने रात को मुझे घर से निकाल दिया । ट्रेन पर एक किन्नर के साथ मुलाकात हुई और कर्नाटक आना पड़ा। वहां पर रेड लाइट एरिया में रही। जहां पर मेरा नाम हरिणी रखा गया।

प्रश्न 3. किन्नरों की दशा में कितना सुधार आया है ?

उत्तर: किन्नरों की दशा में अब काफी सुधार हुआ है लेकिन जो पॉलिसी बनी है उसे लागू कराने में लोग दिक्कत कर रहे हैं । यह पॉलिसी अधिकारियों , नेताओं और राजनीतिक पार्टियों के बीच फंसकर रह गई है। इसके लिए संघर्ष करना होगा। हम इसके लिए प्रयास कर रहे हैं। स्थिति में जितना सुधार होना चाहिए उतना नहीं हुआ है।

प्रश्न 4. किन्नरों के हितों के लिए काम करने में ट्रांसजेंडर बोर्ड कितना सक्रिय है ?

उत्तर: नाममात्र के काम हो रहे हैं । हमें पुलिस विभाग में भी नौकरी मिलनी चाहिए। किन्नरों के लिए भी आयोग का गठन हो । हमारे अधिकारों की रक्षा कौन करेगा ? हर सरकारी विभाग में किन्नरों के लिए अधिकार मिले। मुझे भीख मांगना , सेक्स वर्क करना ठीक नहीं लगता।

प्रश्न 5. आपकी समस्याओं पर जो शोध कार्य हो रहा है ,उनसे आप क्या अपेक्षा रहती है ?

उत्तर: देखिए मेरा तो मानना है कि यह सब केवल औपचारिकता मात्र हैं , क्योंकि 10-12 सालों से तो मैं भी देख रही हूं कि अखबारवाले , न्यूज़ चैनल वाले , यूट्यूबवाले आदि आते हैं और हमारे दर्द को उकेरकर चले जाते हैं। बाद में उन समस्याओं पर विचार तक भी करते हैं या नहीं कुछ पता ही नहीं है । अगर इन सभी से सुधार होता तो वह कब हो चुका होता। हमें तो लगता है कि ये सभी चीज़ें हैं जो हमारे दर्द को कहनेवाली हैं , उन्हें रिकॉर्ड करके शायद कचरे की टोकरी में फेंक दिया जाता है।

प्रश्न 6. समाज से आप कुछ कहना चाहती है ?

उत्तर: हां , मैं इस समाज से यह सवाल पूछती हूं कि किन्नर आता कहां से ? यह आप ही के समाज की देन है। ईश्वर ने तो हमें मानव समाज के अंदर जन्म दिया , पर आपने आपके समाज ने ही हमें घर की गंदगी के समान बाहर निकाल दिया। क्या घर में कोई दिव्यांग बच्चा पैदा होता है , तब क्या उसकी आप कोई परिवरिश नहीं करते हैं ? मैं यह कहना चाहती हूं कि हमारे लिए खड़ा होना शुरू कीजिए , क्योंकि हम लोग भी तो आप लोगों की गंदगी उठाकर हमारे अखाड़ों में उन्हें पाल रहे हैं । किन्नर के रूप में जन्म लेने वाले बच्चों को आप दर-दर की ठोकरें खाने के लिए घर से बाहर मत निकालिए , उन्हें स्वीकार्य कीजिए क्योंकि किन्नर आप पर बोझ नहीं बनेगा।